हिमज्योति

2020

भाकृअनुप
ICAR

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
Directorate of Coldwater Fisheries Research

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
भीमताल - 263136, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत

हिमज्योति
भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

हिमज्योति

2020

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
भीमताल - 263136, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत

भा.कृ.अनु.परि.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

हिन्दी अनुवाद एवं सम्पादन
श्री अमित कुमार जोशी

टंकण
वन्दना बिष्ट

संकल्पना, मार्गदर्शन एवं प्रकाशक
डॉ. देबाजीत सर्मा
निदेशक
भा.कृ.अनु.परि.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
भीमताल–263136, जिला–नैनीताल (उत्तराखण्ड)

रूपरेखा एवं मुद्रण
मैसर्स रॉयल ऑफसेट प्रिंटर्स, ए–89/1,
नारायणा इंडस्ट्रियल एरिया, फेस–1, नई दिल्ली–110028

अनुक्रमणिका

मत्स्य पालन एवं प्रबन्धन 1

1. शीतजल मात्स्यिकी पालनः स्थिति, तकनीकी, प्रसार एवं संरक्षण 3
देबाजीत सर्मा एवं जें के जेना

2. मछली पालन में संतुलित आहार प्रबंधन के तरीके एवं सुझाव 8
दिलीप कुमार सिंह, शिवाजी अरगड़े एवं गौर हरी पैलान

3. पर्वतीय मत्स्य पालन का इतिहास 11
कृपाल दत्त जोशी

4. शीतजल मात्स्यिकी द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों में जीविकोपार्जन की सम्भावनाऐं 15
ममता जोशी एवं एच.सी. बिष्ट

5. मणिपुर में देशी मछली की खेतीः एक जीत की स्थिति 18
खांडेम्बम विक्टोरिया चनु, सापाम जीतेन सिंह एवं डिम्पल ठाकुरिया

6. पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन 20
दिनेश मोहन, प्रीतम काला, बिपिन कुमार विश्वकर्मा एवं एन.एन. पांडेय

7. विकास खण्ड भीमताल में मत्स्य पालन की सम्भावनाऐं 23
रश्मि रावत

8. मत्स्य पालन के लिये पॉलीटैंक का निर्माण 25
आर. एस. पतियाल, प्रेम कुमार एवं सुमन्त मलिक

9. हिमालयी क्षेत्रों में मत्स्य पालन एक स्वरोजगार 27
एम. एस. अख्तर, सी. जी. अलैक्जेंडर एवं शिवा सी.

10. पर्वतीय क्षेत्रों में किसानों की आय वृद्धि के लिए आधुनिक मत्स्य पालन 29
नित्यानन्द पाण्डेय एवं बिपिन कुमार विश्वकर्मा

11. सर्कुलर हैचरी–कार्प मछलियों के बीज उत्पादन हेतु 31
अखिलेश कुमार यादव, शरद सिंह, अमित सिंह बिष्ट, संजय कुमार सिंह एंव ललित कुमार त्यागी

12. पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य संवर्धन 34
एस. अली एवं एन. एन. पान्डे

13. मत्स्य पालन में जल एवं मृदा का प्रबन्धन 36
आर.एस. पतियाल, एन.एन. पाण्डे, सुरेश चन्द्रा एवं बी.एस. कमलम्

14. उत्तराखण्ड में विदेशी ट्राउट मत्स्यिकी संसाधन एवं उनकी सम्भावनाऐं 41
दीप ज्योति बरूआ, रविन्द्रा पोस्ती, परवेज़ अहमद गनी एवं डी. सर्मा

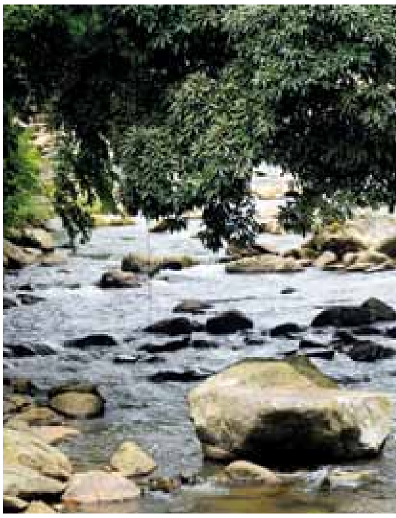

अनुक्रमणिका

15. रेनबो ट्राउट मछली का प्रजनन एवं बीज उत्पादन — 46
सुरेश चन्द्रा

पोषण — **53**

1. घर में मछलियों के लिए प्रतिजैविक पदार्थ युक्त भोजन बनाने की कार्यविधि — 55
सुमन्त कुमार मल्लिक, नीतू शाही, शिवम सिंह, आर.एस. पतियाल, सुरेश चंद्रा एवं कृष्णा काला

रोग — **57**

1. फिशमिंट (मत्स्य पुदीना): रोगाणुरोधी और स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाले गुण — 59
खांडेम्बम विक्टोरिया चानु एवं डिम्पल ठाकुरिया

2. मात्स्यिकी में एंटीबायोटिक्स माइक्रोबियलः भविष्य के लिए एक चुनौती — 61
विकास साहू, एस. एम. श्रीवास्तव, चन्द्रभूषण कुमार, आनुतोष पारिया एवं गौरव राठौर

संरक्षण — **65**

1. अण्डजनन शाला (हैचरी) में सुनहरी महाशीर, टौर प्युटिटोरा के बीज उत्पादन का प्रबन्धन — 67
देबाजीत सर्मा एवं एम. एस. अख्तर

2. उत्तराखण्ड के पर्वतीय मोटर मार्गो से लुप्त होते मछली–भात के ठिकाने — 72
बिपिन कुमार विश्वकर्मा, प्रीतम काला, दिनेश मोहन, नित्यानंद पाण्डेय एवं अजय थापा

3. शीतजल मात्स्यिकी द्वारा जीविकोपार्जन एवं महिलाओं की सहभागिता — 74
ब्रजेश चंद्र त्यागी, अमित कुमार जोशी एवं आर. के. आर्या

4. रूद्रप्रयाग के तालः इकोटूरिज्म संभावना — 78
प्रीतम काला, रविन्द्र पोस्ती, दिनेश मोहन एवं बिपिन कुमार विश्वकर्मा

5. मत्स्य पालन ग्रामीण स्वरोजगार एवं आजीविका का एक उत्तम साधन — 81
रमेश सिंह चलाल, आकांक्षा खाती एवं बिपिन कुमार विश्वकर्मा

प्रसंस्करण — **87**

1. मत्स्य उत्पादन का प्रसंस्करण एवं संरक्षण — 89
राजीव कपिला

अनुक्रमणिका

अन्य 91

1. कम्प्यूटर पर टाइप करने का सर्वोतम विकल्पः इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड 93
भूपेन्द्र कुमार, अमित कुमार जोशी एवं अमित कुमार सक्सेना

2. फ्रांस में एक्वापोनिक्स फार्मिंग की प्रणाली 98
सौम्या पांडेय एवं प्रीतम काला

3. पूर्वोत्तर क्षेत्र के दूरस्थ पहाड़ों में जीवन जीने का तरीकाः एक नया अनुभव 103
दीपज्योति बरूवा एवं पार्थ दास

4. सफलता की कहानी 107
कुँवर सिंह बगड़वाल

5. सालमन मछलीः वास्तविक तथा कलाकृतियों में 109
डॉ. रमेश सोमवंशी

6. बायोटोप एक्वेरियम में सजोएं प्रकृति की सुंदरता 118
एस. सी. एस. जैदी

7. जागेश्वर मंदिर समूह एवं संग्रहालय 120
मनोज कुमार जोशी

कविता / कहानी 123

1. कविता–मेरा लक्ष्य 123
हर्षिता बेलवाल

2. हर जर्रा सांस लेता है, हर जर्रा कुछ कहता है 123
हर्षिता बेलवाल

3. क्या तुम्हारा मन नहीं करता 124
सुभाष चंदर

4. कृषि की शान : किसान 125
कृष्णा काला

5. हास्य कहानी 126
किसना दुबे ने कुश्ती लड़ी

6. झरना, ताल और हेलीकॉप्टर से दृश्य 128
हेमन्त बिष्ट

7. ईको, झारो, भाँचो.....यानी हमारा दिल फ़रेब बचपन 131
राजीव लोचन साह

संपादकीय

पत्रिका के इस अंक को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अत्यन्त आनन्द की अनुभूति हो रही है। प्रस्तुत अंक को रोचक वैज्ञानिक व सामान्य लेखों, कविताओं आदि से सुसज्जित करने का भरसक प्रयास किया गया है जिससे इसकी उपयोगिता में वृद्धि हो सके। पत्रिका सामान्य व्यक्ति के लिए भी रूचिकर हो सके इसके लिए लिए इस अंक में विभिन्न विषयों जैसे मत्स्य रोग, जल प्रदूषण, कहानी/व्यंग्य/संस्मरण आदि लेखों को भी सम्मिलित किया गया है।

पत्रिका प्रकाशन में प्रेरणा स्त्रोत संस्थान के निदेशक डा. डी. सर्मा का हम हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं जिनके कुशल मार्गदर्शन व सतत् सहयोग से यह कार्य सम्भव हो सका। हम इस संस्थान व अन्य संस्थानों के उन सभी लेखकों, रचनाकारों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं जिन्होंने अपने प्रासंगिक लेखों द्वारा पत्रिका में अपना योगदान दिया। संस्थान में राजभाषा नीति के प्रभावी कार्यान्वयन व हिन्दी के प्रोत्साहन हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद मुख्यालय, नई दिल्ली में निदेशक (राजभाषा) सीमा चोपड़ा हमें समय–समय पर उचित मार्गदर्शन देते रहीं हैं, जिसके लिए हम उनका हृदय से आभार व्यक्त करते है।

पत्रिका में शामिल सभी शोध पत्रों में संस्थान के उन सभी वैज्ञानिकों का विशेष योगदान उल्लेखनीय है जिनके सहयोग से 'हिमज्योति' का प्रकाशन सम्भव हुआ है। हम उनके प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं और उनसे अनुरोध करते हैं कि वे अपनी शोध संबंधी जानकारी को सरल व सहज हिन्दी भाषा में व्यक्त करने का अपना यह प्रयास जारी रखें। संपादन के लिए विद्वान पाठकों के सुझाव/प्रतिक्रियाएं प्रेरणास्त्रोत व मार्गदर्शन का कार्य करेंगे, ऐसी आशा है।

अमित कुमार जोशी
(सम्पादक)

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
ICAR-Directorate of Coldwater Fisheries Research
अनुसंधान भवन, औद्योगिक क्षेत्र, भीमताल–263 136, नैनीताल (उत्तराखण्ड)
Anusandhan Bhawan, Industrial Area, Bhimtal-263 136, Nainital (Uttarakhand)
An ISO 9001 : 2008 Certified

निदेशक की कलम से

प्राचीनकाल से ही हिन्दी हमारे देश की सभ्यता व संस्कृति की परिचायक रही है। जनमानस की भाषा के रूप में लोकप्रिय हिन्दी आज हमारे देश में अभिव्यक्ति का सबसे प्रचलित माध्यम है। मात्स्यिकी विकास के नूतन अनुसंधानों के निष्कर्ष किसान व जनसाधारण तक हिन्दी में पहुँचाना हमारा प्रमुख कर्तव्य है। आज सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से जिस त्वरित गति से सूचना–सृजन हो रहा है और भारतीय कृषि के वैश्वीकरण से जो चुनौतियाँ मिल रही हैं, उनसे निपटने के लिए हमें हिन्दी को और सक्षम, सरल व गतिमान बनाना होगा। शी.ज.मा.अनु. केन्द्र ठन्डे पानी से सम्बन्धित मात्स्यिकी अनुसंधान के क्षेत्र में एक राष्ट्रव्यापी शीर्ष संगठन हैं, जो कि देश में शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान और उसके प्रचार प्रसार को नया रूप देने में लगा हुआ है। शी.मा.अनु. निदेशालय राजभाषा हिन्दी के प्रयोग एवं वैज्ञानिको द्वारा अपने अनुसंधान लेखों को हिन्दी में लिखने के प्रयास हेतु विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी वार्षिक पत्रिका 'हिमज्योति' का प्रकाशन करने जा रहा है। इस पत्रिका के पिछले अंक अत्यन्त सफल रहे हैं जिन्हे इस पत्रिका के पाठकों ने बहुत सराहा है।

एक ओर जहां इस पत्रिका के माध्यम से वैज्ञानिकों, शोधार्थियों के शोध से सम्बन्धित महत्वपूर्ण निष्कर्षों, सफलता की विकास यात्राओं को प्रस्तुत करने के साथ–साथ हिन्दी में रूचि रखने वाले लेखकों की रचनाओं को भी सम्मिलित किया गया है वहीं दूसरी ओर इसके माध्यम से सरल हिन्दी भाषा में अपने शोध पत्रों की रचना को प्रकाशित कर आम जनता को उससे लाभान्वित करना प्रमुख उद्देश्य रहा है। इस प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक लेख, सफलता की कहानियां, कविताऐं आदि को शामिल किया गया है।

पत्रिका के प्रकाशन हेतु राजभाषा समिति, संपादक और रचनाकार बधाई के पात्र है। मैं आशा करता हूँ ''हिमज्योति'' जैसे सार्थक प्रयासों के माध्यम से हमारे अंर्तमन में राजभाषा में अधिक से अधिक कार्य करने की प्रेरणा जागृत होगी जो उत्तरोत्तर राजभाषा हिन्दी के विकास के लिए अति आवश्यक है।

शुभकामनाओं सहित !

देबाजीत सर्मा
निदेशक

मत्स्य पालन एवं प्रबन्धन

शीतजल मात्स्यिकी पालन: स्थिति, तकनीकी, प्रसार एवं संरक्षण

देबाजीत सर्मा एवं जें के जेना
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल
भा.कृ.अनु.प., कृषि अनुसंधान भवन, नई दिल्ली

पृष्ठभूमि

हिमालय पश्चिम में नंगा पर्वत (8126 मीटर) से पश्चिम में पूर्व की ओर लगभग 2500 किमी. क्षेत्र तक फैला है और पूर्व में नमचा बरवा (7756 मीटर) माउंट एवरेस्ट (8848 मीटर) में अपने उच्चतम बिंदु तक फैला है। यह पर्वत प्रणाली पश्चिम में हिंदू कुश और काराकोरम की पहाड़ी से तथा उत्तर में तिब्बत के उच्च पठार से लगती हैं। दक्षिण से उत्तर की चौड़ाई लगभग 200 और 400 किमी. के बीच है। हिमालय का फैलाव 594,400 वर्ग किमी. तक है। दक्षिण से उत्तर तक हिमालय अलग–अलग चौड़ाई के चार समानांतर और अनुदैर्ध्य पर्वत बेल्ट में विभाजित है। जिनमें से प्रत्येक में अलग–अलग प्राकृतिक–भौतिक विषेशताएं हैं और इसका अपना भूवैज्ञानिक इतिहास है। दक्षिण से उत्तर तक के इन चार प्रभागों को सिवालिक लेसर हिमालय, ग्रेटर हिमालय और ट्रांस हिमालय के रूप में जाना जाता है। हिमालय क्षेत्र की 19 प्रमुख नदियां बहती हैं जिनमें से सिंधु और ब्रह्मपुत्र सबसे लंबी हैं। प्रत्येक में लगभग 160,000 वर्ग किमी. के पर्वतीय जलस्त्रोत है। षेश 17 नदियों में से पांच सिंधु प्रणाली की हैं जिनमें से व्यास और सतलुज का कुल जलग्रहण क्षेत्र 80,000 वर्ग कि.मी. है। नौ गंगा, यमुना, राम गंगा, काली, शारदा, करनाली, राप्ती, गंडक, भागमती, कोसी, गंगा प्रणाली से संबंधित है। लगभग 150,000 वर्ग कि. मी. की निकासी और तीन (टीस्टा, रैडक, मानस, ब्रह्मपुत्र प्रणाली से संबंधित हैं, जो एक और 110,000 वर्ग कि.मी. की दूरी पर है। इनमें से अधिकांश नदियाँ तब तक गहरी घाटियों में बहती हैं जब तक कि वे पहाड़ों से बाहर नहीं निकलती। घाटियों के गहरीकरण और हिमालय की ऊंचाई एक साथ हुई है जिसके परिणामस्वरूप पूरी तरह से विकसित नदी प्रणालियों के साथ पर्वत श्रंखलाओं का निर्माण हुआ।

प्रजातियां

हिमालय की धाराओं में मछली की प्रजातियों का वितरण प्रवाह दर, आधार (सब्सट्रेटम) की प्रकृति, पानी के तापमान और भोजन की उपल. ब्धता पर निर्भर करता है। प्रचण्ड बहाव वाली धाराओं में सहगल ने (1988) प्रमुख मत्स्य प्रजातियों और जल सर्वेक्षण सम्बन्धी विषेशताओं के आधार पर कई क्षेत्रों की पहचान की है–

हेडवाटर जोन रिहॅफिलिक प्रजाति की लोचेज और कैटफिश (नोमाचे. इलस ग्रैसिलिस एन. स्टोलिकजेका और ग्लाइपोस्टर्नम रेटिकुलम प्रजा. तिया पायी जाती हैं।

1. बड़ी धारा वाला क्षेत्र, इसमें नदियों की अनेक मुख्य जलधाराऐं सम्मिलित होती हैं तथा डिप्टीकस मैक्यूलेटस और निमाचिलस प्रजातियों का वास होता है।
2. बड़ी धारावाला क्षेत्र, इसमें नदियों की अनेक मुख्य जल धारा ऐं सम्मिलित होतीहै तथा इनमे स्नोट्राउट, शाइजोथोरैक्थिज एसोसाइनस, एस. प्रोजेस्टस, शाइजोथोरैक्स रिचार्डसोनाई और शाइजोगोप्सीज स्टॉलिक्जेका की रियोफिलिक प्रजातियां पायी जाती हैं, तथा इनमें डिप्टीकस मैक्यूलेटस और निमाचिलस जैसी प्रजातियों का भी वास होता है।
3. बड़ी धाराओं के मध्यवर्ती क्षेत्रों में शाइजोथोरैक्स लॉन्गिपिनस, एस. प्लैनिफ्रांस और एस. माइक्रोपोगोन निर्बाध रूप से बार–2 देखे जा सकते हैं। इस क्षेत्र को तेजी से गारा गोटायला, क्रोसोचिलस डाइप्टोचिलस, लेबियोडेरो एवं लेबियोडायोचिलस द्वारा कब्जा लिया जाता है।
4. नदियों के कटाव द्वारा निर्मित भू.भाग में प्राय: अत्यधिक ठंड और तापमान को सहन करने वाली प्रजातियों का वास होता है जैसे–बेरिलियस प्रजाति, टौर, कैटफिश, होमालोप्टेरीड, होमालोप्टेरा प्रजाति तथा स्नेकहैड (चन्नाप्रजाति) पायी जाती है।

रेन्बो ट्राउट मत्स्य पालन

भारतीय उप महाद्वीप में शीतजल मात्स्यिकी सामान्यतः उत्तर में बृहद हिमालय, हिमालय जल क्षेत्र तथा दक्षिणी पठार (पश्चिमी घाट) के दक्षिणी ढलान वाले जल स्त्रोतों में बहुतायत से पायी जाती है। यद्यपि शीतजल मत्स्य शब्द का संबंध साल्मोनिडी की मछलियों एवं जल पारिस्थितिकी से है जो ट्राउट मछलियों के बेहतर जीवन हेतु उच्च आक्सीजन व तापक्रम का स्तर बनाए रखती है। प्रायः 20 डिग्री से.ग्रे. से कम तापक्रम वाली नदियों, झीलों व अन्य जल स्त्रोतों में रहने वाली महाशीर, स्नो ट्राउट तथा अन्य सामान्य वर्ग की मछलियां भी इस वर्ग के अन्तर्गत आती है। विभिन्न प्रकार के भौतिक रासाय. निक, भूरासायनिक एवं जैविकी तत्व जैसे–जल का तापक्रम, अवमुक्त आक्सीजन, जल वेग, गदलापन, आधार तत्व, पोषण स्तर, आहार उपलब्धता आदि शीतजल की विभिन्न मत्स्य प्रजातियों के वितरण व प्रचुरता को प्रभावित करते है। भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित विभिन्न शीतजल स्त्रोतों में अनोखी प्रकार की मछलियां पायी जाती हैं जिनमें 258 मत्स्य प्रजातियां जोकि 76 वर्ष से सम्बन्धित है सम्पूर्ण हिमालयी व दक्षिणी पठारी क्षेत्रों में फैलीहै। मुख्यतः स्नो ट्राउट, महाशीर, माइनर कार्प, बेरिलियस, मिन्नउ, कैट फिश तथा लोचेस आदि देशी प्रजाति की तथा ट्राउट व चाइनीज कार्प विदेशी प्रजाति के अन्तर्गत आती है। यद्यपि उत्तर पश्चिम से उत्तर–पूर्व तक फैले हुए विशाल हिमालयी क्षेत्रों में अन्य प्रकार के असंख्य प्राकृतिक तथा मानव निर्मित जल संसाधनों का भण्डार है।

रेन्बो ट्राउट पर्वतीय क्षेत्रों में पाली जाने वाली विदेशी प्रजाति की मछली है। यह मत्स्य प्रजाति उत्तरी अमेरिका के प्रशान्त महासागर वाले तटीय क्षेत्रों की मूलवासी है, जिसको 20 वीं सदी के प्रारम्भ में अग्रेजों द्वारा भारत में लाकर मुख्यतः क्रीडा मात्स्यिकी तथा मनोरंजन के लिए उत्तर भारत के हिमालय क्षेत्र एवं दक्षिण भारत के कुछ पर्वतीय क्षेत्रों में स्थापित किया गया था। इस मछली का पालन यूरोप के देशों में बहुतायत से किया जाता है। भारत में इस मछली के पालन की शुरूआत 20 वीं सदी के 60 वें दशक से हुई है। सर्वप्रथम रेन्बो ट्राउट मछली का पालन जम्मू–कश्मीर एवं हिमा. चलप्रदेश के ठण्डी जलवायु वाले क्षेत्रों मे हुआ, तदोपरान्त् यह प्रजाति अधिक ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अधिक आमदनी परक जल कृषि की मुख्य प्रजाति के रूप में प्रचलित हो चुकी है। आधुनिक मत्स्य संवर्धन की विधाओं में रेनबो ट्राउट पालन पर्वतीय क्षेत्र के किसानों के लिए आमदनी का एक अच्छा साधन होते हुए जीविजोपार्जन का एक मुख्य आधार बनता जा रहा है। लगभग 30 वर्ग मी0 के तालाब से 1.27 लाख रूपये की सालाना आमदनी के साथ पर्वतीय क्षेत्रों के मत्स्य पालको का यह एक मुख्य आकर्षण है। पर्वतीय क्षेत्र के मत्स्य पालकों की रूचि एवं ट्राउट पालन की उत्सुकता के फलस्वरूप पिछले एक दसक में हमारे देश का ट्राउट उत्पादन 147 टन से बढ़कर 1500 टन तक पहुँच गया है जिसमें मुख्य रूप से जम्मू–कश्मीर हिमाचल प्रदेश एवं सिक्किम राज्य की भागीदारी रही है। वर्तमान में इस मछली की माँग को देखते हुए हिमालय के इन तीन राज्यों के साथ–साथ उत्तर. ाखण्ड़ एवं अरूणाचल प्रदेश में भी इस मछली के उत्पादन की कई–गुना संभावनाएं हैं।

रेन्बो ट्राउट मछली (आन्कोरिन्कस मायकिस) साल्मोनिड समूह की एक मांसाहारी प्रजाति है, जो कि इन्द्र धनुशीय रंगो के कारण देखने में अत्यन्त आकर्शक, उच्चकोटि की प्रो. टीन एवं ओमेगा–3 तथा ओमेगा–6 जैसे अति उपयोगी वसीय अम्लों की प्रचुरता होते हुए बहुत ही पोशक तथा खनिज तत्वों की भरपूर मात्रा के साथ अत्यन्त स्वादिष्ट मछली है। मध्यम आकार के शल्को से ढके सप्तरंगी धारियों एवं धब्बो से युक्त आकर्षक शरीर इस प्रजाति की विशेष पहचान है जोकि इस समूह की सालमन एवं चार जैसी प्रजातियों से पहचानने में सहायक हैं। लम्बाई युक्त दबी हुई षारीरिक बनावट के साथ इस मछली की रीढ़ में 60–66 कशेरूकाएं, 3–4 कॉटे त. था 10–12 धारीओं युक्त अधर पंख, 3–4 कांटे तथा 8–12 धारीओं युक्त गुदा पंख, 19 सयुक्त धारीओं युक्त पुच्छ पख, कुल्हे पर मॉसल पख तथा इन्द्र धनुशीय रंगीन शरीर इस मछली की पहचान के अन्य लक्षण हैं। लगभग 1600 मी0 से अधिक ऊँचाई के पर्वतीय क्षेत्रों में इस मछली का पालन संभव है। जिन क्षेत्रों में ठण्डा, अधिक घुलित आक्सीजन वाला, शुद्व एवं नि. र्मल बहता हुआ पानी भरपूर मात्रा में उपलब्ध है, ऐसे क्षेत्रों में ट्राउट मछली पालन के तालाब बनाये जा सकते हैं। हिमाच्छादित क्षेत्रों से पिघले पाले की जल धाराएं तथा नदियाँ इस प्रकार के जल का मुख्य स्रोत है। इस प्रकार का जल प्रदुशणर हित, प्रचुर ऑक्सीजन युक्त (7 मि0 ग्रा0/

लीo से अधिक) तथा 0–20 डिग्री सेo ग्रेo तापक्रम वाला रहता है। जोकि ट्राउट संवर्धन एवं प्रजनन के लिए उपयुक्त है। अच्छी बढ़वार के लिए जल का तापक्रम 13–18 डिग्री सेo ग्रेo तथा प्रजनन एवं हैचरी उत्पादन के लिए 9–14 डिग्री सेo ग्रेo तापक्रम अच्छा रहता है। उपयुक्त जल की पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता के साथ–साथ ट्राउट पालन के स्थान चुनाव हेतु आवागमन की सुविधा, बीज एवं आहार की प्राप्ति तथा बाजार व्यवस्था भी महत्वपूर्ण है।

रेन्बो ट्राउट पालन के मापदण्ड

शीतजल मत्स्य पालन हेतु कम तापक्रम का शुद्ध, प्रदूषण रहित बहता हुआ पानी अत्यन्त आवश्यक है। लगभग 1 टन ट्राउट उत्पादन के लिए 300–600 लीo प्रति मिनट बहते हुए पानी की आवश्यकता रहती है। पानी का तापक्रम 0 से 20 डिग्री सेoग्रेo उपयुक्त रहता है। पानी का 13–18 डिग्री सेoग्रेo तापक्रम ट्राउट की बढ़वार के लिए उत्तम होता है अतः इस तापक्रम का पानी जितने अधिक समय तक उपलब्ध रहता है उतना ही उत्पादन अधिक तथा मछली स्वस्थ्य रहती है। पानी में घुली हुई सल्ट मिट्टी या कार्बनिक पदार्थों का रहना अवांछनीय है। ट्राउट मछली पालन की सफलता के लिए मूलभूत आवश्यकताओं की जानकारी आवश्यक है। एक या दो रेसवे में छोटे स्तर पर या फिर बड़े स्तर पर ट्राउट पालन करने के लिए इस महत्वपूर्ण बिंन्दुओ की जानकारी आवश्यक होती है, जिनमें पानी में पर्याप्त घुलित ऑक्सीजन (7 मिoग्राo/लीo से अधिक) रहना आवश्यक है। अधिक अम्लीय या क्षारीय पानी भी उपयुक्त नही है, अतः पानी का पीo एचo 6.8–8 के मध्य ठीक रहता है। पानी की उपल. ब्धता के अनुसार ही ट्राउट प्रक्षेत्र का आंकलन किया जा सकता है या उत्पादन लक्ष्य के अनुसार आवश्यक पानी की व्यवस्था अति आवष्यक है।

ट्राउट पालन हेतु उचित जलीय गुणवत्ता

जलीय गुणवत्ता	परिमाप
तापक्रम	< 18^0 सेo ग्रेo
घुलित ऑक्सीजन	> 7 मिग्राo/लीo
पारदर्शिता	1.5–1.8 मीo
कार्बन डाईऑक्साइड	< 1.5 मिग्राo/लीo
पीo एचo	6.5–8
घुलितठोस पदार्थ	< 10 मिग्राo/लीo
क्षारीयता	50–150 मिग्राo/लीo
अमोनिया	<0.05 मिग्राo/लीo
नाइट्रेट	< 0.05 मिग्राo/लीo
फास्फेट	< 0.03 मिग्राo/लीo

सुनहरीमहाशीर

सुनहरी महाशीर जिसे वैज्ञानिक रूप से टौरप्युटिटौरा (Tor putitora) के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है यह एक बड़ी साइप्रिनिड (Cyprinid) है। ये दक्षिण पूर्वी एशिया के जंगलों की ऊष्ण कटिबन्धीय नदियों से लेकर हिमालय की भीमताल जल वाली नदियों, एशिया की तेज बहाव वाले पुरातन व स्वच्छ जल स्त्रोत्रों में वास करती है। अपने सजावटी सौन्दर्य संघर्ष कौशल व बेहतर स्वाद के लिए इसकी अत्यधिक माँग है। भारतीय उपमहाद्वीप में सुनहरी महाशीर भारतीय जल प्रणाली की राजाके रूप में वर्णित है, जिसका विस्तार प्रायद्वीपीय भारतीय नदियों के निचले क्षेत्रों तक विस्तृत है। टौर प्युटिटौरा हिमालय क्षेत्र की बहु मूल्यवान देशी मछली के रूप में स्वीकार की जाती है। मध्य हिमालय क्षेत्र की अधिकांश नदियों, धाराओं सहित आसाम, जम्मू व कश्मीर, सिक्किम, अफगानिस्तान, बंग्लादेश, चीन, बर्मा (मयन्मार), था. इलैंड, कम्बोडिया, लाओस, नेपाल, पाकिस्तान, वियतनाम, इन्डोनैंशिया एवंमलेशिया से टौर की लगभग 20 विभिन्न प्रजातियों का पता लगा है। महाशीर हिमालयी देशों में कृषिसहित मात्स्यिकी विकास के लिए एक सम्भावित मत्स्य प्रजाति है। प्राकतिक जलस्त्रोतों में इस मछली की लम्बाई में 9 मीटर और भार में 54 किलोग्राम तक की वृद्वि देखी गई है। वर्तमान में इस आकार प्रकार की मछली यदा–कदा ही दिखाई देती है। महाशीर का अर्थ है ''भारत में बडें मुखवाला''। इसका उपयुक्त नाम है लम्बी पतले आकार वाली मछली है, जिसे ताजे पानी कीं सभी शिकारी मछलियों के प्रबलतम लडाकू मछली के रूप में माना जाता है। भारतीय नदियों की र्निविवाद राजा महाशीर है। प्रचंड एवं तेज बहाव वाले क्षेत्र इसके आवास स्थल है इसलिए यह मछली एक कुशल तैराक है। यह मछली विश्व में कार्प परिवार की सबसे बडी सदस्य है। यह मछली प्रतिकूल धारा में 20–25 वर्ष की आयु तक जिन्दा रहती है। स्थानीय शब्दों में महाशीर शब्द का अर्थ बड़ा मुँह है जोकि कार्प से निकट सम्बन्धित है। ताजे पानी की शिकारी मछलियों में इसको सबसे शक्तिशली मछली के रूप मे जाना

जाता है। इसका शरीर लम्बा और थूथन नुकीली होती है। जबड़े समान आकार के होते है। मैक्सीलैरी की अपेक्षा रोस्ट्रल स्पर्शक छोटे होते है। यह एक अत्यधिक नखरे बाज और मूडी मछली है। इसके शरीर का रंग सुनहरा, पृष्ठीय हिस्सा भूरा तथा पंख लाल पीले रंग के होते है। इसके आवास स्थल उच्च आक्सीजनयुक्त पानी में स्थित चट्टानों के किनारे होते है। हिमालय से निकलने वाली अनेक नदियों में यह महाशीर पायी जाती है। बहुतयात में उपलब्धता के कारण इसका बहुत आर्थिक महत्व है। महाशीर की विभिन्न प्रजातियों के उष्णकटिबन्धीय क्षेत्र है, जहॉ गर्मियों में तापमान 35 तथा उप हिमालय क्षेत्रों में जल का तापमान 6 से.ग्रे तक चला जाता है। इसी प्रकार मुश्किल से कुछ मीटर की दूरी पर समुद्र स्तर से ऊपर 200 मीटर की उँचाई पर पायी जा सकती है। विभिन्न प्रकार के पर्यावरण और भोजन के अनुकूलन यह मछली असाधारण हैं।

एक समय में इनकी बहुतायत के बावजूद भी प्राकतिक जल स्त्रोतों में महाशीर के आकार और संख्या में गिरावट आई है जिसमें इसके विलुप्त होने के गंभीर खतरे पैदा हो गए है। अवक्रमित जल पर्यावरण तथा नगरीकरण के साथ–साथ अत्यधिक मत्स्य संदोहन मुख्य रूप से मछली पकडने के अवैध तरीकों जैसे: विघुत करंट, विषैले रसायन, डाइनामाइट आदि के प्रयोग द्वारा पारिथितिकी में जैविकी परिवर्तन के कारण प्राकतिक जल स्त्रोतों में इसकी संख्या में गिरावट आई है, जिस कारण निकट भविष्य में यह संकटग्रस्त हो सकतीहै। कैप्टिव ब्री. डिंग तथा संवर्धन तकनीक, मत्स्य संरक्षण व मत्स्य उत्पादन को बढावा देने के साधन हैं। अनेक वर्षों के अध्ययन के पश्चात टौर प्युटिटौरा की प्रजनन तकनीकी का विकास भा.कृ.अनु.परि.–डी.सी. एफ.आर. में किया गया है प्रजनन तकनीकी की सफलता से महाषीर के बीजों की उपलब्धता में वृद्वि हुई हैं तथा प्राकतिक जल स्त्रोतों में पुन. संचयन के द्वारा इनकी संख्या–वृद्धि में मदद मिली है। संवर्धन तकनीकियों के विकास से इसके वाणिज्यिक उत्पादन को बढ़ावा मिलेगा जो प्राकृतिक जल स्त्रोतों में मात्स्यिक दबाव को कम करेगा तथा अंततः प्रकति में इसकी पैदावार के संरक्षण और रख रखाव में सहायक सिद्व होगा साथ ही यह कुल मत्स्य उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ पर्यटन उघोग के विकास एवं वृद्धि में भी मददगा रहेगा।

महाशीर का संवर्धन (रैचिंग)

रैचिंग अर्थात् संवर्धन को ऐसी मत्स्य–पालन प्रणली के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें तरूण महाशीरों को पानी में असुरक्षित भोजन पर छोड़ दिया जाता है तथा जहां उसका आकार–प्रकार बाजार में बेचने योग्य हो जाता है। इस प्रकार रैचिंग मछलियों के पुनः प्रसार की प्रभावपूर्ण विधि है। रैचिंग के सम्बन्ध में बिलकुल भी भ्रान्त होने की आवश्यकता नही है कि मत्स्य वृद्वि या प्रत्यारोपण अथवा इसके भण्डार में वृद्वि को क्या कहा जाता है। रैचिंग का अर्थ है नदियों और जलाशयों में जीरों, व अंगुलिकाओं को उन स्थानों पर छोड़ा जाना जहां पर वयस्क मछलियों उनके विस्थापन के समय उन तक न पहुँच सके अथवा जो पालन–पोषण हेतु उपयुक्त क्षेत्रों को उपलब्ध करा सके। रैचिंग संकटग्रस्त मछलियों के समयबद्व और आशाजनक रूप से पुर्नवासन का कार्य हो सकता है।

महाशीर के लिए उपयुक्त हैचरी तकनीकियों का अभाव तथा इसके बीजों के पालन की प्रमुख समस्या महाशीर पालन के कार्य में एक बडी बाधा है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय ने सुनहरी महाशीर के बीज उत्पादन की पहल की है और उसक बीजों को भारत सहित विश्व के अन्य देशों की नदियों धाराओं और जलाशयों में संचयित किया गया है ताकि महाशीर मत्स्य उत्पादन मे वृद्वि हो, साथ ही साथ इस निदेशालय ने इस प्रजाति के जननद्रव्य को समाप्त होने से बचाने के लिए इसे सुरक्षि त भी रखा है।

हैचरी में उत्पादित बीजों को पश्चिम बंगाल, सिक्किम व हरियाणा राज्य के मत्स्य विभागों के साथ–साथ अन्य संस्थानों को भी हस्तांतरित किया जाता है। इस प्रजाति के बीजों को पापुआ न्यूगिनी की रामू तथा स्पिक नदियां में भी संचायित किया गया है। वर्ष 2001 में निदेशालय ने इसके बीजों को उत्तराखण्ड के कुमायूँ क्षेत्र की श्यामलाताल झील में संचयित किया जहाँ आज ये पर्याप्त मात्रा में फूल–फल रही है और पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र बन रही है। इसी प्रकार के कार्यक्रमों को उन सभी क्षे. त्रों में भी आयोजित किया जाए जहाँ महाशीर पर्याप्त मात्रा में विघमान है।

महाशीर संरक्षण

सुनहरी महाशीर (टौर प्युटिटौरा)

ताजे पानी की सबसे बड़ी प्रजाति के रूप में विख्यात है। यह केन्द्रीय हिमालय क्षेत्र की प्रमुख खाद्य एवं आखेट की मछली है। यद्यपि पूरे वर्ष में सुनहरी महाशीर की संख्या में कमी आ रही है जिसके कारण पर्वतीय नदियों एवं धाराओं की मात्स्यिकी प्रभावित हुई है। केन्द्रीय हिमालय क्षेत्र की विभिन्न जल प्रणालियों जैसेः नदियों, धाराओं, झीलों आदि में सुनहरी महाशीर की मात्स्यिकी के विकास की अपार सम्भावनाऐं है। इन मछलियों के बचाव एवं संरक्षण हेतु विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। जल स्रोतों का संरक्षण,मत्स्य बीज सम्वर्द्वन, कृत्रिम विधि द्वारा बीज उत्पादन, प्रक्षेत्रों मे मछलियों का पालन–पोषण आदि कुछ ऐसे विशिष्ट तौर–तरीके हैं जिनसे इन मछलियों को फिर से विकसित कर के संरक्षण के साथ–साथ मत्स्य आखेट को बढावा दिया जा सकता है और समूचे हिमालय क्षेत्र के आर्थिक ढांचे को मजबूती प्रदान की जा सकती है। शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल ने महाशीर बीज पोषणशाला की स्थापना करके इस क्षेत्र में पहल की है, साथ ही महाशीर प्रजनन की मानकीकृत तकनीकियों के विकास द्वारा इसकी संख्या में वृद्वि का सफल प्रयास किया है।

कार्प मत्स्य पालन

कॉमन कार्प मछली मूलतः चीन देश की है केस्पियनसागर के पूर्व में तुर्किस्तान तक इस का प्राकृतिक घर है। भारत वर्ष में कॉमन कार्प का प्रथम पदार्पण मिरर कार्प उपजाति के रूप में सन् 1930 में हुआ था, इसके नमूने श्रीलंका से प्राप्त किए गए थे। इसे लाकर प्रथमतः (उंटी) झील में रखा गया था, देखते देखते मिरर कार्प देश के पर्वतीय क्षेत्रों की एक जानी पहचानी मछली बन गई। इस मछली को भारत में लाने का उद्देश्य ऐसे क्षेत्र जहां तापक्रम बहुत निम्न होता हैं, वहां भोजन के लिए खाने योग्य मछली के उत्पादन में वृद्वि के लिए किया गया।

पर्वतीय क्षेत्रों में सजावटी रंगीन मछलियों का पालन

विश्व में विभिन्न जलीय पर्यावरण से अब तक लगभग 600 सजावटी रंगीन मछलियों की प्रजातियाँ पहचानी गयी है, जिनमें से भारत में लगभग 250 अंलकारिक मत्स्य प्रजातियों के होने का उल्लेख है। भारतीय जल संसाधन सजावटी मछलियों की विविधता में धनी हैं सजावटी मछलियों का रख–रखाव और इसकी उत्पति अत्यन्त रोचक क्रियाकलाप है, जो आन्नद प्रदान करने के साथ आय दायक भी बन सकती है। कुल अलंकारिक मछलियां 80 प्रतिशत स्वच्छ जल से तथा शेष 20 प्रतिशत ताजे तथा समुद्री जल से सम्बन्ध रखती हैं। अंलकारिक मछलियां अधिकतर गर्म पानी में पायी जाती हैं परन्तु कुछ कार्प जैसे कोई कार्प तथा गोल्ड फिश जो कि ठण्डे पानी की मछलियां हैं अंलकारिक मछलियों में अपना अग्रणीय स्थान बनाये हुई हैं। भारत के हिमालय क्षेत्रों में 255 मछलियों की प्रजातियां उपलब्ध हैं जिनमें से 187 (14%) मछलियां अपनी सजावटी आकृति व रंगरूप के कारण प्रसिद्ध हैं। प्राचीनकाल से मछलियों का आखेट मनोरंजन का प्रमुख साधन रहा है। आधुनिक युग में मछली आखेट जीविका का प्रमुख स्त्रोत बन गया है।

सजावटी मछलियों को उनके सुंदर रंग, आकृति और स्वभाव के अनुसार ''जीवित गहना'' कहा जाता हैं हालांकि सभी मछलियां जिनका आकार विचित्र होता है उनको को भी सजावटी मछलियों की तरह पाला जाता है। आजकल सजावटी मछलियों का पालन फोटोग्राफी के बाद दूसरा महत्वपूर्ण शौक बन गया है। प्राचीनकाल से ही इन सजावटी मछलियों का पालन एक शौक माना जाता है। ये हमारे सामाजिक व धार्मिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखते है। वास्तु शास्त्र के अनुसार भी मछलियों को घर में पालने से सुख, धन, स्वास्थ्य व भाग्य में वृद्धि होती है तथा घर के सदस्यों के बीच सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है। कई धार्मिक ग्रन्थों से पता चला है सभी धर्मों मछलियां एक विशिष्ट स्थान रखती है। हिन्दुओं में महत्वपूर्ण देवता विष्णु के 10 अवतारों में से पहला अवतार मत्स्य रूप ही था। बंगाली समाज में इसे प्रजनन का प्रतीक माना जाता है तथा इसाई व बौध समाज में इस का धार्मिक महत्व है।

मछली पालन में संतुलित आहार प्रबंधन के तरीके एवं सुझाव

दिलीप कुमार सिंह, शिवाजी अरगडे एवं *गौर हरी पैलान
भा.कृ.अनु.प–केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई
*भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

मछली के अधिक उत्पादन के लिए प्राकृतिक आहार के अलावा कृत्रिम आहार की आवश्यकता होती है। जब मछलियों को खाने के लिए संतुलित आहार होता है, तो वे तेजी से बढ़ती है और स्वस्थ रहती है। अच्छी तरह से निषेचित तालाबों में पादप–प्लवक, जंतु–प्लवक और कीड़े–मकोड़े जैसे प्राकृतिक खाद्य पदार्थ होते है। जब प्राकृतिक खाद्य पदार्थ पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होते हैं तब मछलियों के विकास के लिए पर्याप्त पोषण प्रदान करने के लिए कृत्रिम आहार को नियमित अंतराल से खिलाना जरुरी होता है।

मछली पालन में मछलियों की उचित वृद्धि और वजन बढ़ाने के लिए सही मात्रा में पौष्टिक आहार एवं आहार देने के सही तरीकों की आवश्यकता होती है। पौष्टिक आहार के बिना अधिकतम मछली उत्पादन करना संभव नहीं है। पौष्टिक आहार मतलब आहार में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, लिपिड, वसा, विटामिन, खनिज एवं पानी का संतुलित मात्रा में होना हैं। मछली पालन में होने वाली कुल लागत में लगभग 40-60 प्रतिशत लागत केवल मछलियों के आहार में ही लगती है। संतुलित एवं सही मात्रा में पौष्टिक आहार के अभाव में आहार पर बढ़ती लागत, पानी की गुणवत्ता में कमी, अतिरिक्त आहार के सड़न से बनी हानिकारक गैस, मछलियों की उचित वृद्धि में अवरुद्धि, मछलियों में कई तरह की बीमारियाँ आदि समस्याऐं उत्पन्न हो सकती है। इसलिए मछली पालन में कुल लागत कम करने एवं मछलियों की उचित वृद्धि और पानी की उच्चतम गुणवत्ता बनाये रखने के लिए संतुलित एवं सही मात्रा में पौष्टिक आहार देने के सरल एवं सही तरीकों और सुझाओं का पालन करना बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। मत्स्य आहार प्रबंधन में सही आहार का चयन, प्रतिदिन आहार की सही मात्रा, आहार देने की सही पद्धति, खिलाने की उचित आवृत्ति आदि गतिविधियों का दैनिक रिकॉर्ड रख–रखाव मछली पालन की लागत को सुनिश्चित करने में मदद करता है।

दैनिक आहार की मात्रा

दैनिक आहार की मात्रा मछली का औसत शारीरिक भार के अनुसार सुनिश्चित की जाती है। सामान्यतः आहार की दर मछली की उम्र बढ़ने के साथ साथ कम कम होती जाती है। आहार की दर विभिन्न प्रकार के कारक जैसे–मछली की उम्र, पानी की गुणवत्ता, मछली का स्वास्थ्य एवं शारीरिक स्थिति आदि पर निर्भर करती है। मिश्रित मछली पालन में सामान्यतः आहार की दर 1-5 प्रतिशत होती है। पहले दो महीने तक मछली के औसत शारीरिक भार के 5 प्रतिशत, अगले और दो महीने औसत शारीरिक भार के 4 प्रतिशत, अगले और दो महीने औसत शारीरिक भार के 2 प्रतिशत और अंतिम 2 से 4 महीने औसत शारीरिक भार के केवल 1 प्रतिशत आहार खिलाना चाहिए।

मछली का औसत वजन और तालाब में संचयित मछलियों की संख्या के आधार पर मछलियों को दिए जाने वाले दैनिक आहार की मात्रा को सात से पंद्रह दिन के बीच समायोजित की जाती है। मछलियों को दिए जाने वाले दैनिक आहार की मात्रा की गणना निम्न सूत्र द्वारा की जा सकती है।

$$\text{दैनिक आहार की मात्रा (किलोग्राम)} = \frac{\text{तालाब में संचयित मछलियों की कुल संख्या} \times \text{मछली का औसत वजन (ग्राम)} \times \text{आहार दर (x)}}{1000 \times 100}$$

आहार खिलाने की उचित आवृत्ति

मछलियों के सर्वोत्तम विकास, आहार रूपांतरण अनुपात (एफसीआर) और एक समान वृद्धि के लिए आहार खिलाने की उचित आवृत्ति को अपनाना बहुत महत्वपूर्ण है। दैनिक आहार की मात्रा को समान तीन भागों में विभाजित कर दिन में तीन बार मछलियों को खिलाने को ही आहार खिलाने की उचित आवृत्ति कहते हैं। जैसे दैनिक आहार की मात्रा अगर 12 किलोग्राम है तो आहार की दर (3 प्रतिशत) के अनुसार दैनिक आहार की मात्रा (12 किलोग्राम) को तीन भागों (प्रति 4 किलोग्राम) में बाँटकर दिन में तीन

बार खिलाये।

आहार रूपांतरण अनुपात (एफसीआर)

आहार रूपांतरण अनुपात को मछली के शरीर के वजन को एक किलोग्राम तक बढ़ाने के लिए आवश्यक आहार की मात्रा के रूप में परिभाषित किया जाता है। उच्च एफसीआर अलाभकारी उत्पादन के साथ कम आहार दक्षता को दर्शाता है। जब की निम्न एफसीआर लाभकारी उत्पादन के साथ अधिक आहार दक्षता को दर्शाता है। उचित आहार प्रबंधन के माध्यम से भी एफसीआर को निम्न रख सकते है।

आहार रूपांतरण अनुपात = (मछली पालन के दौरान आहार की कुल खपत मात्रा (किलोग्राम)/(मछली पालन के दौरान मछलियों की कुल वजन वृद्धि (किलोग्राम)

आहार खिलाने के तरीके

मछली पालन में आहार खिलाने का तरीका मछली उत्पादन स्तर और मछली की प्रजाति पर निर्भर करता है। मछलियों को आहार देने के उचित तरीके का चयन करने से मछलियों की उच्चतम वृद्धि एवं पानी की गुणवत्ता बरकरार रखने के साथ साथ आहार के अपव्यय को भी कम किया जा सकता है। सामान्यतः आहार खिलाने के मुख्य तीन तरीके इस प्रकार है।

आहार को हाथ से बिखेरना

इस तरीके में ज्ञात आहार की मात्रा को हाथ से तालाब में बिखेरा जाता है। छोटे तालाब (0.5 हैक्टर तक) में तालाब के किनारे से आहार को बिखेरा जाता है। बड़े तालाब (0.5

हैक्टर से अधिक) में आहार को नाव की मदद से तालाब में बिखेरा जाता है। इस तरीके में पानी पर तैरने वाले पैलेट आहार को सुगमता से तालाब में हाथ से बिखेरा जाता है। इस तरीके में मछलियों के स्वास्थ्य और आहार की खपत का अच्छी तरह से आकलन कर सकते है।

आहार को बोरी या टोकरी में रखकर लटकाना

इस तरीके में दैनिक आहार की मात्रा को पॉलिथीन या नायलॉन की बोरी में भरकर तालाब में तालाब के किनारे से 8 से 10 फीट की दूरी पर रस्सी से किसी आधार के सहारे लटकाया जाता है। पानी में मछलियों के प्रहार से बोरी में बने छोटे–छोटे छिद्रों से आहार बाहर निकलता है जिसे मछलियाँ खाती है। इस तरीके से आहार के अपव्यय को काफी हद तक कम किया जा सकता है। इस तरीके से मैश आहार भी आसानी से खिलाया जा सकता है। यह तरीका बड़े तालाबों में मछलियों को आहार देने के लिए प्रमाणित किया गया है। एक हैक्टर

तालाब में विभिन्न स्थानों पर 20 से 25 बोरियाँ या टोकरियाँ लटकाना चाहिए। एक स्तरीय प्रणाली में बोरी या टोकरी तालाब में तय की गई गहराई (बोरी में आहार स्तर तक) पर लटकाई जाती है।

एक स्तरीय बोरी या टोकरी में आहार खिलाने का तरीका

तीन स्तरीय प्रणाली में आहार की बोरियों या टोकरियों को अलग अलग गहराई क्रमशः 1.5 फीट, 3 फीट और 4 फीट पर बम्बू का खम्भा या रस्सी की सहायता से तालाब में अलग अलग स्थानों पर लटकाया जाता है। एक हैक्टर तालाब में विभिन्न स्थानों पर 25 से 38 बोरियाँ या टोकरियाँ लगी होनी चाहिए।

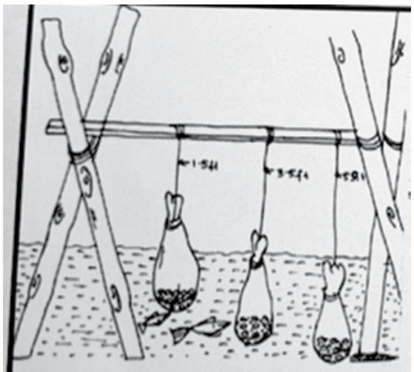

Three tier system of bag feeding method

त्रिस्तरीय बोरी या टोकरी में आहार खिलाने का तरीका

मछली का आहार बनाने की चरणबद्ध प्रक्रियाः मछली पालक किसान अपने घर में ही मछली का आहार बना

सकते है। जैसे 100 किलोग्राम संतुलित आहार बनाना है तो फिश मील (14 किलोग्राम), मूंगफली केक (46 किलोग्राम), तेल निकाली हुई चावल की भूसी (8 किलोग्राम) और मक्का (32 किलोग्राम) को दिए हुए मात्रा में तोल लीजिये। सभी तोली हुई सामग्री अच्छी तरह से सूखी होना आवश्यक है। एकत्रित सामग्री की पीसने वाली मशीन की सहायत्ता से पाउडर बनाये। एक जैसी बारीक पावडर पाने के लिए इसे छलनि से छान लीजिये। फिर इसे मिश्रण मशीन में डालकर समरूप मिश्रण बनाये। इसके बाद समरूप मिश्रण को जल के साथ गोला बना ले और इसको पॉलीथिन में अच्छी से बांध दे। इस गोले को 5 मिनट तक 100 डिग्री सेल्सियस तापमान पर प्रेशर कुकर में पानी के साथ अच्छे से पका लीजिये। इसके बाद ठंडा होने पर उसमें 2 प्रतिशत विटामिन–खनिज लवण और 3 प्रतिशत सोयाबीन या सुरजमुखी का तेल मिलाये। पैलेट बनाने की मशीन की सहायत्ता से पकाये हुए मिश्रण के सामग्री से पैलेट बनाये। पैलेट को सूरज की रोशनी में सुखाएं। सूखे हुई पैलेट को मशीन की सहायत्ता से जरुरत और मछली की उम्र के हिसाब से छोटे छोटे टुकड़ों या कणों में रूपांतरित करके इसे वायु–रोधक कंटेनर में स्टोर करें। इसे आवश्यकता अनुसार निर्धारित मात्रा में निधारित समय पर सही तरीके से मछलियों को खिलायें।

मछली पालन में संतुलित आहार प्रबंधन सम्बंधित महत्वपूर्ण सुझाव

- संतुलित आहार प्रबंधन द्वारा मछली पालन की लागत को कम करने के साथ साथ पानी की गुणवत्ता एवं मछलियों का स्वास्थ्य और विकास सुनिश्चित कर सकते है।
- हमें मछलियों का आहार प्रति उनकी प्रतिक्रिया का बारीकी से निरिक्षण करके वे आहार का कितना भाग कितने समय में समाप्त करती है यह पता लगाना होगा। दैनिक आहार की मात्रा की कम खपत रोग या पानी की बिगड़ती गुणवत्ता का संकेत हो सकता है।
- मछलियों को एक ही समय में ज्यादा आहार देने से आहार का अपव्यय और तालाब का पानी प्रदूषित होता है। दैनिक आहार की मात्रा को समान हिस्सों में बाटकर कम से कम दिन में दो बार मुख्यतः सुबह और दोपहर को निश्चित समय और स्थान पर ही देना फायदेमंद होता है।
- संतुलित आहार प्रबंधन से मछलियों की प्रारंभिक वृद्धि अवस्था में संभावित रोगों का पता लगाना तथा नियंत्रित करने में मदद मिलती है।
- मछली पालन में संतुलित आहार प्रबंधन के माध्यम से जलीय पर्यावरण को बिना प्रदूषित किये प्रति इकाई जलक्षेत्र में मछली उत्पादकता को बढ़ा सकते है।

सफल मछली पालन के लिए हमेशा ध्यान में रखने वाली बातें

- मछलियों को हमेशा एक ही समय और एक ही जगह पर आहार खिलाएं।
- मछलियों को कभी भी जरुरत से ज्यादा न खिलाएं।
- मछलियों को तालाब से बाहर निकालने के दिन आहार ना दे।
- ठंड के मौसम में आहार की मात्रा को नियंत्रित करें।

इस लेख के सभी लेखक लोवेल टी और रेनहोल्ड वी. एन. द्वारा लिखित किताब मछली का पोषण और भोजन (1989) से उद्धृत जानकारी को स्वीकार करते हैं।

अगर तुम सूरज की तरह चमकना चाहते हो

तो पहले सूरज की तरह जलना सीखो

–अब्दुल कलाम

पर्वतीय मत्स्य पालन का इतिहास

कृपाल दत्त जोशी
भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

यद्यपि वर्तमान समय में मत्स्य पालन देश के विभिन्न भागों में उत्तरोत्तर विकास के पथ पर अग्रसर है। लेकिन कतिपय प्राकृतिक एवम् भौगोलिक विसमताओं के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन का वांछित विकास नहीं हो पाया है। इसका प्रमुख कारण यह भी है कि इन क्षेत्रों में परम्परागत मत्स्य पालन व्यवसाय का पूर्व इतिहास नहीं रहा है। इसके कई कारण रहे है जिनमे से प्रमुखतया निम्न है –

1. मिट्टी में कंकड़ पत्थर तथा बालू की अधिक मात्रा होने के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में जल रिसाव अधिकतम मात्रा में होता है। जिस कारण यहां मैदानी भागों की तरह मत्स्य पालन योग्य प्राकृतिक तालाब उपलब्ध नहीं है।
2. उपरोक्त मृदीय जटिलताओं के कारण इन क्षेत्रों में सस्ते एवं उत्पादक कच्चे तालाब नहीं बनाये जा सकते है क्योकि जल रिसाव एक बहुत बड़ी समस्या है।
3. कम तापमान तथा तापमान में अधिकतम उतार चढ़ाव के कारण जलीय संसाधनो की उत्पादकता बहुत कम है।
4. स्थानीय स्तर पर उपयुक्त पालन योग्य प्रजातियों का अभाव एक अन्य कारण है। यद्यपि पर्वतीय क्षेत्र के जलीय संसाधनो में उपलब्ध महाशीर एवं बर्फानी ट्राउट प्रजातियां अपनी विशिष्टताओं के कारण विख्यात हैं लेकिन पालन अवस्था में इनकी वार्षिक वृद्धि दर बहुत कम होती है।
5. इन समस्याओं के साथ–साथ इस विधा का क्षेत्र में उचित प्रचार व प्रसार न होना भी प्रमुख कारणों में से है।

उपरोक्त भौगोलिक, भूगर्भीय एवं मृदीय कारणों से पर्वतीय क्षेत्र के मत्स्य पालन व्यवसाय का विकास नहीं हो पाया। इसी कारण क्षेत्रों में उपयोग हेतु मछली की उपलब्धता नगण्य रही जिससे पर्वतीय क्षेत्र के अधिकांश लोगां में मछली को भोजन के रुप में ग्राहयता बहुत कम विकसित हो पायी।

मत्स्य पालन में प्रयुक्त प्रजातियों का इतिहास

नील गिरी हैचरी में भूरी ट्राउट का आगमन

यद्यपि भारत में ट्राउट स्थापित करने हेतु प्रथम प्रयास सफल नहीं हो पाये। लेकिन उपरोक्त जटिलताओं एवं समस्याओं के बावजूद इस क्षेत्र में ट्राउट पालन हेतु वर्ष 1863 से प्रयास किये गये थे। वर्ष 1863 में सर डांसिस डे द्वारा भूरी ट्राउट (साल्मो ट्रटा फेरियो) तथा लौक – लेवन ट्राउट (साल्मो लवेन्सिस) के अण्डे एवं जीरा नीलगिरी में स्थापित करने का प्रयास किया गया लेकिन परिवहन अवस्था में तापमान की वृद्धि के कारण समस्त अण्डे/जीरे रास्ते में ही समाप्त हो गये। वर्ष 1899 में श्री एफ. जे. मिचेल ने इंग्लैण्ड से भूरी ट्राउट के नयनयुक्त अण्डे हिमालय क्षेत्र में स्थापित करने का असफल प्रयास किया। जहाज में तापमान की अधिकता के कारण यह अण्डे भी जीवित नहीं रह पाये। वर्ष 1900 में पुनः श्री मिचेल ने हावेटोनिन (स्काटलैण्ड) से भूरी ट्राउट के नयनयुक्त अण्डे कश्मीर स्थित हरवन तक सफलतापूर्वक पहुंचाने व स्थापित करने में सफलता प्राप्त की इन्हीं अण्डो से विकसित प्रजनकों का हरवान में वर्ण 1905 में कृत्रिम प्रजनन कर बच्चे प्राप्त किये गये। इस तरह भारत में ट्राउट प्रजाति को स्थापित करने का श्रेय श्री एफ. जे. मिचेल को जाता है। वर्ष 1909–1910 में (तमिलनाडु) में प्रारम्भिक असफलताओं के पश्चात नीलगिरी क्रीड़ा मत्स्य संगठन (नीलगिरी गेम एशोसियेशन) द्वारा ट्राउट बीज के सफलतापूर्व आयात हेतु श्री एच. सी. विल्सन की सेवाये ली। विल्सन के दिशा – निर्देशों के अनुसार वर्ष 1990–10 में नीलगिरी पर्वत श्रृंखला के अर्न्तगत अवलांच ट्राउट हैचरी का निर्माण किया गया तथा मिचेल द्वारा भूरी ट्राउट के स्थान पर वर्ष 1910 में न्यूजीलैण्ड से इन्द्रधनुषी ट्राउट के 50,000 नयनयुक्त अण्डे मंगाकर अवलांच हैचरी में विकसित किये, तथा इन्द्रधनुषी ट्राउट को स्थानीय सदाबहार जालों में संचयित किया गया। वर्ष 1968 में विभिन्न इन्द्रधनुषी ट्राउट प्रजातियों

के साथ–साथ 10,000 भूरी ट्राउट के अण्डे जापान से लाकर अवलांच हैचरी में पाले गये।

वर्ष 1905–06 में मिचेल द्वारा हरवान में एक लाख अण्डे क्षमता की ट्राउट हैचरी स्थापित की गयी तत्पश्चात इस हैचरी में उत्पादित अण्डे जम्मू, गिलगित, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल (तत्कालीन उत्तर प्रदेश), उत्तरी बंगाल, अरुणाचल प्रदेश तथा मेघालय तक स्थापित करने हेतु पहुंचाये गये।

हरवान हैचरी में प्रजातियों का आगमन

वर्ष 1909 में महिली हैचरी कटरैन कुलू हिमाचल प्रदेश में नयनयुक्त अण्डे पहुंचाये गये जिनसे सफलतापूर्वक जीरे तैयार हुए, यही से उत्पादित बीज 1916 में बरौत हैचरी में स्थापित किया गया । 1923 में चम्पाराजय में भी भूरी ट्राउट स्थापित की गयी।

वर्ष 1910 में 10,000 नयनयुक्त अण्डे हरवान से उत्तरांचल (तत्कालीन उत्तर प्रदेश) के नैनीताल जनपद स्थित भवाली हैचरी गये, लेकिन यह प्रयास सफल नहीं हो सका। पुनः वर्ष 1912 में भूरी ट्राउट की अंगुलिकाऐं जनपद नैनीताल की विभिन्न झीलो में डाली गयी, लेकिन तापमान की अधिकता के कारण यह जीवित नहीं रह पायीं।

वर्ष 1910 में ही तत्कालीन टिहरी रियासत के अर्न्तगत स्थित कल्दयानी एवं तलवाड़ी हैचरी में भी कश्मीर से भूरी ट्राउट के अण्डे मंगवाये गये थे वर्ष 1947 तक इनमें भूरी ट्राउट पालन एवं प्रजनन सफलतापूर्वक चलता रहा, तत्पश्चात इसमें कुछ व्यवधान उत्पन्न हो गया।

विगत दो दशकों से जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश आदि पर्वतीय राज्यों में इन्द्र धनुषी ट्राउट की अनुवांशिक रुप से परिस्कृत उन्नत किस्मों को नार्वे तथा अन्य पश्चिमी देशो से लाया गया। साथ ही क्षेत्र में ट्राउट पालन हेतु मूल भूत संरचना का आधुनिकीकरण भी किया गया, जिस कारण ट्राउट पालन पूर्व विकसित रुप से किया जा रहा है।

केरल में प्रजातियों का आगमन

वर्ष 1909 में इंग्लैण्ड से भूरी ट्राउट के नयनयुक्त अण्डे केरल में पालने हेतु प्रयास असफल प्रयास हुआ तत्पश्चात यह प्रयास वर्ष 1938 तक चलते रहे, लेकिन इनमें सफलता प्राप्त नहीं हो पायी। इस हेतु कन्नाइ मलाई में एक हैचरी भी स्थापित की गयी थी। तत्पश्चात 1941 में एराविकोलम में एक इन्द्रधनुषी ट्राउट हेतु हैचरी की स्थापना की गयी, इसके पश्चात इंग्लैण्ड से इन्द्रधनुषी ट्राउट भी सस्टा प्रजाति (साल्मो गार्डनेरी सास्टा) को मन्नार पर्वत श्रृंखलाओं स्थित एराविकोलम हैचरी में विकसित जीरा व अंगुलिकाऐं स्थानीय जल श्रोतों में संचयित की गयी।

इन्द्रधनुषी ट्राउट के आगमन का इतिहास

सर्वप्रथम इन्द्रधनुषी ट्राउट वर्ष 1904 में इंग्लैण्ड से हरवान लाये गये भूरी ट्राउट बीज के कुछ अण्डे इन्द्रधनुषी ट्राउट (साल्मो गार्डनेरी ट्रिडियस) के भी आ गये थे लेकिन इनका स्फुटन नहीं हो पाया, वर्ष 1912 में बिस्टल वाटर वर्क्स इंग्लैण्ड द्वारा भेजे गये इन्द्रधनुषी ट्राउट के अण्डों का मिचेल द्वारा सफलतापूर्वक विकास किया गया। कश्मीर से वर्ष 1919 में 5000 इन्द्रधनुषी ट्राउट अण्डे कुलू घाटी स्थित महिली हैचरी में स्थापित किये गये जिनका वर्ष 1922 में प्रजनन कराया गया, लेकिन संक्रमण एवं रोगग्रस्तता के कारण यह स्टाक बाद में समाप्त हो गया।

अन्य ट्राउट प्रजातियां

भारतवर्ष में भूरी तथा इन्द्रधनुषी ट्राउट को विदेशो से लाकर स्थापित करने के बहुत प्रयास किये गये जिनके फलस्वरुप भूरी ट्राउट प्रजाति यहां के पर्वतीय क्षेत्रों के कुछ नदियों तथा सदाबहार नालों में पायी जा रही है तथा मत्स्य आखेटकों को लुभा रही है। इन्द्रधनुषी ट्राउट भी देश के विभिन्न पर्वतीय राज्यों में स्थापित 30 से अधिक पर्वतीय मत्स्य हैचरी अथवा मत्स्य प्रक्षेत्रों में पाली जा रही है। इनमें से अनेक हैचरियों में पालन के उद्देश्य से इन्द्रधनुषी ट्राउट तथा क्रीड़ा मत्स्य के रुप में नदियों व सदाबहार नालों से संचयित करने हेतु भूरी ट्राउट का बीज उत्पादन किया जाता है।

भूरी तथा इन्द्रधनुषी ट्राउट के अतिरिक्त ट्राउट परिवार की कुछ अन्य प्रजातियां भी भारतवर्ष के कुछ पर्वतीय भागों में लायी गयी थी लेकिन यह प्रजातियां सफल नहीं हो पायी, यह प्रजातियां निम्न थी–

1. ईस्टर्न ब्रुक ट्राउट (साल्वेलिनस फोन्टिनेलिस) विगत 1959–1970 से कनाडा से ईस्टर्न ब्रुक ट्राउट प्रजाति को कश्मीर स्थित ट्राउट हैचरियों में स्थापित करने के प्रयास किये गये, यद्यपि यह प्रजाति हैचरियों में सफलता पूर्वक विकसित की

गयी, लेकिन अण्डजनन क्षमता में कमी तथा निषेचित अण्डो की न्यूनतम जीवितता तथा यह तापमान प्रदूषण तथा बीमारियों के प्रति अधिक संवेदनशील होने के कारण यह प्रजाति भारतीय परिवेश में सफल नहीं हो पायी।

2. स्पेलेक ट्राउट प्रजाति लेक ट्राउट (साल्वेलिनस तथा ईस्टर्न ब्रुक ट्राउट साल्वेलिनस फोन्टिनेलिस) के संकरण से बनती है। साल्वेलिनस फोन्टिनेलिस के साथ ही कनाडा से इस प्रजाति को भी कश्मीर स्थित ट्राउट हैचरियों मत्स्य प्रक्षेत्रों में लाया गया था। स्पेलक ट्राउट हरवान हैचरी में 3 वर्ष में 1000 ग्राम की हो गयी लेकिन 5 वर्ष की अवस्था तक भी यह प्रजनन हेतु परिपक्व नहीं हो पायी तथा तदउपरान्त विभिन्न बीमारियों के संक्रमण के कारण यह किस्म यहां के वातावरण में अधिक समय तक जीवित नहीं रह पायी।
3. अटलांटिक साल्मन (साल्मो सलर) उपरोक्त के साथ ही इस प्रजाति को उत्तरी अमेरिका से आयात कर कश्मीर स्थित मत्स्य प्रक्षेत्रों एवं हैचरियों में डाला गया, यह प्रजाति जीवित तो रही लेकिन सफल प्रजनन न हो पाने के कारण मात्स्यिकी हेतु सफल नहीं रही।
4. रेनबो ट्राउट की स्टील हेड (साल्मो गाडर्डनेरी इरिडियस तथा साल्मो गाइर्डनेरी) सास्ता किस्में भी भारतीय परिवेश में अधिक सफल नहीं रही, एराविकोल, हैचरी से सास्ता किस्म का जीरे व अंगुलिकाऐं मुन्नार पर्वतीय श्रृंखलाओं के जल श्रोतो में डाली गयी।
5. कोकानी सामन (ओन्कोरिंकस नरका) यह प्रजाति भी भारतीय वातावरण में अधिक सफल नहीं हो पायी वर्ष 1968 में 10,000 अण्डे जापान से लाकर अवलांच हैचरी में पालने के प्रयास किये गये।
6. टाइगर ट्राउट यह मादा भूरी ट्राउट तथा नर इर्स्टन ब्रुक ट्राउट के प्रजनन से बनायी गयी संकर किस्म वर्ष 1968 में अवलांच हैचरी में लायी गयी।

यह प्रयास तत्कालीन विभिन्न रियासतों के राजाओं तथा क्षेत्र में स्थित चाय कम्पनियों के द्वारा किये गये।

कामन कार्प के आगमन का इतिहास

भूरी एवं इन्द्रधनुषी ट्राउट के पश्चात् भारतवर्ष के पर्वतीय क्षेत्रों में पालन के उद्देश्य से एवं अन्य महत्वपूर्ण शीत जलीय प्रजाति कामन कार्प को आयातित किया गया। वर्ष 1939 में सर्वप्रथम कामन कार्प की उप प्रजाति मिरर कार्प (सिप्रिनस कार्पिको स्पीकुलरिस) को श्रीलंका से नीलगिरी पर्वतीय क्षेत्र में लाया गया। यह उप प्रजाति वर्ष 1914 में प्रसिया से श्रीलंका लायी गयी थी। इस उप प्रजाति को वर्ष 1947 में उत्तरांचल (तत्कालीन उत्तर प्रदेश) की भवाली (जनपद नैनीताल) स्थित मत्स्य हैचरी में संचयित किया गया। तत्पश्चात भवाली हैचरी में मिरर कार्प के प्रजनन तैयार कर प्रजनन कराया गया तथा उत्पन्न बीज को स्थानीय एवं अन्य राज्यों तक पहुंचाया गया। भवाली हैचरी से मिरर कार्प बीज वर्ष 1952–1953 में नैनीताल की प्रमुख झीलों में संचयित किया गया। इस हैचरी में उत्पादित मिरर कार्प बीज तत्पश्चात हिमाचल प्रदेश ले जाया गया। हिमाचल प्रदेश के विलासपुर तथा कांगड़ा स्थानों में कामन कार्प बीज उत्पादन इकाईयों की स्थापना की गयी। हिमाचल प्रदेश में मिरर कार्प की उपयोगिता को देखते हुए प्रदेश में उत्पादित 500 मिरर कार्प अंगुलिकाऐं वर्ष 1956 में कश्मीर स्थित डल झील में संचयित की गयी।

कश्मीर घाटी में विभिन्न जल श्रोत आपस में जुड़े हुए है जिस कारण मिरर कार्प इन समस्त श्रोतों एवं झेलम नदी तक फैल गयी।

हिमाचल प्रदेश से मिरर कार्प मणिपुर, मेघालय, सिक्किम तथा असम तक पहुंचायी गयी।

भारतवर्ष के पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन हेतु प्रारम्भिक प्रयास दो विभिन्न दिशाओं में हुए जहां तत्कालीन राजाओं तथा ब्रिटिश प्रशासकों द्वारा ट्राउट प्रजातियों को विभिन्न उचित जलवायु युक्त स्थानों में स्थापित करने के प्रयास किये गये, वहीं सामान्य वर्ग द्वारा प्रारम्भिक वर्षों में स्थानीय प्रजातियों का तथा तत्पश्चात कामन कार्प मछली को पालने के प्रयास किये गये। यद्यपि प्रारम्भिक वर्षो में यह प्रयास उत्साहजनक नहीं रहे। उत्तर पूर्वी राज्यों (अरुणाचल प्रदेश व मेघालय) के पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित सीढ़ीदार खेतों में धान के साथ कामन कार्प पालन काफी समय से प्रचलन में है।

ग्रास एवं सिल्वर कार्प

भौगोलिक एवं जलवायु सम्बन्धित जटिलताओं के कारण पर्वतीय

वातावरण में केवल शीत जलीय प्रजातियां ही जीवित रह पाती है, एवं पनप सकती है। शीतजलीय मत्स्य प्रजातियों में भी स्थानीय महत्वपूर्ण प्रजातियां महाशीर एवं बर्फानी ट्राउट प्रजातियां कम वृद्धि दर के कारण पालन हेतु उपयोगी सिद्ध नहीं हो पाती है, इसी कारण पालन के उद्देश्य से शीत जल की अभ्यस्त प्रजातियों जैसे भूरी व इन्द्रधनुषी ट्राउट, कामन कार्प एवं चीनी मूल की ग्रास व सिल्वर कार्प प्रजातियों को पालने हेतु उपयोग में लाया जाता है। सरल पालन पद्यति, शाकाहारी भोजन प्रवृत्ति अपेक्षाकृत व्यापक तापमान ग्राह्यता मिश्रित पालन हेतु ग्राहयता एवं अच्छी वार्षिक वृद्धि दर के कारण चीनी मूल की ग्रास एवं सिल्वर कार्प प्रजातियां पर्वतीय मत्स्य पालन में प्रचलित होती जा रही है।

हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं में स्थित जल श्रोतों में चीनी मूल की ग्रास एवं सिल्वर कार्प मछलियों के पदार्पण तथा स्थापन के उचित प्रमाण नहीं मिलते है। लेकिन सिल्वर कार्प प्रजाति को हिमाचल प्रदेश स्थित गोविन्द सागर जलाशय में प्रवेश एवं स्थापन एक रोचक घटना के रुप में जानी जाती है। वर्ष 1971 में हिमाचल प्रदेश के देवली मत्स्य प्रक्षेत्र से 47 सिल्वर कार्प मछलियां जिनकी शारीरिक लम्बाई 290–530 मिमी. थी। सतलुज नदी की बाढ़ के पानी में बहकर गोविन्द सागर जलाशय में पहुंच गयी। यह प्रजाति धीरे–धीरे जलाशय में स्थापित हो गयी। वर्ष 1977 में जलाशय के कुल मत्स्य उत्पादन का 10 प्रतिशत भाग सिल्वर कार्प मछलियों का हो गया। सिल्वर कार्प उत्पादन का प्रतिशत वर्ष 2004–2005 में जलाशय का 85 प्रतिशत तक पहुंच गया। कुल उत्पादन में अधिकतम योगदान के साथ–साथ सिल्वर कार्प द्वारा जलाशय से प्रति इकाई उत्पादन वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान रहा। यद्यपि सिल्वर कार्प के कारण जलाशय की स्थानीय प्रजातियां जिनमें से कतला प्रमुख है की संख्या में क्रमिक ह्यस देखा गया।

वर्तमान समय में सिल्वर कार्प तथा ग्रास कार्प पर्वतीय मत्स्य पालन का हिस्सा बन चुकी है तथा यह प्रजातियां क्षेत्र के गोविन्द सागर जलाशय, कुमाऊं की झीलों सहित अनेक जल संसाधनों में पायी जाती है गोविन्द सागर के अतिरिक्त अन्य जल क्षेत्रों में सिल्वर कार्प अथवा ग्रास कार्प के स्थापित हो जाने में कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

भारतीय मेजर कार्प

मैदानी क्षेत्रों में पालन हेतु बहुउपयोगी तीन प्रजातियों रोहू (लेवियो रोहिता), कतला (कतला कतला) एवं मृगल (सिरीनस मृगाला) यूं तो पर्वतीय शीतजल में जीवित नहीं रह पाती है, लेकिन फिर भी इन प्रजातियों को कुछ निचले पर्वतीय क्षेत्रों अथवा घाटियों में स्थित जल श्रोतों, मुख्यतः जलाशयों एवं झीलों में संचयित किया गया है। जिनमें से कुछ में है तथा वृद्धि भी करती है लेकिन फिर भी प्रजनन नहीं कर पाती है। भारतीय पर्वतीय जलाशयों में संचयित करने हेतु प्रथम प्रयास वर्ष 1961–62 में किये गये थे। जब रोहू, कतला एवं मृगल बीज हिमाचल प्रदेश स्थित गोविन्द सागर (16,867 हे.) जलाशय में संचयित किये गये थे। गोविन्द सागर जलाशय में भारतीय कार्प की मात्स्यिकी का अच्छा विकास हुआ तथा वर्ष 1975–76 से 1980–81 के बीच जलाशय से 202 टन से 366 टन प्रतिवर्ष तक भारतीय कार्प उत्पादन प्राप्त किया गया। लेकिन तत्पश्चात भारतीय कार्प उत्पादन में तीव्र गिरावट दर्ज की गयी। जिस कारण सिल्वर कार्प की अधिक उपलब्धता बतायी जाती है। भारतीय मेजर कार्प प्रजातियां हिमाचल प्रदेश के एक अन्य जलाशय पोंग (24,529 हे.) में वर्ष 1983–84 से 1989–90 तक जलाशय से 100.5 टन से अधिकतम 491.9 टन तक भारतीय कार्प प्रजातियों का उत्पादन रहा जो जलाशय के कुल मत्स्य उत्पादन (469.9 टन से 797.4 टन) का 21. 38 प्रतिशत से 61.65 प्रतिशत तक था। अन्य हिमालयी जल श्रोतो में भारतीय मेजर कार्प संचयित करने का प्रमाण नैनीताल जनपद स्थित झीलों का है। वर्ष 1977 में रोहू, कतला, एवं मृगल बीज भीमताल (86.5 हे.) में डाला गया। तत्पश्चात पुनः 40,000 बीज वर्ष 1978 में डाला गया। इस झील में इन प्रजातियों ने अच्छी शारीरिक वृद्धि की जिसकी पुष्टि अगस्त 1979 में झील से 20,0 कि.ग्रा. की रोहू मछली पकड़े जाने से होती है। लगभग इसी काल अवधि में साततال, नौकाचियाताल आदि झील में भी भारतीय मेजर कार्प संचयित की गयी। सातताल झील से इनका उत्पादन 64.1 प्रतिशत तक पहुंच जाने के प्रमाण मिलते है।

वर्तमान समय में रेनबो ट्राउट, ब्राउन ट्राउट, ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प, कामन कार्प एवं कार्प प्रजातियाँ विभिन्न क्षेत्रों में मत्स्य पालन अथवा जल संसाधनों में उपलब्ध हैं।

शीतजल मात्स्यिकी द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों में जीविकोपार्जन की सम्भावनाऐं

[1]ममता जोशी एवं [2]एच. सी. बिष्ट

[1]जन्तु विज्ञान विभाग, सूरजमल डिग्री कॉलेज, किच्छा, उधम सिंह नगर

[2]जन्तु विज्ञान विभाग, डी. एस. बी. परिसर, कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल

पर्वतीय क्षेत्र में जहाँ जनसंख्या कभी बहुत कम थी, आज निरन्तर वृद्धि हो रही है जिससे पहाड़ो का आर्थिक–सामाजिक तन्त्र असंतुलित हो रहा है। बेताहाशा बेरोजगारी व पलायन अपना सिर उठा रहे हैं। उत्तरांचल में मुख्य नदियों की लम्बाई लगभग 3500 किमी0 है तथा झीलों का क्षेत्रफल लगभग 400 हेक्टेयर है। इस जल क्षेत्र में गहन व संकलित मत्स्य पालन करने से इस क्षेत्र की नही वरन् सम्पूर्ण प्रदेश की आर्थिक–सामाजिक स्थिति मजबूत की जा सकती है। जल पारिस्थतिकी का संरक्षण भी मत्स्य पालन से संभव हो सकता है।

इस क्षेत्र में प्रचुर जल संपदा का जो नदियों, झीलों व तालाबों के रूप में उपलब्ध है अभी तक व्यवहारिक व व्यवसायिक रूप से उपयोग नहीं किया जा सका है। पिछले एक दशक से यहाँ की जनता पारम्परिक फसलों के साथ–सपमि फल व सब्जियों का उत्पादन बखूबी कर रही है। जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। नदी, नालो व झीलों के आस–पास अपनी भूमि में किसान सिंचाई हेतु बाधं बनाते है उन छोटे–छोटे बाँधों को गहन मत्स्य–पालन तालाब के रूप में प्रयोग कर मत्स्य उत्पादन किया जा सकता है। व्यापारिक स्तर पर मत्स्य उत्पादन करने से पर्वतीय क्षेत्र में पौष्टिक आहार की कमी को दूर किया जा सकता है। मछली, पोषक तत्वों व खनिज लवणों से युक्त होने के सपमि–सपमि एक सुपाच्य आहार है। अतः इस क्षेत्र में कुपोषण की विकट स्थिति को दूर करने में मत्स्य एक उपयोगी माध्यम हो सकता है। पर्वतीय क्षेत्र की नदियों व झीलों में मत्स्य पालन हेतु उपयुक्त देशी व विदेशी प्रजातियां जैसे महाशीर, साइजोथोरेक्स, रोहू, कामन कार्प और ट्राउट की प्रजातियां पायी जाती है। यह एक हर्ष का विषय है कि पिछले कुछ वर्षो में कुमाऊँ व गढ़वाल मण्डलों में सक्रिय किसानों ने मछली पालन का कार्य प्रारम्भ किया है। परन्तु उच्च कोटि के मत्स्य बीज, उचित मत्स्य प्रबन्धन व प्रशिक्षण की कमी से मत्स्य उत्पादन संम्भावनाओ के अनुरूप नहीं हो पा रहा है। आज के अधुनिक युग में कोई भी व्यवसाय किसी जाति विशेष पर निर्भर नहीं रह गये है, इसलिये संकलित मत्स्य पालन के द्वारा इस क्षेत्र की विकास की संम्भावनाऐं और अधिक बढ़ सकती हैं। संकलित मत्स्य पालन में मीन के साथ कुक्कुट पालन, बत्तख पालन, पशुपालन अपनाकर कम लागत में अधिक धनोपार्जन किया जा सकता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन के लिये नई तकनीकी में तालाब व बाँध से लेकर मत्स्य प्रजातियों का चयन, मत्स्य बीज संचय, पोषण, बीज उत्पादन, पानी के भौतिक व रासायिनक गुण, मत्स्य रोग व उनका निराकरण और शिकार तथा विपणन आदि पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। उपरोक्त तकनीकी के बारे में संक्षेप में यहाँ उल्लेख किया जा रहा है जिससे पर्वतीय तथा मैदानी क्षेत्र के मत्स्य पालक व मत्स्य प्रसार वैज्ञानिक लाभान्वित होगें।

सर्वप्रथम इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति को ध्यान मुें रखकर मत्स्य पालक को तालाब निर्माण विधि का विशेष ज्ञान होना आवश्यक है जो कि निम्न प्रकार हैः–

तालाब निर्माण व प्रबन्धन

तालाब निर्माण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके लिये छोटे–छोटे 0.3–0.5 एकड़ से लेकर 0.5 हेक्टेयर माप के तालाब उपयोगी होते हैं। तालाब मिट्टी के ही बनाये जाने चाहिए। तालाब में उचित जल प्रवेश व निकास का प्रबन्ध होना चाहिए। जल निकास का प्रबन्ध तली व सतह दोनो ओर से होना चाहिए जिनसे इच्छानुसार जल स्तर बदला जा सकता है। तालाब में निरन्तर जल प्रवाह से मत्स्य उत्पादन को कई गूना बढ़ाया जा सकता है। तालाब में निरन्तर जल प्रवाह बने रहने से जल के साथ प्राक्रितक भोजन व घुलित ओषजन प्रवेश करती रहती

है दूसरी ओर जल में विभिन्न प्रकार के उपापचयज जैसे अमोनिया, नाइट्रोजन, कार्बन डाई–आक्साइड जो मछलियों के लिये हानिकारक होती है जल निकासी के साथ तालाब से बाहर निकलते रहते हैं। एक के बाद दूसरा तालाब बनाने से मत्स्य फार्म प्रबन्ध व विपणन में विशेष सुविधा होती है। तालाब का खादीकरण एक नाजुक प्रक्रिया है। निर्मित तालाब को पानी से भरने के पश्चात् 2–5 टन गोबर प्रति हेक्टेयर तथा 250 किग्रा0 (अनबूझा) चूना प्रति हेक्टेयर डाला जाना चाहिए। पुराने तालाबों में इसकी मात्रा कम कर दी जाती है क्यांकि प्राकृतिक तल होने से उत्पादन का संन्तुलन हो जाता है। सप्ताह में एक बार पानी की भौतिक व रासायनिक गुण जैसे पी0 एचमान, घुलित ऑक्सीजन, नाइट्रेट, फास्फेट और क्षारीयता की जाँच अवश्य करनी चाहिए (तालिका–1)। तालाब के बाँध की चौड़ाई कम से कम 3–4 मीटर होनी चाहिए। जिसमें कृषक आसानी से फल व सब्जी का भी उत्पादन कर सकता है। फल वृक्ष तालाब के पश्चिम दिशा में ही लगाने चाहिए। नदी की ओर भू–क्षरण को रोकने वाले पेड़ तालाब से थोड़ा हटकर ही लगाने चाहिए।

मत्स्य बीज संचय

तालाब निर्माण के बाद उसमें संख्या व उच्च गुणवत्ता का मत्स्य बीज संचयन अति महत्वपूर्ण कार्य है। प्रथम वर्ष में भौगोलिक परिस्थितियों में उपलब्ध प्रजाति का मत्स्य बीज संचय करना चाहिए तत्पश्चात् द्वितीय वर्ष से स्थानीय तथा अभ्यागत प्रजातियों का संचय करना चाहिए। वायुश्वासी मछली जैसे क्लेरियस व हैटेरोप्न्यूस्टिस की प्रजातियों का संवर्धन भी अच्छी पैदावार दे सकता है। इन प्रजातियों को अधिक संचय दर पर निरन्तर जल–प्रवाह युक्त डिग्गियों या सीमेंट कें तालाबों में पूर्ण कृत्रिम भोजन देकर अधिक अच्छा लाभ प्राप्त किया जा सकता है। मत्स्य बीज संचयन के समय वैज्ञानिक तकनीकी का ध्यान रखकर सतह भोजी, मध्य सतह भोजी व तल भोजी प्रजातियों की संख्या क अनुपात ठीक होना चाहिए (तालिका–2)। अधिक संचय दर से अच्छी पैदावार नहीं मिलती है। नई तकनीकी से नपुंशक मछलियों का पालन भी लाभकारी हो सकता है। मछलियों में केवल मादा पैदा करने की विधि विकसित कर ली गई है, जिससे वांछित लिंग की मछली का उत्पादन किया जा सकता है।

नर मछली पैदा करने के लिये 17 अल्फा मिथाइल टैस्टोस्टेरान हारमोन तथा मादा मछली हेतु 17 बीटा स्ट्रेडियाल हारमोन का उपयोग किया जाता है। मछलियों मे हैचिंग के उपरान्त उक्त हारमोन को कृत्रिम भोजन के साथ मिश्रित करके दिया जाता है। इसके अधिक उपयोग से मछली नपुंशक हो जाती है। हारमोन के अतिरिक्त मछलियों में उनके आनुवंशिक तत्वो में थोड़ा परिवर्तन कर नर, मादा तथा नपुंशक मछलियां पैदा की जा सकती हैं। इसके लिये मत्स्य शरीर से प्राप्त अण्डाणु तथा शुक्राणु गर्म अथवा ठण्डी परिस्थिति में एक्सरे प्रघात प्रदान कर लिंग परिवर्तन किया जा सकता है।

कृत्रिम भोजन

गहन मत्स्य पालन पूर्णरूप से कृत्रिम भोजन पर आधारित होता है। अच्छी मत्स्य पैदावार के लिये उच्च श्रेणी का कृत्रिम आहार होना अत्यन्त आवश्यक है। कृत्रिम भोजन में मछली के लिये आवश्यक सभी अवयव उचित मात्रा में जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खनिज लवण और विटामिन आदि मिश्रित रहते हैं। पर्वतीय क्षेत्र की नदियों व झीलों में उपलब्ध प्राकृतिक भोजन कपामे शीघ्र वृद्धि व अच्छे मत्स्य उत्पादन योग्य नहीं माना जाता है। इसलिये तालाबों में मत्स्य पालन हेतु उचित दर से कृत्रिम भोजन दिया जाना चाहिए। यह भोजन मत्स्य अवस्था के आधार पर अलग–अलग ढंग से दिया जा सकता है। फ्राई अवस्था में भोजन का सूखा चूर्ण बनाकर जल सतह में छिड़क देना चाहिए। अंगुलिका अवस्था में मिश्रित कृत्रिम भोजन का घोल बनाकर तालाब के चारो ओर छिड़क देना चाहिए। अंगुलिका अवस्था के बाद की अवस्था में दो विधियों से भोजन दिया जा सकता है। पहली विधि में भोजन को मिट्टी के बर्तनों में भिगो कर तालाब के निश्चित स्थानो पर डुबो दिया जाता है दूसरी विधि में नाइलोन के बोरे (चूने या उर्वरक के) की तली में 10–15 छिद्र किये जाते हैं। उस बोरे में भोजन रखकर एक बाँस सीधा गाड़कर उसपर बोरे को बाँध देते हैं। बोरा जमीन से 20 इंच ऊपर रहना चाहिए। भोजन के समय तालाब मे जल प्रवाह रोक देना चाहिए। यह विधि पर्वतीय क्षेत्रों के जल प्रवाहित तालाबों के लिये सर्वोत्तम विधि है। आधुनिक स्वचालित भोजन देने के यंत्रो को भी विकसित कर लिया गया है। जिससे आवश्यकतानुसार भोजन तालाब में आ जाता है ओर भोजन

के दुरूपयोग की संभावनायें कम हो जाती हैं (तालिका–3)।

मत्स्य बीज उत्पादन

पुरानी पारम्परिक तरीकों में मत्स्य बीज नदियों व अन्य जल धाराओं से फ्राई या अंगुलिका के रूप में एकत्रित कर तालाब में पाला जाता है। जिसमें अच्छी गुणवत्ता का बीज नहीं मिल पाता है। अतः मछली के बीज का उत्पादन वैज्ञानिक विधि द्वारा किया जाना चाहिए। यह विधि दो प्रकार की हो सकती है। प्रथम पारम्परिक हापा विधि है जिसके द्वारा इस क्षेत्र के मत्स्य पालक अपने तालाब में भी मत्स्य बीज का उत्पादन कर सकते है। दूसरी विधि आधुनिक सर्कुलर हैचरी की है जिसमें मत्स्य को कृत्रिम ढंगों जैसे पीयूष ग्रिन्थ इन्जेक्शन द्वारा अथवा ओवाप्रिम एवं ओवाटाइड हार्मोनों से उत्प्रेरित कर स्वस्थ व उच्च गुणवत्ता वाले मत्स्य बीज का उत्पादन किसानों द्वारा उपलब्ध किया जा सकता है।

मछलियों के रोग

मत्स्य के वातावरण में थोड़ा बहुत परिवर्तन मत्स्य पालन को अधिक प्रभावित नहीं करता है लेकिन अधिक प्रदूषण इसके लिये हानिकारक होता है। गहन मत्स्य पालन में अपेक्षाकृत अधिक रोगों का प्रकोप पाया जाता है। कम तापमान के दौरान ही मत्स्य रोगों का आक्रमण होता है इसलिये समय–समय पर तालाब के पानी व मछलियों का परीक्षण अवश्य करना चाहिए। शीतकाल में तालाब में जाल चलाना चाहिए। रोग का संक्रमण होने पर तुरन्त नियत मात्रा में चूना डालना चाहिए। पोटेशियम परमैग्नेट का 5 प्रतिशत घोल और वालमिड का उचित दर से छिड़काव रोग नियंत्रण में सहायक सिद्ध होता है।

मछलियों का शिकार व विपणन

तालाब का अच्छा प्रबन्ध मत्स्य शिकार व विपणन में बहुत लाभकारी होता है। गहन मत्स्य पालन में लगभग एक साल में मछलियां बेंचने लायक हो जाती हैं। इस पद्धिति में मछलियां एक समान वृद्धि करती हैं इसलिये इन्हें पोषण तालाब से विपणन तालाब में रख देनी चाहिए। मत्स्य शिकार के लिये सैदव जाल (ड्रेग नेट) का ही उपयोग करना चाहिए। जाल को प्रयोग करने से पहले पोटेशियम परमैग्नेट के 5 प्रतिशत घोल में 10 मिनट तक डुबा लेना चाहिए, इससे मत्स्य तालाब में किसी प्रकार के संक्रमण को होने से रोका जा सकता है। पर्वतीय क्षेत्र में कुछ ब्राह्मण तथा कुछ वैश्यों को छोड़कर प्रायः सभी लोग मछली खाते हैं इसलिये यहां पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य विपणन में कोई बड़ी समस्या नहीं हो सकती है।

तालिका 1: अच्छे उत्पादन के लिये तालाब की भौतिक व रासायनिक गुणों की विशेषता

पी0 एचमान	07–09
घुलित ऑक्सीजन	06–11 पी0 पी0 एम0
अविलता	150–200 पी0 पी0 एम0
क्षारीयता	90–190 पी0 पी0 एम0
नाइट्रेट	0.2–0.6 पी0 पी0 एम0
फास्फेट	0.1–0.4 पी0 पी0 एम0

तालिका 2: मत्स्य पालन में प्रजातियों का संचय अनुपात (संचय दर 2500 अंगुलिकाएं प्रति 0.5 हेक्टेयर)

असन स्वभाव	प्रजाति	6 प्रजाति संवर्धन
सतहभक्षी	सिल्वर कार्प	300–500
	कतला	250–400
मध्य सतहभक्षी	महाशीर	300–500
	रोहू	300–600
तलभक्षी	कामन कार्प	100–300
	साइजोथोरेक्स	100–200

तालिका 3: 2500 अंगुलिकाओं के लिये कृत्रिम भोजन की औसत मात्रा किग्रा0 प्रतिदिन

अवधि	कृत्रिम आहार किग्रा0 प्रतिदिन
प्रथम 120 दिन	1.5
द्वितीय 90 दिन	3.0
तृतीय 90 दिन	4.5
चतुर्थ 90 दिन	6.0
कुल भोजन मात्रा	1500

मणिपुर में देशी मछली की खेती : एक जीत की स्थिति

खांडेम्बम विक्टोरिया चनु, *सापाम जीतेन सिंह एवं डिम्पल ठाकुरिया
*मत्स्य अधिकारी, चांदेल, मणिपुर
भा.कृ.अनु.पं–शी.मा.अनु. निदेशालय, भीमताल

भारत के उत्तर–पूर्वी राज्य मणिपुर में स्थानीय प्रजातियाँ के कई अनुष्ठानों में देशी मछली की प्रजाति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मछली राज्य में स्थानीय व्यंजनों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा भी है। वहाँ मछलियां या तो ताजी पकायी जाती है या किण्वित, धूप में सुखाकर, स्मोक्ड और मसालेदार जैसे अन्य रूपों में। मणिपुर में, मछली की खेती मुख्य रूप से घाटी क्षेत्र में बेहतर विपणन सुविधा और उच्च मांग के कारण प्रचलित है। उत्पादन से अधिक वार्षिक आवश्यकता के कारण, राज्य में देश के अन्य राज्यों के साथ–साथ पड़ोसी देश म्यांमार से भी बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए मछली का आयात किया जा रहा है। मणिपुर उत्तर पूर्वी राज्यों में मछली उत्पादन में तीसरे स्थान पर है, हालांकि इसमें उच्च उत्पादन की संभावना है। इसलिए, मछली पालन को प्रोत्साहित करने और खरीदारों की सुविधा के लिए, राज्य में हर साल मणिपुर सरकार द्वारा 'मत्स्य मेला सह मत्स्य फसल' प्रतियोगिता आयोजित की जाती है। मत्स्य मेला न केवल किसानों को मान्यता देता है बल्कि किसानों को एक बाजार भी प्रदान करता है जहां वे बिचौलियों की भागीदारी के बिना अपनी उपज बेच सकते हैं। सर्वोच्च मत्स्य उत्पादकों को नकद पुरस्कार दिए जाते हैं और पेंगबा (Osteobrama belangeri) एवं ङतोन (Bangana devdevi) जैसी देशी मछलियों के सर्वोत्तम उत्पादक के लिए एक अलग पुरस्कार रखा गया है।

ओस्टियोब्रामा बेलांगेरी, जिसे स्थानीय रूप से पेंगबा के रूप में जाना जाता है, मणिपुर की राज्य मछली है। यह मणिपुर, चीन और म्यांमार के यूनान प्रांतों के लिए एक बहुत ही लोकप्रिय माध्यम/छोटी कार्प मछली प्रजाति है। यह बहुतायत से मणिपुर की लोकटक झील और नम्बुल नदी में पाया जाता था, लेकिन यह अपने प्राकृतिक आवास से विलुप्त हो गयी है। वास्तव में, लोकटक झील चिंडविन–इरावदी नदी प्रणाली से पेंगबा और अन्य प्रवासी मछलियों के लिए प्रजनन का मैदान हुआ करती थी, लेकिन बांध (इथाई बैराज) के निर्माण के कारण प्रवासी रास्ते अवरुद्ध हो गए, साथ ही मानवीय गतिविधियों के कारण निवास स्थान का क्षरण और गैर–देशी मछली प्रजातियों को लाने से देशी मछली की आबादी में गिरावट आई है। पिछले कुछ वर्षों में, मणिपुर सरकार और व्यक्तिगत मत्स्य कृषक दोनों राज्य में पेंगबा आबादी को पुनर्जीवित करने की कोशिश कर रहे हैं। आईसीएआर और राज्य के अन्य मत्स्य संगठनों ने पेंगबा मछली का तालाबों में सफलतापूर्वक प्रजनन किया है जिससे व्यावसायिक उत्पादन संचालन हुआ है। यह स्थानीय लोगों के बीच सबसे पसंदीदा मत्स्य प्रजाति है, लेकिन यह अन्य कार्प की तरह बाजार में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं है। इस मछली की जातीय परंपराओं और विशिष्ट स्वाद के कारण राज्य में बहुत मांग है। इसकी तैलीय प्रकृति और बहुत नरम मांसपेशियों के कारण, इसके स्वाद की तुलना हिल्सा के साथ भी की गई है।

पेंगबा को एक्वाकल्चर के लिए सबसे संभावित उम्मीदवार प्रजातियों में से एक माना जाता है और इसे अपने बेहतर स्वाद और पोषण मूल्य के कारण विविधतापूर्ण कार्प कृषि के लिए एक आदर्श प्रजाति भी माना जाता है। यह मछली अपनी शाकाहारी प्रकृति के कारण शैवाल सहित तालाब प्रणाली में उपलब्ध विभिन्न खाद्य पदार्थों को खाती है और संम्मिश्रित खेती में अच्छी तरह से बढ़ती है। पिछले कुछ वर्षों में, कई मत्स्य कृषकों ने इसकी उच्च मांग और कीमत को देखते हुए पेंगबा खेती की ओर रुख किया है, जो इसे एक जीत की स्थिति बनाता है। पेंगबा के ज्यादातर किसान राज्य के इम्फाल पश्चिम, बिष्णुपुर और थौबाल जिलों से हैं। हालांकि, उनमें से कई के पास पेंगबा की वैज्ञानिक खेती के बारे में ज्ञान का केवल मध्यम स्तर है और वे अपने स्वयं के अनुभव पर निर्भर हैं।

कुछ प्रसिद्ध पेंगबा किसानों में हियांगथांग, पश्चिम इम्फाल में स्थित "एस टॉम्बा एंड संस पेंगबा फार्म" का मालिक, सोइबम सुरचंद्र सिंह, जो एक राष्ट्रीय पुरस्कार विजेता

मत्स्य किसान हैं, और दूसरा है खाबम बाम्डियर पश्चिम इम्फाल में स्थित लाईशांबम धनचंद्र सिंह, जो एक राज्य पुरस्कार विजेता है। दोनों फार्मों ने हर साल पेंगबा का बहुत अधिक उत्पादन किया हैं। वे मणिपुर के 4 जिलों के लगभग 30 गाँवों से मछली के किसानों को बीज, प्रशिक्षण कार्यक्रम और परामर्श का लाभ प्रदान करते हैं।

पेंगबा के अलावा, इन फार्मों में एक अन्य लोकप्रिय स्थानीय मछली, ङातोन का भी बड़ी मात्रा में उत्पादन किया जाता हैं। ङातोन एक नदी तटीय मछली है जो मुख्य रूप से मणिपुर की लिटान, इरिल, थौबाल और सेकमाई नदियों और निकटवर्ती झीलों में पाई जाती है। यह मौसमी स्पॉनर्स हैं और दक्षिण पश्चिम मानसून के दौरान उथले इलाकों में स्पॉन करती है। सर्दियों के दौरान, यह झीलों और नदियों के गर्म इलाकों में चली जाती हैं। यह बॉटम फीडर हैं और कीट के लार्वा, मोलस्क, शैवाल और जन्तु प्लवकों को खाती हैं। यह प्रजाति 35–40 सेंटीमीटर की लंबाई प्राप्त करती है और आसानी से कास्ट जाल के द्वारा पकड़ा जा सकता है। स्थानीय बाजार में इसकी अच्छी सुगंध वाले मांस के कारण इसकी उच्च मांग है, और यह IMC की तुलना में बहुत अधिक कीमत प्राप्त कर सकता है।

त्योहारी के समय पेंगबा और नगाटन ज्यादातर स्थानीय मेनू को सजते हैं और इसलिए आकार के आधार पर 500 रुपये प्रति किलोग्राम से अधिक पर बेचा जाता है। कभी–कभी फार्म में जीवित मछलियां अधिक महंगी होती हैं। बढ़ती मांग और इसकी उच्च कीमत को देखते हुए, राज्य में कई मत्स्य कृषक देशी मछली की खेती को अपना रहे हैं। इसने गरीबी उन्मूलन की दिशा में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से योगदान प्रदान किया है। मणिपुर राज्य मत्स्य विभाग ने देशी मछली उत्पादन बढ़ाने के लिए वर्ष 2015–16 के दौरान चयनित लाभार्थियों के साथ राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आरकेवीवाई) के तहत एक योजना लागू की है। विभाग स्थानीय मछली पालन पर प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित करता है और देशी एवं लुप्तप्राय प्रजातियों की खेती को प्रोत्साहित करता है।

एक राज्य पुरस्कार से सम्मानित देशी मत्स्य उत्पादक, लाईशांगबम धनचंद्र सिंह

ङातोन (बंगाना देव दवी) से भरी टोकरी

35 दिन का पेंगबा बीज (ओस्टियोब्रोमा बेलंगारी)

लगभग 700 ग्राम का बाजार में बिक्री योग्य पेंगबा

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन

दिनेश मोहन, प्रीतम काला, बिपिन कुमार विश्वकर्मा एवं एन एन पांडेय
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

मत्स्य पालन वर्तमान परिवेश में एक महत्वपूर्ण रोजगारपरक व्यवसाय बनकर उभर रहा है। यह व्यवसाय वैश्विक तौर पर फलता–फूलता देख राष्ट्रीय स्तर पर भी इसे बढ़ावा देने हेतु अनेक प्रकार के कार्यक्रम जैसे कि मिशन फिंगरलिंग, नीली क्रांति, मत्स्य सम्पदा योजना आदि समय–समय चलाये जाते रहे हैं। मत्स्य पालन को कृषि के रूप में अपनाकर पर्वतीय क्षेत्र का कृषक निश्चित ही अपने परिश्रम व धन का अपेक्षित पारितोषिक प्राप्त कर पर्याप्त आय अर्जित करने के साथ–साथ सामाजिक व आर्थिक रूप से अपनी स्थिति मजबूत कर सकता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में भौगोलिक विषमताओं के कारण कुछ समय पूर्व तक मत्स्य पालन में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता था, परन्तु वर्तमान समय में इस व्यवसाय में काफी सुधार देखा जा सकता है। मत्स्य पालन एक रोचक एवं आसान व्यवसाय है जिसे कुछ महत्वपूर्ण वैज्ञानिक विधियों को ध्यान में रखकर आसानी से अपनाया जा सकता है।

मत्स्य पालन प्रारम्भ करने के पूर्व कुछ महत्वपूर्ण जानकारियों का होना अति आवश्यक है, जो कि निम्नलिखित प्रकार है।

- भूमि की उपलब्धता एवं चयन।
- मृदा का प्रकार।
- जल की उपलब्धता/स्रोत।
- पलने योग्य मछलियों का चयन।
- तालाब निर्माण की विधि।
- बीज संचयन से पूर्व तालाब का प्रबन्धन।
- बीज संचयन पश्चात तालाब का प्रबन्धन।
- मत्स्य संस्करण एवं विपणन।

इन सब महत्वपूर्ण बिंदुओं पर चर्चा करने से पूर्व यह जान लेना अति आवश्यक है कि पर्वतीय क्षेत्रों में वहाँ की भौगोलिक परिस्थितिओं के अनुरूप किस मछली को आसानी से पालकर लाभ कमाया जा सकता है।

मुख्यतया पर्वतीय क्षेत्रों में पाली जाने वाली मुख्य प्रजातिओं में ट्राउट मछली (रेनबों ट्राउट), चायनीज कार्प प्रजातियाँ, सिल्वर कार्प एवं ग्रास कार्प, माइनर कार्प प्रजातियाँ जैसे कि लेबियो डायोचिलस, लेबियो डेरो एवं कुछ पर्वतीय प्रजातियाँ स्नो ट्राउट जिसे कि असेला के नाम से भी जाना जाता है आदि प्रमुख हैं।

रेनेबों ट्राउट उच्च हिमालयी क्षेत्रों में पायी जाने वाली प्रमुख मछली है। इसके शरीर में इद्रधनुष के समान रंग एवं कृतियाँ पायी जाती हैं। यह बहुत ही लाभकारी मछली है। सामान्यता यह मछली 1500 मी0 से अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में पायी जाती है। यह अत्यधिक ठंडे पानी में जहाँ वर्ष भर औसतन पानी का तापमान 9-13 डिग्री सेंटीग्रेड में रहती है । इसके पालन हेतु क्रकीट युक्त रेश–वे का निर्माण किया जाता है, जिसमें जल प्रवाह निरंतर आवश्यक होता है।

चायनीज कार्प प्रजातियों में मुख्यतया सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प एवं कामन कार्प मैदानी क्षेत्रों के साथ–साथ पर्वतीय क्षेत्रों में पाली जाने वाली प्रमुख प्रजातियाँ हैं। इनका पालन आसानी से कंक्रीट या कच्चे तालाब या पालीटैंक में किया जा सकता है। माइनर कार्प प्रजातियाँ जैसे कि लेबियो डेरो लेबियो डायोचिल्स, बैगाना डेवडबी आदि प्रमुख हैं। हालांकि यह प्रजातियाँ पर्वतीय क्षेत्रों में अच्छा उत्पादन दे सकती है। परन्तु इसके बीज की उपल्बधता आज भी पर्वतीय क्षेत्रों के लिए एक चुनौती है।

हिमालयन पर्वतीय प्रजातियों में स्नो ट्राउट प्रजातियों में स्नो ट्राउट या असेला नाम से जाने वाली यह मछली प्रमुख है। चूकि इसकी वृद्धि दर बहुत कम होती है, एवं इसके बीज की उपलब्धता के अभाव में इसका पालन भी अभी चुनौती का विषय बना हुआ है।

स्नो ट्राउट औषधीय गुणों से भरपूर मछली है। इसमें ओमेगा 3 फैटी एसिड्स के साथ–साथ विटामिन मिनरल एवं प्रोटीन की प्रचुरता होती है। इसका उपयोग चर्म रोगों के उपचार हेतु भी किया जाता है।

पालने युक्त मत्स्य प्रजातियों की जानकारी के उपरान्त हमारे लिए तालाब निर्माण भूमि चयन व रख रखाव सबन्धी विषयों की जानकारी प्राप्त करना अति आवश्यक है, जो कि निम्न प्रकार है:

भूमि की उपलब्धता एवं चयन

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन हेतु भूमि चयन एक महत्वपूर्ण अंग है, चूकि पर्वतीय क्षेत्र भूक्षरण, बादल फटने, भूकंप बिजली गिरने आदि जैसी प्राकृतिक घटनाओं हेतु संवेदनशील क्षेत्र माने जाते हैं। अतः भूमि चयन तालाब निर्माण हेतु अत्यधिक सावधानी बरतने की आवश्यकता है। चयनित भूमि किसी नाले के बहाव व कटाव वाले स्थान से दूर होनी चाहिए, तालाब के पास प्रचुर मात्रा में जल की उपलब्धता होनी आवश्यक है। तालाब ऐसे स्थान पर हो पर जहाँ पर अवांछनीय मानवीय गतिविधियां कम से कम हो। तालाब निर्माण हेतु पक्की भूमि का चयन करना चाहिए जहाँ कि भू–क्षरण जैसी घटनाये कम हो।

मृदा का प्रकार

तालाब निर्माण से पूर्व मृदा का प्रकार जान लेना भी अति आवश्यक है। मृदा की गुणवत्ता अत्यधिक अम्लीय नही होनी चाहिए, कच्चे तालाब हेतु चिकनी दोमट मिट्टी उपयुक्त मानी जाती है।

जल की उपलब्धता/स्रोत

तालाब निर्माण के समय जल की उपलब्धता सुनिश्चित करना भी अति आवश्यक है। जल स्रोत के लिए ऐसे चयन किया जाना चाहिए जहाँ वर्षभर प्रचुर मात्रा में जल उपलब्ध हो। यदि भूमिगत जल का प्रयोग किया जा रहा हो तो यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जल में घुलित आक्सीजन एवं हाइड्रोजन आयन सांद्रता उपयुक्त है या नही, सामन्यतयाः घुलित आक्सीजन की मात्रा 4 मिली ग्राम/लीटर से अधिक तथा हाइड्रोजन आयन साद्रता 6.5 से 8.5 के मध्य होनी चाहिए।

पालने योग्य मछलियों का चयन

सामान्यतः पर्वतीय क्षेत्रों में पाली जाने प्रमुख प्रजातियों में सिल्वर, ग्रास व कामन कार्प है, मछलियों का संचयन या पालन बाजार की मांग के आधार पर भी किया जा सकता है। उच्च हिमालयी क्षेत्रों में ट्राउट मछली को अधिक पसंद किया जाता है।

तालाब निर्माण की विधि

चयनित मछलियों के अनुरुप ही तालाब का निर्माण किया जाता है।

जैसे कि ट्राउट मछली हेतु रेशवे व कार्प मछली हेतु आयताकार के तालाब निर्मित किये जाते हैं।

वर्तमान समय कंक्रीट/सीमेंट के बने तालाबों के स्थान पर सिलपोलीन से बने पालीटैंक का निर्माण भी किया जा रहा है। जो कि अधिक महत्वपूर्ण एवं जल संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

बीज संचयन से पूर्व तालाब प्रबंधन

तालाब में पानी भरने के पश्चात तथा बीज संचयन से पूर्व पानी की गुणवता बनाये रखना भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है। चूकि प्रारभिक अवस्था में मछली भोजन के रुप पानी में उपस्थित पादप एवं जंतु प्लवकों पर निर्भर रहती है। इन प्लवकों के उत्पादन के लिए बीज संचयन से दो सप्ताह पूर्व तालाब में गोबर डालना अति आवश्यक है। यह उर्वरक का कार्य करता है, जिसके फलस्वरुप जंतु एवं पादप प्लवकों की उत्पति होती है।

बीज संचयन

जन्तु एवं पादप प्लवकों की उपलब्धता के पश्चात ही मत्स्य बीज का संचयन करना चाहिए। मत्स्य बीज आसानी से जिले के मत्स्य विभाग द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। मत्स्य बीज 3–4 प्रति मी.^{2} की दर से संचय किया जाना चाहिए।

मछली का भोजन

मछली का भोजन संचयित मत्स्य प्रजातियों पर निर्भर करता है। जैसे कि ट्राउट मछली के लिए उच्च प्रोटीन युक्त (40%) आहार को वरियता दी जाती है। उसी प्रकार कार्प प्रजाति की मछलियों को मध्यम प्रोटीन युक्त (22-25%) फीड दिया जाता है। ग्रास कार्प जैसी मछलियाँ घास, एजोला इत्यादि भी आसानी से भोजन के रुप में ग्रहण करती हैं।

बीज संचयन के पश्चात तालाब का प्रबन्धन

बीज संचयन के पश्चात मछलियों की अच्छी वृद्धि एवं उत्तम स्वास्थ हेतु तालाब का रख रखाव अत्यंत आवश्यक है, जिसमें पानी की गुणवत्ता सुनिश्चित रखना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए पानी की नियमित जांच करना महत्वपूर्ण है। साथ ही साथ मछलियों की वृद्धि दर एवं स्वास्थय को जानने हेतु भी कुछ समयांतराल में जांच करना अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। पानी में घुलित आक्सीजन एवं हाइड्रोजन आयन सांद्रता तथा अमोनिया के स्तर का भी नियमित रुप से परिक्षण होना आवश्यक है। मछलियों की विभिन्न प्रकार के परभक्षी एवं पक्षियों से बचाने हेतु तालाब के ऊपर फैन्सिंग का निर्माण भी करना चाहिए।

मत्स्य प्रसंस्करण एवं विपणन

मत्स्य बीजों के संचयन के पश्चात अन्य आहार एवं सही देखरेख के आधार पर छः से आठ महीने के भीतर इन्हे बेचने योग्य बनाया जा सकता है। मत्स्य प्रंसस्करण एवं विपणन मत्स्य पालन का अत्यंत अहम भाग है। मत्स्य प्रसंस्करण हेतु मछली का आचार कटलेट, मत्स्य बाल आदि बनाकर बाजार की मॉग के आधार पर बेचा जा सकता है एवं सीधे मत्स्य विपणन हेतु मंडी अथवा निकटवर्ती बाजार में मछलियों के बारे में उपयोगी जानकारी प्रदान करने के लिए बेचा जा सकता है।

मत्स्य पालन तथा तालाब निर्माण मत्स्य बीज एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मत्स्य पालन हेतु समय समय पर मत्स्य विभाग द्वारा अनेक प्रकार के जागरुकता अभियान चलाये जाते हैं। जिसमें विभिन्न प्रकार के निर्माण हेतु अनुदान राशि एवं अन्य जरूरी सामग्री जैसे मत्स्य बीज, जाल एवं आवश्यक उपकरण मत्स्य विभाग द्वारा प्रदान किये जाते हैं।

नाम में क्या रखा है? जिसे हम गुलाब कहते हैं
उसे किसी और नाम से पुकारें तो भी वह
उतना ही अच्छा महकेगा

—अब्दुल कलाम

विकास खण्ड भीमताल में मत्स्य पालन की सम्भावनाऐं

रश्मि रावत
राज्य मत्स्य विभाग, भीमताल

मत्स्य पालन एक ऐसा व्यवसाय हैं जिसे भारत सरकार ने वर्ष 2020 में अत्यधिक रोजगार परक उत्पादन/कृषि के रूप में प्रोत्साहित किया है। प्राचीन काल से आज तक देखा जाय तो मत्स्य पालन जल की अधिकता वाले क्षेत्रों में कृषि के साथ–साथ मुख्य व्यवसाय की तरह अपनाया जाता रहा है। अंतराष्ट्रीय स्तर में भी मत्स्य पालन का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। भारत सरकार द्वारा लक्ष्य निर्धारित किया गया है कि देश के मात्स्यिकी उत्पादन में वर्ष 2020 तक कम से कम 50 टन लाख की बढ़ोत्तरी होनी चाहिए। इसके लिये न सिर्फ वैज्ञानिक तकनीकी बल्कि जन साधारण की मत्स्य पालन में सहभागिता जरूरी है। देश के विभिन्न क्षेत्रों तक मत्स्य पालन की बुनियादी सुविधा संसाधनों का क्षमता के अनुसार समुचित उपयोग सुनिश्चित किया जाना भी इस क्रम में आवश्यक है।

विश्व मत्स्य उत्पादन में भारत दूसरे स्थान पर है। वर्तमान में देश में लगभग 1.5 करोड़ लोग आजीविका हेतु मत्स्य पालन से जुड़े है। मत्स्य क्षेत्र की भागीदारी लगभग 11 प्रतिशत और कृषि जी.डी.पी. में लगभग 5.15 फीसदी है अतः सरकार द्वारा इस क्षेत्र पर अब भरपूर ध्यान दिया जा रहा है। इस क्रम में नील क्रांति मिशन को तैयार कर उस पर अमल किया जा रहा है।

इस क्रम में उत्तराखण्ड में मत्स्य उत्पादन की स्थिति सोचनीय है। उत्तराखण्ड में बाजार स्तर में सर्वे करने पर आज भी मत्स्य उत्पादन की बड़ी मांग की भरपाई अन्य प्रदेशों से की जा रही है। जल संसाधना से भरपूर हमारा प्रदेश मत्स्य पालन की अपार सम्भावनाओं से भरा है। मत्स्य विभाग उत्तराखण्ड द्वारा इस दिशा में अत्यधिक कार्य किया जा रहा है। जिसका परिणाम कुछ वर्षों में स्वयं सामने आयेगा।

उत्तराखण्ड का नैनीताल जिला भी जल संसाधनों से भरपूर है जिले में 2000–2020 तक मत्स्य पालन हेतु लगभग 300 परिवारों को इस व्यवसाय से जोड़ा गया है। नैनीताल के विकास खण्ड भीमताल में जल संसाधन भरपूर मात्रा में उपलब्ध है। नदियों तथा झीलों से निकले हुए जल में मत्स्य पालन की अपार सम्भावनाऐं है। वर्तमान में भीमताल लगभग 120 तालाब मत्स्य पालन में संलग्न है। परन्तु व्यवसायिक रूप से उत्पादन हेतु लगभग 20–25 तालाब ही है। लोगो द्वारा तालाब से मत्स्य पालन कर प्रोटीनयुक्त भोजन अपने परिवार को उपलब्ध कराया जाता है। अतः वर्तमान में प्रोटीन युक्त भोजन के साथ–साथ मत्स्य पालन के व्यवसायिकरण हेतु मत्स्य पालन विभाग नैनीताल, भीमताल प्रयासरत है।

वर्ष 2020–21 में मत्स्य पालन विभाग का लगभग 60–70 प्रतिशत बजट का व्यय भीमताल विकासखण्ड के सलड़ी, हरिनगर, ढुंगसिल, खैरोला, पांडे व हैडिया गांव, सोन गांव इत्यादि ग्राम सभाओ, जिनमें भीमताल झील से निकलने वाले भूमिगत जल का मत्स्य पालन में उपयोग किये जाने की अपार सम्भावनाऐं है, किया जाना सुनिश्चित किया गया है। जिसका परिणाम 2020–21 के मत्स्य उत्पादन में बढोत्तरी के रूप में आने हेतु आशान्वित है।

वर्तमान में भीमताल विकास खण्ड के ढुंगसिल ग्राम सभा में श्री हेमचन्द्र आर्या नाम का मत्स्य पालक जिसके पास लगभग 4 तालाब 100 वर्ग मी. के है. द्वारा वर्ष 2016–17 से मत्स्य पालन विभाग भीमताल से जुड़े है। विभाग द्वारा उनकों समय–समय मत्स्य बीज और आहार वे अन्य आवश्यक वस्तुऐं उपलब्ध कराई जा रही है। हेमचन्द्र आर्या जी इससे पूर्व गांव में मजदूरी का कार्य करते थे परंतु आज मत्स्य पालन के साथ–साथ अन्य व्यवसाय अपनाकर वे एक व्यवसायिक मत्स्य पालक व सब्जी उत्पादक के रूप में सम्मानित जीवन जी रहे है। उनके द्वारा बताया गया कि 300/प्रति किलो की दर से वि.ख. भीमताल के पर्यटकों, होटलों इत्यादि में उनके द्वारा मछली उपलब्ध करायी जा रही है। प्रतिवर्ष लगभग 3–4 कुण्टल मछली उत्पादन उनके द्वारा वर्तमान में लिया जा रहा है। इसी प्रकार से हरीनगर सलड़ी के अनेक मत्स्य पालकों द्वारा मत्स्य पालन

को आजीविका का साधन बनाया गया है। सरकार की दूरदर्शिता व जनसहभागिता से विकास खण्ड भीमताल के हरीनगर सलड़ी में हरीनगर सलड़ी मत्स्य उत्पादन व विपणन मत्स्य जीवी सहकारी समिति सलड़ी भीमताल के सभी सदस्यों द्वारा मत्स्य पालन किया जा रहा है। वर्तमान समय में नीली क्रान्ति योजना व प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना के अन्तर्गत विभिन्न योजनाओं द्वारा मत्स्य पालन को बढावा दिया जा रहा हैं। आने वाले वर्ष में मत्स्य पालन के क्षेत्र में अपार सम्भावनाऐं है जिस हेतु मत्स्य मत्स्य विभाग, मत्स्य पालक, भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल पूर्ण रूप से प्रयासरत है।

यदि आप सच बोलते हैं तो

आपको कुछ याद रखने की जरुरत नहीं रहती

– मार्क हेवन

मत्स्य पालन के लिए पॉलीटैंक का निर्माण

आर. एस. पतियाल, *प्रेम कुमार एवं सुमन्त मलिक
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल
*भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

आज मत्स्य पालन ने एक औद्योगिक स्वरूप प्राप्त कर लिया है। मत्स्य पालन व्यवसाय से लाभ प्राप्त करने के लिये सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि मत्स्य प्रक्षेत्र का निर्माण उचित हो। मत्स्य पालन के लिये पॉलीटैंक निर्माण के लिये निम्न पहलुओं का ध्यान देना चाहिए।

1. स्थान का चयन

मत्स्य पालन के लिए पॉलीटैंक के निर्माण के उपयुक्त स्थान का चयन करना अति आवश्यक है। यह ऐसे स्थान पर होना चाहिए जहां परिवहन की व्यवस्था हो आवागमन के साधन हों, जगह बाढ़ग्रस्त न हो तथा पानी का स्त्रोत व जल निकास की समुचित व्यवस्था हो। अन्य सुविधाएं जैसे बिजली आदि की समुचित व्यवस्था हो तो अच्छा है।

पॉलीटैंक का स्थान ऐसी जगह होना चाहिए जहां कम से कम भूमि पर प्रक्षेत्र बनाया जा सकता है। ढलान वाले क्षेत्र जहां पर प्राकृतिक गढ्ढे होते हैं ऐसे स्थानों पर कम लागत में पॉलीटैंक बनाया जा सकता है। मत्स्य प्रक्षेत्र के लिए स्थान चयन करते समय हमें मिट्टी तथा पानी की गुणवत्ता की जांच कर लेनी चाहिए।

2. पानी के स्त्रोत

पॉलीटैंक में पानी भरने के लिए केवल वर्षा पर निर्भर नहीं रहा जा सकता। इसके लिये अन्य जल स्त्रोत जैसे सिंचाई नहर पर नलकूप आदि का प्रक्षेत्र के पास होना आवश्यक है। तालाब में पानी की महत्वपूर्ण भूमिका है इसलिये पानी की रासायनिक जांच करना भी अति महत्वपूर्ण है। जांच के लिये पानी की मात्रा 1 ली. होनी चाहिए जो एक साफ बोतल में भरकर उसी दिन प्रयोगशाला में पहुंचा देना चाहिए।

3. जल प्रवेश तथा निकासी द्वार

पॉलीटैंक में एक जल प्रवेश तथा निकासी द्वार आवश्यक है। प्रवेश तथा निकासी द्वार से पानी तालाब में भरा तथा निकाला जा सकता है। प्रत्येक प्रवेश तथा निकासी द्वार पर लोहे या नाइलोन की बारीक जाली होनी चाहिए जिससे तालाब में पल रही मछलियां बाहर नहीं जा सकती और बाहर की अनावश्यक मछलियां अंदर नहीं आ सकती। तालाब में प्रवेश द्वार की स्थिति जल स्तर से ऊंची होनी चाहिए और निकासी द्वार तालाब के तली में सबसे निचले स्तर पर होना चाहिए।

4. तालाब निर्माण एवं संरचना

बांध बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि मिट्टी में वनस्पति व जैविक वस्तुएं न हों और मिट्टी अच्छे किस्म की हो जो पानी का रिसाव न होने दे। बांध बनाने के लिये जिस मिट्टी का उपयोग किया जाए उसमें 15–25 प्रतिशत रेतीली मिट्टी, 69–80 प्रतिशत बलुई मिट्टी, 3–10 प्रतिशत चिकनी मिट्टी होनी चाहिए। इससे बांध में दरार पड़ने की सम्भावनाएं कम हो जाती है।

बांधों की ऊपर की चौड़ाई 2–3 मी. रखना सुविधाजनक रहता है। तालाब निर्माण में तटबंधों की ऊचाई और तालाब के माप पर निर्भर करता है। साधारणतः आधार और ऊंचाई का अनुपात तालाब के बाहरी ओर 1:5:1–1:1 तक रखा जाता है। जबकि अंदर की ओर यह अनुपात 2:1 होता है जिसे आवश्यकतानुसार 4:1 तक बढ़ाया जा सकता है। तालाब का तल इस प्रकार का होना चाहिए कि उसका झुकाव निकासी द्वार की तरफ हो जिसे आवश्यकता पड़ने पर आसानी से खाली किया जा सके। प्रायः यह झुकाव प्रति 100 मी. पर 0.1मी. का दिया जाता है।

5. तालाब निर्माण

तालाब निर्माण के लिए सर्वप्रथम जगह पर लगे वृक्ष व झाड़ियों आदि को काट कर साफ किया जाता है तत्पश्चात साफ की हुई जमीन के ऊपर चूने द्वारा तालाब के आकार को देखकर बांधों के स्थान पर निशान बनाया जाता है। निशान लगाने के बाद भूमि खुदाई आरम्भ करें तथा बांध के स्थान पर मिट्टी डालें। जब मिट्टी की पर्त एक फिट ऊंची हो जाए तो उस पर पानी का

छिड़काव करते हुए लोहे के रोलर से दबाना चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक मिट्टी की पर्त को अच्छी तरह दबाना चाहिए जिससे की बांध मजबूत बने। बांध निर्माण के समय प्रवेश द्वार और निकास द्वार बना लेना चाहिए। 2–3 दिन के बाद इसमें बांध के अंदरूनी सतह पर चिकनी मिट्टी का लेप लगा कर पानी भरने की प्रक्रिया करनी चाहिए।

1. तालाब खोदने के बाद तली तथा सतह से अवांछनीय खरपतवार, पेड़ों की जड़ तथा पत्थरो को निकाल दें।
2. तालाब के आकार के हिसाब से पौलीशीट बिछायी जाती है। पॉलीशीट बंधों के ऊपर बिछाकर उस पर मिट्टी की एक मोटी परत चढ़ा देनी चाहिए जिससे पॉलीशीट को नुकसान न पहुँचे।
3. ध्यान रहे कि पौलीशीट 100 प्रतिशत जल रोधी, मौसम रोधी एवं अल्ट्रावायलेट रोधी होनी चाहिए।
4. तलाब में पानी की आपूर्ति तथा जल निकास की व्यवस्था करनी चाहिए।
5. पौलीशीट के ऊपर छः इंच उपजाऊ मिट्टी की परत बिछा देनी चाहिए।
6. इस प्रकार तालाब मत्स्य पालन के लिए तैयार कर लिया जाता है।

मत्स्य पालन हेतु पॉलीटैंक

हिमालयी क्षेत्रों में मत्स्य पालन एक स्वरोजगार

एम. एस. अख्तर, सी.जी. अलेक्जेंडर एवं शिवा सी.
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल

हिमालय की श्रृंखला में बसा उत्तराखण्ड अपनी कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में अपार प्राकृतिक वन एवं जल सम्पदा संजोये है। वन सम्पदा विश्व में जैविक विविधता में अपना विशेष स्थान रखती है। दूसरी ओर प्राकृतिक जल सम्पदा विभिन्न प्रकार की मत्स्य एवं जलीय सम्पदा में विशिष्टता के लिए अत्यन्त विविधता पूर्ण है। परन्तु अभी भी हम अपनी जल सम्पदा का पूर्ण उपयोग उत्तराखण्ड के विकास में नहीं कर पा रहे है। जल संरक्षण एवं आधुनिक मत्स्य तकनीकी की योजनाओं के अभाव में हम अभी तक अपने जलीय संसाधनों का उपयोग नहीं कर पा रहे है। यदि स्पष्ट रूप से स्थान एवं जलवायु के अनुसार पर्वतीय क्षेत्रों हेतु मात्स्यिकी की श्रेणियों को निर्धारित कर सुदूरवर्ती गांवां में जहां ग्रामीण मत्स्य पालन के इच्छुक हों, वैज्ञानिक विधि को ध्यान में रखते हुए परियोजनाऐं लागू करवायी जाए तो यह अवश्य ही कृषकों को स्वरोजगार के साथ पौष्टिक भोजन भी प्रदान करेगा। यद्यपि पर्वतांचल में पिछले 2 दशकों से मत्स्य पालन ने गति पायी हैं परंतु यह संतोषप्रद नहीं है।

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर राज्य जैव विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद देहरादून के आर्थिक सहयोग से जन्तु विज्ञान विभाग, राजकीय स्नात्कोत्तर महाविद्यालय पिथौरागढ़ द्वारा जनपद के बेरीनाग तहसील के नागलिंग एवं चौकोड़ी ग्रामों में बेरोजगारों की सुविधानुसार उन्हें मुर्गी सह मत्स्य एवं गाय सह मत्स्य पालन करवाया गया। 2 साल तक प्रतिमाह पानी का परीक्षण–पी.एच., तापमान, ऑक्सीजन, मुक्त कार्बनडाई ऑक्साइड, कठोरता, प्लवकों का आकलन एवं विभिन्न प्रकार की मत्स्य प्रजातियों ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प एवं कॉमन कार्प का भार किया गया।

हमने अपने अध्ययन में पाया कि गाँव में गरीबी है, वह स्वयं तालाब निर्माण नहीं कर सकते हैं, इसलिए हमने तालाब निर्माण में जिलाधिकारी महोदय, पिथौरागढ़ की सहायता से तालाब निर्माण मनरेगा के तहत करवाया हमने अपने दो वर्षीय अध्ययन में पाया कि मुर्गी सह मत्स्य पालन से कृषकों/नवयुवकों को गाय पालने से 2 गुना ज्यादा लाभ प्राप्त हुआ। मत्स्य तालाब कृषकों की जमीन उपलब्धता के आधार पर बनाए गए। हमने पाया कि 100^2 मी. के तालाब में प्रतिवर्ष मुर्गी सह मत्स्य पालन से 10000–12000 रूपया प्राप्त हुआ। परन्तु गाय सह मत्स्य पालन से 5000–6000 रूपया मात्र प्राप्त हुआ। ग्रास कार्प की वृद्धि सबसे ज्यादा 950 ग्राम से 1 किग्रा प्रतिवर्ष, सिल्वर कार्प 600 ग्राम से 700 ग्राम एवं कामन कार्प 400 ग्राम से 450 ग्राम मुर्गी सह मत्स्य पालन में तथा 800–900 ग्राम ग्रास कार्प, 500 ग्राम से 550 ग्राम सिल्वर कार्प एवं 300 ग्राम से 350 ग्राम कॉमन कार्प पायी गयी। यह उल्लेखनीय है कि मुर्गी सह मत्स्य पालन में गाय सह मत्स्य पालन की अपेक्षा प्लवक अधिक प्राप्त हुए थे। क्योंकि मुर्गी की विष्ठा में नाईट्रोजन की मात्रा अधिक होती है, परिणाम स्वरूप वृद्धि अच्छी हुई। इस अध्ययन में हमने पाया कि प्राथमिक उत्पादकता मुर्गी सह मत्स्य पालन में अधिक है। जो 1030–2750μ/ली. है। दिसम्बर में सबसे कम व नवम्बर में सबसे अधिक है। दोनो ही प्रकार के मत्स्य पालन में रोटीफर–60% मुर्गी सह मत्स्य पालन में 52% गाय सह मत्स्य पालन में जो मुख्यतः ब्रेकिआनस प्रजाति, फिलियो डोना प्रजाति, नोटोलुक्टा प्रजाति, प्रोटोजोआ द्वितीय स्थान पर मुर्गी सह मत्स्य पालन में 20% एवं 21% गाय सह मत्स्य पालन में, जो मुख्यतः एस्पिडिस्का प्रजाति, वोर्टिसिला प्रजाति, एक्टिनोस्फोरियम प्रजाति, कोल्पस प्रजाति, पैरामिशियम प्रजाति, सेन्ट्रोपिक्सिस प्रजाति आदि। कोपिपॉड्स भी अच्छी मात्रा में पाये गये। मुर्गी सह मत्स्य मत्स्य पालन में 16% तथा गाय सह मत्स्य पालन में 11% । जो मुख्यतः साइक्लोप्स प्रजाति, मीसो साइक्लोप्स प्रजाति के थे। इसके अतिरिक्त क्लोडोसीरस मुर्गी सह मत्स्य पालन में 50% एवं 43% गाय सह मत्स्य पालन में जो कोस्मेरियम प्रजाति, नेट्रियम प्रजाति, यूलोथ्रिक्स आदि द्वितीय स्थान पर। बेसिलेरोफाइसी मुर्गी सह मत्स्य पालन में 10.5% एवं 13.5% गाय सह मत्स्य में, जिसमें नॉस्टाक, एनाबीना प्रजाति। युग्लोनोफाइसी

की मात्रा मुर्गी सह मत्स्य पालन में 9.5% एव 8.8% गाय सह मत्स्य पालन में सिम्बेला प्रजाति। साइनोफाइसी मुर्गी सह मत्स्य पालन में 11.5% एवं 9.81% गाय सह मत्स्य पालन में पायी गयी। वनस्पति प्लवक एक वर्ष में 2 बार बहुतायत में पाये गये। क्लोरोफाइसी नवम्बर माह में अत्यधिक मात्रा में पायी गयी 1398–1708μ/ली. जंतु प्लवक की मात्रा वनस्पति प्लवक की अपेक्षा कम पायी गयी। दिसम्बर से जनवरी माह में जंतु प्लवक, वनस्पति प्लवकों की अपेक्षा अधिक पाये गये। मुर्गी की विष्ठा प्लवकों को अच्छा तलछट प्रदान करती है। सड़ी गली चीजों से सूक्ष्म जीव अपना भोजन प्राप्त करते हैं। मछली एवं मुर्गी के उत्पादों को कृषकों द्वारा स्वयं प्रयोग में लाया गया और शेष बिक्री की गयी। मछली की विभिन्न प्रजातियों की मृत्यु दर 5-10% रही। मुर्गी सह मत्स्य पालन में अच्छा उत्पाद हुआ तथा भोजन भी कम प्रयोग किया गया। क्योंकि मुर्गी की विष्ठा ने प्रत्यक्ष रूप से भोजन एवं तालाब की उत्पादकता बढाने में सक्रिय योगदान दिया।

मछली में रोगों की रोकथाम हेतु समय–समय पर चूना एवं पोटेशियम परमेगनेट का छिड़काव पंद्रह दिन के अंतराल में किया गया, जो अत्यधिक लाभप्रद रहा।

यदि इस प्रकार सुदूरवर्ती गावों में जाकर कृषकों एवं बेरोजगार नवयुवकों को मत्स्य पालन के प्रति प्रोत्साहित किया जाए तो उत्तराखण्ड के विकास में मील का पत्थर साबित होगा, जो कृषक वैज्ञानिक विधि से मत्स्य पालन कर रहे है वह प्रतिवर्ष रू. 1600–2000/नाली प्राप्त कर रहे हैं, आवश्यकता है इन्हें प्रोत्साहित किया जाए व इनकी परेशानियों का निराकरण किया जाए। जिस क्षेत्र में हमने कार्य किया वहाँ पर कृषक इस कार्य को करना चाहते हैं, परंतु पर्वतीय क्षेत्रों में मुख्यतः मत्स्य बीज की उपलब्धता नहीं हो पा रही है, जो मत्स्य पालन में सबसे बड़ी परेशानी है। यहाँ के कृषकों को मत्स्य बीज उपलब्ध कराने की कोशिश महाविद्यालय द्वारा समय–समय पर की जा रही है। जिन कृषकों को बीज उपलब्ध होता है वह अच्छा उत्पादन कर लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

अंत में हम अपने शोध पत्र द्वारा शासन से अनुरोध करना चाहेंगे कि वह उत्तराखण्ड में मात्स्यिकी पर भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार परियोजनाएं संचालित कर उत्तराखण्ड की जल सम्पदा का उपयोग कर सुदूरवर्ती क्षेत्रों में नवयुवकों/कृषकों को रोजगार एवं पौष्टिक आहार उपलब्ध कराकर कुपोषण को दूर करने में सहयोग प्रदान करें।

पर्वतीय क्षेत्रों में किसानों की आय वृद्धि के लिए आधुनिक मत्स्य पालन

नित्यानन्द पाण्डेय एवं बिपिन कुमार विश्वकर्मा
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

देश के पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन के अनुसंधान एवं विकास के उद्देश्य से शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल की स्थापना की गई है। इस निदेशालय द्वारा भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में सतत् मत्स्य उत्पादन में वृद्धि हेतु विभिन्न अनुसंधानात्मक एवं विकासात्मक कार्यों की पहल की गयी है। पर्वतीय क्षेत्रों के शीतजल स्त्रोतों में लुप्तप्राय सुनहरी महाशीर के पुर्नवासन एवं संरक्षण के साथ–साथ शीतजल की अन्य मत्स्य प्रजातियों जैसे स्नो ट्राउट, माइनर कार्प प्रजातियां एवं सजावटी मत्स्य प्रजातियों का भी सफलतापूर्वक पुर्नवासन एव संरक्षण कार्य किया गया है। भौगोलिक स्वरूप एवं जलवायु के अनुसार हिमालय के पहाड़ी क्षेत्रों में त्रिस्तरीय मत्स्य पालन का व्यवहार है। समुद्रतल से लगभग 1600 मी0 से अधिक ऊँचाई वाले अत्यन्त ठण्डे क्षेत्र रेन्बो ट्राउट मछली पालन के लिए उपयुक्त है। मध्यम ऊँचाई (1000–1600 मी0) वाले पहाड़ी क्षेत्र विदेशी कार्प मछलियों के समन्वित व्यवहार के लिए उपयुक्त है। कम ऊँचाई (1000 मी0 तक) के तराई एवं भावर क्षेत्र सभी प्रकार की कार्प मछलियों के पालन में सहयोगी हैं।

आधुनिक मत्स्य संवर्धन की विधाओं में रेन्बो ट्राउट पालन पर्वतीय क्षेत्र के किसानों के लिए आमदनी का एक अच्छा साधन होते हुए जीविकोपार्जन का एक मुख्य आधार बनता जा रहा है। लगभग 30 वर्ग मी0 के तालाब से 1.27 लाख रूपये की सालाना आमदनी के साथ पर्वतीय क्षेत्रों के मत्स्य पालको का यह एक मुख्य आकर्षण है। पर्वतीय क्षेत्र के मत्स्य पालकों की रूचि एवं ट्राउट पालन की उत्सुकता के फलस्वरूप पिछले एक दसक में हमारे देश का ट्राउट उत्पादन 147 टन से बढ़कर 1098 टन तक पहुँच गया है जिसमें मुख्य रूप से जम्मू–कश्मीर हिमाचल प्रदेश एवं सिक्किम राज्य की भागीदारी रही है। वर्तमान में इस मछली की माँग को देखते हुए हिमालय के इन तीन राज्यों के साथ–साथ उत्तराखण्ड़ एवं अरूणाचल प्रदेश में भी इस मछली के उत्पादन की कई–गुना संभावनाएं हैं। आमतौर पर ट्राउट मछली का पालन लम्बाई युक्त पक्के तालाबों में किया जाता है। इन तालाबों को रेश–वे कहते हैं जिसमें लगातार पानी का बहाव बनाये रखना आवश्यक है। पानी के बहाव से मछली को आवश्यक धुलित ऑक्सीजन की पूर्ति होती है तथा बचा हुआ आहार एवं बिष्ठा जैसे अवांछनीय पदार्थो का लगातार बहाव के साथ निष्कासन होता रहता है। आमतौर पर इनका आकार 30 वर्ग मी0 का होता है, जिसकी लम्बाई लगभग 15 मी0 तथा चौड़ाई 2 मी0 रखी जाती है। आमतौर पर लगभग 500 किग्रा0 प्रति रेश–वे उत्पादन किया जाता है, जो कि अच्छी प्रबन्ध व्यवस्था, 100 आंगुलिकाएं प्रति घन मी0 संचय दर, उत्तम आहार व्यवस्था तथा वैज्ञानिक तौर तरिकों से 700–1000 किग्रा/रेश–वे तक उत्पादन किया जा सकता है। आधुनिकतम तकनीक का प्रसार करके रेन्बो–ट्राउट पालन की व्यापक पहल की गई है, जो कि किसानों की आय वृद्धि में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

ठण्डी जलवायु के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में भारतीय कार्प मछलियों की बढ़वार नही होती है अतः इन क्षेत्रों में विदेशी कार्प जैसे–सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प तथा कामन कार्प का समन्वित पालन किया जाता है। परम्परागत ढ़ग से इस प्रकार मछली पालकर लगभग 34 किग्रा0/100 वर्ग मी0 उत्पादन किया जाता है। शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल द्वारा विकसित पॉलीटैंक तालाबों से लगभग 70 किग्रा0/100 वर्ग मी0/वर्ष उत्पादन किया जा सकता है। तालाब में एकत्र जल का उपयोग मछली पालन के साथ–साथ सब्जी तथा बागवानी में सिचाईं हेतु भी किया जाता है। उत्तराखण्ड राज्य में इस व्यवहार का सफल प्रदर्शन किया है तथा अन्य उपयुक्त क्षेत्रों में यह तकनीक उपयोगी है।

पर्वतीय राज्यों के मैदानी क्षेत्रों तथा कम पहाड़ी क्षेत्रों में भारतीय कार्प मछलियाँ (रोहू, कतला, मिरगल) तथा विदेशी कार्प मछलियों (सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प, कामन कार्प) को लगभग 0.1–0.4 है0 आकार के कच्चे तालाबों में वर्षभर पाला जाता है तथा औसतन 3 टन/है0 उत्पादन किया जाता है। इस व्यवहार में आधुनिकतम तकनीक के

तहत तालाब की तैयारी के उपरान्त 50–80 ग्रा0 की बड़े आकार की अगुलिकाएं 5000–6000 / है0 की दर से संचय की जाती है तथा नियमित उनके वजन का 2–3ः सम्पूरक आहार दिया जाता है। जिससे कि 5–6 टन / है0 तक उत्पादन किया जा रहा है। पहाड़ी क्षेत्रों में कृषि एवं कृषि आधारित व्यवसाय ही किसानों की जीविका का मूल आधार है। सुधरी तकनीकों एवं आधुनिकतम कृषि व्यवहार से पहाड़ के किसानों की आमदनी को बढ़ाया जा रहा है। पर्वतीय क्षेत्रों की ठण्डी जलवायु में मछली लोगों के लिए उत्तम प्रोटीन आहार है तथा मछली पालन जीविकोपार्जन के लिए अत्यन्त सहयोगी है। मछली पालन पर्वतीय क्षेत्रों में न केवल उत्पादकता विविधिकरण, खाद्य एवं आर्थिक सुरक्षा प्राप्त करने में सहायक है, बल्कि जल के विवेकपूर्ण संचय के साथ जलीय संसाधनों के संर्वधन में भी उपयोगी है।

सर्कुलर हैचरी-कार्प मछलियों के बीज उत्पादन हेतु

अखिलेश कुमार यादव, शरद सिंह, अमित सिंह बिष्ट, संजय कुमार सिंह एंव ललित कुमार त्यागी

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रिय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ

आज जब देश की आबादी बढ़ती जा रही है और कृषि योग्य भूमि कम हो रही है ऐसे में जलकृषि का महत्व और योगदान बढता जा रहा है। आज देश की जनसंख्या को खाद्य सुरक्षा और पोषण केवल जलकृषि से ही संभव है। आज सरकार भी जलकृषि को काफी महत्व दे रही है और विभिन्न योजनाएं ला रही है। जिस से जलकृषि में काफी प्रोत्साहन मिल रहा है। अब लोग परम्परागत तरीके छोड़ कर वैज्ञानिक तरीके से विधिवत जलकृषि कर अच्छा मुनाफा पा रहे है। कार्प मछलियों की खेती इन दिनों काफी लोकप्रिय हो रही है इस बढ़ती लाकप्रियता के कारण कार्प मछलियों के बीज की मांग इन दिनों अधिक हो गयी है। बीज उत्पादन के पुराने तरीके इन बढ़ती मांग को पूरा कर सकने में असमर्थ हैं। अतः इस मांग को पूरा करने के लिए हैचरियों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है।

हैचरियों के उपयोग से न केवल बड़े पैमाने पर बीज उत्पादन होता है बल्कि हैचरी में कार्प मछलियों के प्रजनन के लिए अनुकूल मौसम का इंतज़ार नहीं देखना पड़ता है तथा हैचरियों में उत्पादित शिशु मछलियों की उत्तरजीविता भी बेहतर होती है। प्रारंभ में हैचरियों का बड़ा ही सरल डिजाइन हुआ करता था।

इसके व्यवसायीकरण को ध्यान में रखकर कालान्तर में इनकी कई डिजाइनें विकसित होती गयी जैसे डबल–हापा हैचरी, अर्दन पॉट हैचरी, ग्लास जार हैचरी, सिरगुर हैचरी, सी. आई. एफ. ई. डी – सिरीज हैचरी, सिन्टैक्स हैचरी, सिल्टन हैचरी, गैल्वेनाइज्ड आयरन जार हैचरी आदि। सर्कुलर हैचरी आदि हैचरियों की इसी श्रृंखला की हाल की एक कड़ी है। अन्य हैचरियों की अपेक्षा इसका प्रचालन अधिक सुविधाजनक है, साथ ही इसकी कार्यक्षमता भी अच्छी है। यही कारण है कि सर्कुलर हैचरी जलकृषकों के बीच इन दिनों काफी लोकप्रिय होती जा रही है। आंध्रप्रदेश, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, गुजरात आदि राज्यों में कई जलकृषक सर्कुलर हैचरी स्थापित कर अच्छी आमदनी प्राप्त कर रहे हैं।

सर्कुलर हैचरी की रुप–रेखा मूल रुप से चीन में विकासित की गई डिजाइन पर आधारित है। इस हैचरी में मछलियों का प्रजनन, अंडो की हैचिंग तथा स्पॉन की रियरिंग बहते हुए पानी में अर्थात नदियों जैसी अनुरुपित प्राकृतिक दशाओं में होती है।

हैचरी के लिए स्थान का चयन

1 प्रजनन तालाब हैचरी के लिए प्रस्तावित स्थान के निकट हो।

2 पर्याप्त मात्रा में साफ पानी की सुविधा हो।

3 बिजली की सुविधा भी उपलब्ध होनी चाहिए ।

4 स्थान पर आवागमन की अच्छी सुविधा उपलब्ध हो।

विभिन्न अंग

ओवर हेड टैंक

हैचरी इकाई में ओवरहेड टैंक अर्थात पानी की टंकी की आवश्यकता पानी के भंडारण के लिए होती है। जिसका उपयोग प्रजनन एंव हैचिंग टैंकों के लिए किया जाता है। ओवरहेड टैंक की जल–भंडारण क्षमता हैचरी की आवश्यकतानुसार 10 हजार से 50 हजार लीटर तक हो सकती है। इस टैंक का निर्माण प्रजनन टैंक की आधार रेखा से प्रायः 3.5 मीटर की ऊँचाई पर किया जाता है।

प्रजनन टैंक

जिसे स्पॉनिंग टैंक, ब्रीडिंग टैंक या पूल कहा जाता है, इसे ईट, कंक्रीट, रेती और सीमेन्ट से बनाया जाता है। इसकी आकृति गोलाकार, भीतरी व्यास 4 x 8 मीटर तथा ऊँचाई 1.25 मीटर से लेकर 15 मीटर तक होती है। टैंक की तली मध्य की ओर ढ़ली हुई होती है जहां पर एक निकास पाइप लगा होता

है जो अंड संग्रहण चैम्बर में खुलता है। टैंक की तली के मध्य में स्थित इस निकास द्वार पर एक छिद्रयुक्त पाइप उर्ध्व रुप से खड़ा रहता है। जिस पर नाइलोन के कपड़े की एक जाली मढ़ी होती है ताकि टैंक का पानी तो बाहर निकाल सके लेकिन अंडे न निकल पाएं।

प्रजनन टैंक में पानी की अपेक्षित स्तर बनाए रखने के लिए इसके विकास पाइप के साथ बाहर से एक ''टर्न–डाउन'' पाइप लगा होता है जो अन्ततः अंड संग्रहण कक्ष में खुलता है। इस टर्न–डाऊन–पाइप की सहायता से, पाइप को झुकाकर या उठाकर जल –स्तर को अपेक्षित स्तर पर कायम रखा जाता है। साथ ही इसके द्वारा अंडों को धीमी गति से एकत्र कर सकने की भी सुविधा उपलब्ध होती है जिससे अंडों का नुकसान कम होता है। सर्कुलर हैचरी के पुराने डिजाइनों में प्रजनन टैंक से अंडे सीधा अंडसंग्रहण कक्ष में जमा होते हैं। इन डिजाइनों में अंडों के प्रवाह को धीमा कर पाना संभव नहीं होता है, इसलिए भारी संख्या में अंडे टूट–फूट जाते हैं।

प्रजनन टैंक की भीतरी दीवार पर 40 डिग्री के कोण पर तिरछी खुलती नलिकाओं की दो लाइनें होती है जिनमें से एक तली से लगभग 0.25 मीटर की ऊँचाई पर और दूसरी 0.75 मीटर की ऊँचाई पर अवस्थित होती है। इन नलिकाओं से प्रवेश करता हुआ पानी टैंक में गोल –गोल घूमता प्रवाह उत्पन्न करता है जिससे नदियों जैसा बहाव बना रहता है।

इसके साथ ही प्रजनन टैंक की भीतर दीवार पर ऊपरी भाग में एक छिद्रदार पाइप की भी लाइन लगी होती है जिससे जेट की तरह भीतर आता पानी टैंक के पानी में न केवल घुलित ऑक्सीजन के स्तर को बढ़ाने में मदद करता है बल्कि मछलियों को उत्तेजित करने के लिए यह वर्षा की रिम–झिम फुहार का भी भ्रम पैदा करता है।

अंड संग्रहण कक्ष

प्रजनन टैंक के साथ ही एक अंड – संग्रहण कक्ष भी बना होता है। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि आमतौर पर सर्कुलर हैचरी की इकाइयों में प्रजनन टैंक और अंड – संग्रहण कक्ष का सीधा सम्पर्क होता है। लेकिन यहां प्रस्तुत किए गए डिजाइन में प्रजनन टैंक से अंडे निकास द्वार से लगे एक टर्न –डाउन पाइप द्वारा अंड –संग्रहण कक्ष में प्रवाहित किए जाते हैं। इससे अंडो को एकत्र करने तथा उनकी मात्रा ज्ञात करने में सहूलियत होती है।

हैचिंग टैंक

हैचिंग टैंक को इन्क्युवेशन टैंक के नाम से भी संबोधित करते हैं। प्रजनन टैंक की तरह ही हैचिंग टैंक की आकृति भी गोलाकार होती है। वस्तुतः गोलाकार प्रजनन एवं हैचिग टैकों की वजह से ही इस हैचरी को सर्कुलर हैचरी या सर्कुलर सीमेन्ट हैचरी की संज्ञा मिली है।

हैचिंग टैंक का भीतरी व्यास 2 से 4 मीटर और गहराई 1 से 1.25 मीटर होता है। आमतौर पर प्रत्येक प्रजनन टैंक से उत्पादित अंडो का हैच कराने के लिए दो हैचिंग टैंक बनाए जाते है। प्रत्येक हैचिंग टैंक के दो खंड होते है, एक भीतरी खंड और दूसरा बाहरी खंड। दोनों खंडो के बीच कंक्रीट अथवा इपोक्सी – कोटेड लाहे का एक फ्रेम होता है जिस पर नायलन कपड़ा मढ़ा होता है, जिससे पानी आसानी से आर–पार हो सकता है।

टैंक के भीतरी खंड का व्यास 0.5 मीटर से 1.0 मीटर होता है। हैचिंग टैंक के बाहरी खंड की तली पर पानी अन्दर आने के लिए 50 से. मी. की दूरी पर डकमाउथ – वाल्वों की तीन कतारें लगी होती हैं। इन डकमाउथों से जुड़े पाइपों की अवस्थिति धरती से समानान्तर लगभग 5 से.मी. ऊँचाई पर होती है। हैचिंग के दौरान टैंक की तली पर अंडों का जमाव न हो इसके लिए पानी को निरन्तर समरुप से प्रवाहित अवस्था में रखने के लिए डकमाउथ लगी ये सभी पाइपें एक छोड़ एक स्थान पर आपस में एक दूसरे से जुड़ी रहती हैं। हैचिंग टैंक की तली का मध्य की तरफ ढ़लाव होता है जहां एक निकास द्वार होता है, जहां से अंडों के छिलकों के टुकड़े बारीक काणों के रुप में पानी के साथ बाहर निकलते रहते हैं। टैंक में हैच किए नवजात शिशुओं को एकत्र करने के लिए यह मध्य द्वार नहीं बल्कि टैंक के बाहरी खंड से एक पाइप निकलता है जो स्पॉन संग्रहण टैंक में खुलता है।

सर्कुलर हैचरियों की अधिकांश इकाइयों में प्रजनन टैंक और हैचिंग टैंकों का आपस में सीधा सम्पर्क होता है, जिससे अंडे ग्रैविटैश्नल फोर्स से स्वतः प्रजनन टैंक से हैचिंग टैंक में

आ पहुंचते हैं। लेकिन यहां अनुभवों के आधार पर इस डिजाइन में थोड़ी तबदीली कर दी गयी है। हैचिंग टैंकों को प्रजनन टैंकों से प्रवाहित होकर हैचिंग टैंक में आ पहुंचे अंड़ो की न ता ठीक से गिनती हो पाती है और ना ही हैचिंग टैंकों में उनका समान रुप से वितरण संभव हो पाता है।

स्पॉन संग्रहण टैंक

यह एक चौकर या आयताकार टैंक होता है जो हैचिंग टैंक के निकट ही बना होता है। इसकी साइज आवश्यकतानुसार 2x1.5x1.0 मीटर से लकर 4 x 2 x 1 तक होती है। स्पॉन संग्रहण के लिए हैचिंग टैंक से निकल रहे निकास पाइप में भी एक ''टर्न–डाउन–पाइप'' लगा होता है, जिसे झुकाकर या उठाकर नवजात शिशुओं को बगैर कोई चोट या जख्म आदि दिए धीरे से एकत्र कर लिया जाता है। इस टैंक का पानी निकाला जा सकता है।

सर्कुलर हैचरी–कार्प

पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य संवर्धन

एस. अली एवं एन.एन. पाण्डे
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

कृषि की तरह मत्स्य–पालन भी एक लाभकारी व्यवसाय के रूप में प्रचलित हो रहा है। मछली केवल प्रोटीन युक्त उत्तम आहार ही नहीं, बल्कि यह किसान भाइयों के लिए कम लागत पर अच्छी आमदनी का उत्तम साधन भी है। पर्वतीय क्षेत्रों में सिमित संसाधन है, इन संसाधनों के बहुद्देशीय उपयोग से ही जीविकोपार्जन संभव है। जहाँ–जहाँ पानी के स्रोत उपलब्ध है, उन स्थानों में सफलता पूर्वक मछलीपालन किया जा सकता है।

मछली पालन कैसे करें?

मछलीपालन के लिए मुख्य रूप से एक तालाब की आवश्यकता होती है। पर्वतीय क्षेत्रों में आधी नाली या एक नाली, जो की लगभग 100 वर्ग मी0 या 200 वर्ग मी0 क्षेत्रफल होता है, इस क्षेत्रफल के मछली के तालाब बनाए जा सकते है। तालाब का आकार लगभग आयताकार होना चाहिए। ये तालाब कच्चे भी हो सकते है या फिर तालाब के पानी का रिसाव नहीं होता है तथा भरे हुए पानी को बहुत समय तक रोक कर रखा जा सकता है। साथ ही पालिथीन बिछाने से तालाब के पानी का रिसाव नहीं होता है तथा भरे हुए पानी को बहुत समय तक रोक कर रखा जा सकता है। साथ ही पॉलीथीन लगे हुए तालाबों में मछली की बढवार भी अधिक होती है। इन तालाबों की गहराई लगभग देड मी0 रखते है। पालिथीन के ऊपर 3–4 इंच मोटी की परत बिछाई जाती है। जिससे तालाब में मछली के लिए प्राकतिक वातावरण बना रहता है तथा यह मछलियों के प्राकतिक भोजन के उत्पादन में भी सहायक होता है। तालाब में लगभग आधी गहराई तक पानी भर दिया जाता है। तालाब में एक सिरे से पानी भरने तथा दूसरे सिरे से पानी निकालने की व्यवस्था करना आवश्यक हैं। ऐसा करने से किसान भाई तालाब में एकत्र हुए अतिरिक्त जल का उपयोग आवश्यकता पडने पर अपने सब्जी उत्पादन के लिए खेतों में भी कर सकते है। तालाब का ठहरा हुआ पानी सब्जी के पौधों की वृधि के लिए उत्तम रहता है। क्योंकि इसमें प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व धुले रहते है जिससे पौधो को नाइट्रोजन मिलती है।

आधी नाली के तालाब में लगभग 2–2.5 किलोग्राम चूना पानी में घोलकर तालाब में छिडक देते है। इसके 3–4 दिनों के बाद लगभग 20–25 किलोग्राम कच्चा गोबर पानी में घोलकर तालाब में डाल देते है। चूना एवं गोबर के व्यवहार के लगभग एक सप्ताह के बाद तालाब के पानी का रंग हल्का हरा हो जाता है। यह इस बात का संकेत है कि तालाब के पानी में मछलियों का प्राकतिक आहार जिसे वैज्ञानिक भाषा में प्लवक कहते हैं, प्रयाप्त मात्रा में पैदा हो चुके है। अब यह तालाब मछली के बीज डालने के लिए पूरी तरह तैयार हो चुका है।

मत्स्य बीज संचयन

पर्वतीय क्षेत्रों के नदी एवं नालों में नई प्रकार कि मत्स्य प्रजातियॉ पाई जाती है। परंतु विदेशी कार्प मछलियॉ पालन हेतु उपयुक्त है। क्योंकि यह कम तापमान पर न केवल जीवित रहती है बल्कि इनकी विकास दर भी काफी अधिक है। किसान भाई तीन प्रजाति की मछलियों को एक साथ एक ही तालाब में पाल सकते है। इनमें सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प एवं कॉमन कार्प प्रजाति की मछलियॉ उपयुक्त है। इन प्रजातियों के बीज किसी भी मत्स्य बीज उत्पादन केन्द्र अथवा हैचरी या मत्स्य विभाग से आसानी से मिल जाता है। मछली के बीज को पॉलीथीन के थैलों में भर कर लाया जाता है। इन थैलों में एक तिहाई पानी तथा शेष दो तिहाई ऑक्सीजन भरी जाती है। इन थैलों को गत्ते के डब्बे में रखा जाता है। इस तरह मछली के बच्चे सुरक्षित तालाबों तक लाये जाते है। 100 वर्ग मी0 के तालाब में 250–300 मछली के बच्चे छोडे जाते है। इनमें कुल बीज की संख्या का 30 प्रतिशत कॉमन कार्प संचय करते है। तालाब तक पहुॅचने के बाद मत्स्य बीज थैलियों को 20 मिनट के बाद मछली के बच्चों को धीरे–धीरे तालाब में छोड दिया जाता है। इस प्रकार की हानि नही होती है अन्यथा संचय के समय मछली के बच्चों की मृत्यु भी हो सकती है।

तालाब में मछलियों की देखभाल

मछली का बीज तालाब में डालने के बाद प्रतिदिन मछलियों को आहार देना होता है तथा देख रेख करनी होती है। आहार बनाने के लिए चावल की भूसी या पालिश तथा सरसों की खली की आधी–आधी मात्रा मिला लेते है तथा प्रथम माह 100 वर्ग मी0 के तालाब में 100 ग्राम आहार प्रतिदिन देते है और प्रत्येक माह 100 ग्राम आहार बढाते जाते है। इस प्रकार 12 वें माह में एक किलो 200 ग्राम आहार प्रतिदिन देते है। आहार प्रातः काल के समय दिया जाना चाहिए तथा आहार देने से एक घंटे पहले खुराक को पानी में भिगो देते है। इसके बाद आहार को लड्डू बनाकर किसी प्लास्टिक की थैली में रखकर तालाब में निश्चित स्थान पर लटका दें। इन प्लास्टिक की थैलियों में 10–12 उगंली की मोटाई के छेद बना दें। दिनभर में मछलियाँ आहार खा लेती है तथा अगले दिन खाली थैले को निकालकर साफ कर पुनः आहार भरा जा सकता है। ऐसा करने से आहार के अलावा ग्रास कार्प मछली के लिए ताजा घास या सब्जियों के बेकार हरे पत्ते को बारीक काट कर भी खिलाया जा सकता है। यह तैरता हुआ हरा चारा ग्रास कार्प पानी की सतह पर आकर बडे चाव से खाती है। इस प्रकार एक वर्ष में आधी नाली के तालाब से लगभग 600 से 800 ग्राम तक की 70 से 80 किग्रा0 मछलियों का उत्पादन किया जा सकता है, तथा बाजार में इन्हें 120 से 150 रू0 प्रति किग्रा0 की दर से बेच कर लगभग 4000 से 5000 रू0 की नगद आमदनी प्राप्त की जा सकती है। इसके अतिरिक्त किसान भाई अपने तालाब की मछलियों को अपने तालाब की मछलियों को अपने परिवार के भोजन के लिए भी उपयोग मे ला सकते है। मछली प्रोटीन का एक सर्वोतम स्त्रोत है जो की शरीर एवं मस्तिष्क के विकास के लिए अत्यधिक लाभकारी है।

मछलीपालन को और अधिक लाभकारी बनाने के लिए मत्स्य पालकों को चाहिए कि मछली के साथ मुर्गी या बतख भी पालें या फिर तालाब के पास सब्जियों का उत्पादन भी करे। तालाब की बांधों पर मुर्गीघर बनाया जा सकता है। आधी नाली के तालाब के साथ 6 से 8 मुर्गी पालना चाहिए। मुर्गी के अंडो को रोजाना बेच कर आमदनी की जा सकती है। मुर्गीघर तालाब के पास बनाने से मुर्गी का विष्ठा तालाब में जाता रहता है जो कि खाद का काम करता है तथा इससे मछली का प्राकतिक आहार यानि प्लवक पैदा होता है और मछलियॉ तेजी से बढती है। यदि बतख पालन किया जाता है तो बतख के पिंजरो को तालाब की मेंढ या बॉध पर ही रखना चाहिए जिससे बतख का विष्ठा एवं अनखाया आहार मछली के काम आ सके। बतख तालाब में विचरण करती है अतः बतखों को मछली के बीज संचय करने के तीन महीने के बाद ही रखना चाहिए। तीन महीनों में मछली के बीज उंगली की लम्बाई से बडा हो जाता है तथा बडे आकार की मछलियों को बतख नहीं खा पाती है। मछली पालन के साथ–साथ सब्जी उत्पादन भी अत्यधिक लाभकारी है। तालाब के पानी का उपयोग सब्जी के खेतों में सिंचाई के लिए किया जा सकता है तथा इससे सब्जियों की उपज बढती है।

इस प्रकार पर्वतीय क्षेत्रों के किसान भाई अपनी खेती–बाडी के साथ मछली पालन कर के दोहरी आमदनी प्राप्त कर सकते है। मछली पालन के साथ– साथ मुर्गीपालन, बतखपालन एवं सब्जी उत्पादन कर किसान भाई सफलता पूर्वक जीवन–यापन कर सकते है। इसके लिए चाहिए कि किसान भाई एक मत्स्य तालाब का निर्माण अवश्य करें, उसमें पानी भर कर स्वस्थ कार्प मछलियों का बीज संचय करे, तथा रोजाना पौष्टिक आहार देते रहे। प्रत्येक माह जाल चला कर मछली की बढवार एवं स्वास्थ्य की जॉंच भी करे। इस प्रकार मत्स्य संवर्धन एक लाभकारी व्यवसाय के रूप में किसान भाइयों के जीविकोपार्जन के लिए एक प्रमुख साधन बन सकता है।

मत्स्य पालन में जल एवं मृदा का प्रबंधन

आर. एस. पतियाल, एन. एन पांडे, सुरेश चंद्रा एवं बी.एस कमलम्

मत्स्य पालन के लिए तालाब की मुख्य उपयोगिता जल की उर्वरता पर आधारित होती है। शुद्ध जल में जीवों के रहने की अनुकूल परिस्थितियाँ नहीं होती हैं। इसलिए जलीय गुणवत्ता प्रबंधक द्वारा मत्स्य पालन हेतु मछली को तनावमुक्त वातावरण प्रदान करना होता है जो मछली के सामान्य स्वास्थ्य व उत्पादन के लिए न्यूनतम भौतिक, रासायनिक व जैविक कारकों को पूरा करता है। मत्स्य पालन की सफलता में मृदा एवं जल की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मृदा की संरचना एवं उसमें उपस्थित पोषक तत्वों का मछलियों के उत्पादन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। तलीय मिट्टी तालाब के जल में पोषक तत्व उपलब्ध कराती है तथा जल में सड़ते–गलते जैविक पदार्थों के खनिजीकरण में मदद करती है। अतः तालाब से वंछित मत्स्य उत्पादन प्राप्त करने के लिए मृदा एवं जल के भौतिक कारकों की जानकारी होना अति आवश्यक है।

जल एवं मृदा का विश्लेषण

जल एवं मृदा के रासायनिक विश्लेषण से जल एवं मिट्टी में उपस्थित पोषक तत्वों एवं लवणों की मात्रा का आंकलन होता है, जिससे विभिन्न अवयवों की कमी की पूर्ति हेतु आवश्यक कार्बनिक उर्वरकों की आवश्यकता एवं मात्रा का ज्ञान हो जाता है मछली की वृद्धि हेतु कार्बन, आक्सीजन, हाइड्रोजन, नत्रजन, फास्फोरस, कैल्शियम, मैग्नीशियम, गंधक, मैंग्नीज, ताँबा, जस्ता, मोलिब्ड्नम, बोरान एवं क्लोराइड इत्यादि आवश्यक तत्व हैं। कार्बन, हाइड्रोजन एवं आक्सीजन की प्राप्ती मुख्यतः कार्बन डाईआक्साइड एवं जल से हो जाती है। शेष तत्व मिट्टी से प्राप्त होते है।

जल के सामान्य गुण

1) **जल में घुलित आक्सीजनः** जल में रहने वाले जीव पानी से आक्सीजन लेते है। मछली द्वारा जल में घुलित आक्सीजन प्राप्त करती है। पानी में आक्सीजन वायूमण्डल के अतिरिक्त जलीय पौंधों के प्रकाश संश्लेषण किया द्वारा भी उत्पन्न होती है। पानी में आक्सीजन घुलने की क्षमता तापमान पर निर्भर करती है। प्राकृतिक रूप से तालाब के जल में आक्सीजन प्राथमिक रूप से हवा से विसरण (सतह पर हलचल विसरण में सहायक है) तथा तालाब में आने वाले जल द्वारा प्रवेश करती है। तालाब से आक्सीजन का निष्कासन प्लवकों के श्वसन, मछली के श्वसन तथा तली में रहने वाले सूक्ष्म जीवों के श्वसन तथा विसरण के माध्यम से होता है। प्राकृतिक रूप से घुलित आक्सीजन की सान्द्र्ता जल की गहराई के अनुसार बदलती है तथा तापीय स्तरीकरण के अनुरूप होती है। तापीय स्तरीकृत जल में नीचे वाली परत में आक्सीजन की कमी हो सकती है क्योंकि यहाँ आक्सीजन का केवल उपयोग होता है उत्पादन नहीं। उपरी परत आक्सीजन से अति संतृप्त रहती है क्योकि प्रकाश संश्लेषण तेजी से होता है। बरसात या बादलों के मौसम मे प्लवकों की मृत्यु होती है। जिस कारण प्रकाश संश्लेषण कम होता है। फलस्वरूप घुलित आक्सीजन की कमी होती है। पानी मे आक्सीजन की घुलनशीलता पानी के तापमान के बढने पर घटती है। पर्वतीय क्षेत्र में पानी के ठण्डा होने के कारण सामान्यतः तालाबों में मछलियों का अधिक संख्या में संचय किया जा सकता है। मछलियों की अच्छी वृद्धि के लिए पानी में घुलित आक्सीजन की 6.5 से 9 मिग्रा./ली. मात्रा उचित मानी जाती है। 4 मिग्रा./ली. से कम आक्सीजन में मछलियाँ जीवित तो रहती है परन्तु वृद्धि एवं प्रजनन नहीं करती हैं। अतः घुलित आक्सीजन की मात्रा बढाने के लिए वायुकरण करना आवश्यक है। इसके लिए तालाब में ऊँचाई से ताजा पानी भरना चाहिए। पानी की कमी की दशा में तालाब के पानी को लाठी से पीटना चाहिए, जिससे वायुमण्डल आक्सीजन पानी में जल्दी घुल सके।

2) **जल का पी.एच. मानः** जल के अम्लीय या क्षारीय प्रकृति का पता पी.एच. मान से चलता है। पी.एच. मान के आधार पर जल

को तीन भागों में विभाजित कर सकते है।

उदासीन जल–पी.एच.मान 7

अम्लीय जल–पी.एच.मान 0–7 तक

क्षारीय जल–पी.एच.मान 7–14 तक

मत्स्य पालन के लिए पी.एच. 7 से 8.5 तक उचित समझा जाता है, लेकिन जल का पी.एच. 4.5 से कम तथा 11.0 से अधिक निश्चित रूप से जल की मछली रहित अवस्था है। तालाब के जल का पी.एच. प्रतिदिन बदलता रहता है। पी.एच. मुख्यतः कार्बन डाईआक्साइड की सांद्र्ता, पादप प्लवकों का घनत्व तथा कुल क्षारकता एवं कठोरता से प्रभावित होता है। पी.एच. के कम होने से मछलियों की प्रजनन क्षमता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। यदि जल का पी.एच 4.5 से 6.5 के बीच है तो इसको चूने के प्रयोग से सुधारा जा सकता है। मत्स्य पालन श्रेणी में प्रयुक्त चूना (कैलशियम कार्बोनेट) क्षारीय तालाबों मे क्षारकता बढाने के लिये प्रयोग किया जाता है। बुझा हुआ चूना (कैल्शियम हाइड्राक्साइड) एवं अंबुझा चूना (कैल्शियम आक्साइड) काफी तेज काम करते हैं तथा अधिक अम्लीय जल को कैल्शियम कार्बोनेट की तुलना में जल्दी उदासीन करते हैं। चूने का प्रयोग तालाब की तली की मृदा पर या पूरे जल स्तर पर संमरूप ढ़ंग से छिड़क कर करना चाहिए।

3) **जल में कार्बन डाईआक्साइडः** यह तालाब के जल में जीवों एवं पादपों की श्वसन क्रिया एवं अन्य सड़े–गले पदार्थों के कारण उत्पन्न होती है। जिसका उपयोग पौधो अपने भोजन बनाने में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में करते हैं। लेकिन रात्री में यह क्रिया नहीं होती जिस कारण इसकी अधिकता हो जाती है। जल में कार्बन डाईआक्साइड अधिकता आक्सीजन घोलने की क्षमता घटाती है। साथ ही मछलियाँ उपलब्ध घुलित आक्सीजन के उपयोग में भी कठिनाई महसूस करती हैं। कार्बन डाईआक्साइड की अवांछित मात्रा को कम करने के लिये कुछ उपाय इस प्रकार हैं– तापीय स्तरीकरण को रोकने के लिए वायुकरण करना, तालाब के पानी में कार्बन डाईआक्साइड की 10 मिग्रा./ली. से अधिक मात्रा मछलियों की वृद्धि के लिए अच्छी नहीं मानी जाती है।

4) **जल में क्षारीयताः** कुल क्षारीयता तालाब में जल की उत्पादकता को प्रदर्शित करती है। अच्छी उत्पादकता के लिए तालाब की कुल क्षारीयता 100 पी.पी.एम. होनी चाहिए। कुल क्षारीयता पानी में उपलब्ध कार्बोनेट की मात्रा ज्ञात करके की जाती है। कार्बोनेट की मात्रा साधारणतः 30 से 50 पी.पी.एम और बाइकार्बोनेट की मात्रा 50 से 120 पी.पी.एम के बीच होनी चाहिए। काम क्षारकता वाला जल मत्स्य पालन के लिए अच्छा नहीं होती है क्योंकि यह इतना अम्लीय होता है कि मत्स्य उत्पादन पर विपरीत प्रभाव डालता है। कम कार्बन डाईआक्साइड एवं बाइकार्बोनेट के करण पादप प्लवक उत्पादन सीमित होता है। परिणाम स्वरूप आक्सीजन की कमी एवं प्ल्वको का मरना संभव है।

5) **जल में कठोरताः** मछली पालन के लिए जल की कठोरता 50 से 80 पी.पी.एम. के मध्य होनी चाहिए। यदि तालाब के जल की कठोरता 50 पी.पी.एम. से कम होगी तो तालाब में प्लवकों का उत्पादन आवश्यकता से कम होगा।

पर्वतीय क्षेत्रों में मछली पालन के लिए पानी के भौतिक एवं रासायनिक कारक

जल के मुख्य करक	मात्रा
पानी का तापमान (0 सेंटीग्रेड)	14–30
पारदर्शिता (प्रतिशत)	100
घुलित आक्सीजन (मिग्रा./ली.)	6.0–9.0
कार्बन डाईआक्साइड (मिग्रा./ली.)	10 से कम
पी.एच.मान	7.0–8.5
कुल राष्ट्रीयता (मिग्रा./ली.)	50–120
अमोनिया (मिग्रा./ली.)	0.1 से कम
नाइट्रेट (मिग्रा./ली.)	0.1–0.5

6) **नाइट्रेट्सः** तालाब के जल की उर्वरता के लिए अति आवश्यक तत्वों में नत्रजन प्रमुख है। नत्रजन प्राणियों को नाइट्रेट के रूप में प्राप्त होती है। यह नत्रजन चक्र तालाब में जीवन चक्र स्थिर रखने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। नाइट्रेट जो जल की उर्वरताके लिए आवश्यक है प्राकृतिक तत्वों से पूरा नहीं हो पाता है। अतः मत्स्य उत्पादन की वृद्धि हेतु तथा प्लवकों अधिक उत्पत्ति हेतु नाइट्रेट आवश्यक है।

7) **अमोनिया नाइट्रोजनः** कुल अमोनिया नाइट्रोजन, मत्स्य पालन तालाब में मत्स्य प्रोटीन के उपापचय तथा कार्बनिक पदार्थों के विघटन के फलस्वरूप बनती है। कुल अमोनिया नाइट्रोजन, आयनित अमोनिया एवं अनायनित अमोनिया का संयुक्त माप है। अनायनित अमोनिया मछली उत्पादन के लिए अत्यंत हानिकारक है। दोनों की संतुलित मात्रा सीधे तौर पर पी. एच. तथा तापमान पर निर्भर करती है। जल जीव पालन के परिस्थितिकी तंत्र में कुल अमोनिया की सांद्रता आहार दर और आहार में प्रोटीन की मात्रा के अनुक्रमानुपाती होती है। इस तंत्र में अमोनिया नाइट्रोजन की मात्रा सीमित आहार दर, जल के पी.एच. तथा तालाब में उच्च गुण्वत्ता वाले पानी के तालाब में भरने और निकास द्वारा नियंत्रित की जा सकती है।

8) **नाइट्राइटः** जल जीव पालन तंत्र में कार्बनिक पदार्थों के प्रोटीन क्र जैविक क्रोयाओं के विघटन के फल्स्वरूप नाइट्राइट बनता है। इसके साथ–साथ नाइट्रोसोमोनास नामक जीवाणु द्वारा अमोनियम क्र आक्सीकरण तथा अवायुजीवी सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा नाइट्रेट के अपचयन के फलस्वरूप यह बनता है। इसकी विषाक्तता जल के पी. एच. कैल्शियम की सान्द्रता और क्लोराइड की मात्रा पर निर्भर करती है। इसकी थोड़ी सी अधिकता से मछलियो के रक्त का रंग चाकलेट के रंग जैसा हो जाता है। इसका कारण यह है कि नाइट्रेट्स अम्ल की सान्द्रता हीमोग्लोबिन के फेरस आयन को आक्सीकृत करके फेरिक आयन और मीथेमोग्लोबिन बनाती है।

9) **पोटेशियमः** जल की उर्वरता बनाने वाला यह दूसरा मुख्य रासायनिक संघटन है। तालाब के तल की स्थिति इसकी उप्लब्धता दर्शाती है। रेतीली मिट्टी में पोटेशियम कम होता है एवं चिकनी मिट्टी में पिटेशियम की मात्रा अधिक होती है। पोटेशियम जल मे पौधो द्वारा सरलता से ग्रहण किया जाता है और उनकी वृद्धि में सहायक होता है। पौधों के सड़ने के बाद तालाब की मिट्टी में यह पुनः मिल जाता है। जल मे इसकी 1.0 पी.पी.एम. मात्रा अनुकूल मानी गयी है।

10) **फास्फोरसः** कार्बन, नत्रजन आदि तत्वों की भाँति यह भी प्रकृति से उपलब्ध नहीं होता है। प्राकृतिक जल क्षेत्रों में यह सिलिका के साथ बहुत कम मात्रा में होता है। यह जलीय पौधों के लिए आवश्यक है। नत्रजन स्थिरीकरण क्रिया में नत्रजन निष्क्रमण के साथ–साथ नष्ट जीवों में से फास्फोरस भी प्राप्त होता है जो जल में प्राणी एवं पौधों की वृद्धि करता है। फास्फोरस की 0.1 पी.पी.एम. की मात्रा प्लवकों की अच्छी वृद्धि के लिए अनुकूल मानी गयी है।

मृदा के सामान्य गुण

मत्स्य पालन में यह देखा गया है कि समान स्थिति में निर्मित तालाबों की उर्वरता में भी अंतर होता है। यह भी सम्भव है कि ऐसे तालाब का उत्पादन जिसमे उर्वरकों का प्रयोग न किया गया हो, उर्वरकों के प्रयोग किये गये तालाब से अधिक अथवा बराबर हो, यह अन्तर मृदा की भौतिक रासायनिक स्थिति से ज्ञात किया जा सकता है। तली में रहने वाले सूक्ष्म पौधों की उन्नति के लिए मृदा की उर्वरता विशेष महत्वपूर्ण होती है। जल की उर्वरता प्लवकों की उत्पत्ति का कारण बनती है जबकि मृदा की उर्वरता के कारण नितल–जीवी सूक्ष्म पादपों की वृद्धि होती है। तालाब के उत्पादन का मूल्यांकन करते समय उसकी मृदा की जाँच को भी पूरा महत्व देना चाहिए। मृदा से पोषक तत्व जल में घुलते है। साथ ही तालाब में वर्तमान तत्वों और बाहर से प्राप्त तत्वों को स्थिर करने में यह सहायता करती है। नितल–जीवी तो हमेशा ही इसी से पोषक तत्वों की प्राप्ति कर वृद्धि करते हैं। मत्स्य पालन में लगातार उत्पत्ति क्षमता को बनाये रखने हेतु खनिजिकरण आवश्यक है।

मृदा की संरचना एवं उर्वरता का मछलियों एवं अन्य जल जीवों के

उत्पादन पर प्रभाव पड़ता है। मृदा जैविक पदार्थों के खनिजिकरण में सहायता करती है तथा जल को पोषक तत्व उपलब्ध कराती है। इसके लिए मृदा में पर्याप्त मात्रा में जैविक पदार्थ होना बहुत ही आवश्यक है। मिट्टी की रचना तथा उसमें उपस्थित विभिन्न पोषक तत्वों का मछलियों तथा अन्य जल जीवों के उत्पादन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। तलीय मिट्टी तालाब के जल में पोषक तत्व उपलब्ध कराती है तथा तल पर सड़ते–गलते जैविक पदार्थों के खनिजीकरण में मदद करती है। तालाब की तलीय मिट्टी के विभिन्न मानक इस प्रकार होने चाहिए–

स्वरूप (भौतिक गुण)– मृदा बालुकामय, चिकनी या दोमट होनी चाहिए। बहुत बारीक मिट्टी के कण घुलित फास्फोरस तथा पोटेशियम को अवशोषित कर लेते हैं जिससे तालाब के पानी की उत्पादकता घट जाती है। दूसरी ओर अधिक पथरीली या बलुई मिट्टी मे घुलनशील पिषक तत्वों को बचाकर रख पाना संभव नहीं होता है।

जल के भौतिक गुण

1) **तापमानः** जल का तापमान मछली की वृद्धि एवं व्यवहार को प्रभावित करता है। जल का तापमान तालाब की उपापचयी क्रियाओं को नियंत्रित करता है। यह मछलियों की परिपक्वता, जनन क्षमता एवं जीवन क्षमता एवं जीवन चक्र के विकास को प्रभावित करता है। मछलियों की वृद्धि एवं जनन क्षमता के विकास के लिये पर्वतीय क्षेत्रों के तालाब के पानी का तापमान 150 सेंटीग्रेड से 300 सेंटीग्रेड होना चाहिए। इससे अधिक या कम तापमान होने पर मछलियों की वृद्धि कम होती है। कार्प मछलियों के लिये अधिकतम सीमा की तरफ तापमान का जाना मछलियों की वृद्धि एवं भिज्य पदार्थों के मत्स्य मांस में रूपांतर में सहायक होती है। सामान्य से कम या अधिक तापमान में मछलियाँ जीवित तो रह सकती हैं लेकिन उनकी कम वृद्धि के कारण मत्स्य उत्पादन प्रभावित हो सकता है। जहाँ वायुमण्डलीय तापमान प्रतिदिन 100 सेंटिग्रेड तक परिवर्तित हो सकता है वहीं जलीय तापमान आधे मी. गहराई तक 10 सेंटीग्रेड तक परिवर्तित हो सकता है तथा 1.5 से 2.0 मी. तक तापमान अपरिवर्तनशील रहता है।

2) **गहराई** : तालाबों की गहराई मछली की प्रजाति एवं उम्र के अनुसार निर्धारित करते हैं तालाब की तली का प्रकाश किरणो का पहुचना जल की उर्वरता के लिए अति आवश्यक है। सामान्यतः तालाबों की गहराई 1 से 2मी. तक अच्छी मानी जाती है। उथले जल में जीवों के जीवन के लिए अनुकूल स्थितियाँ होती हैं एवं मत्स्य उत्पादन के लिये भी ऐसे ही जल क्षेत्र लाभदायक होते हैं। इसके अतिरिक्त 1 से 2 मी. कम या अधिक गहरे तालाबों में मत्स्य उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है क्योंकि 1.0 मी. से कम गहराई के तालाबों में सर्दियों में तापमान काफी कम एवं गर्मियों में तापमान काफी अधिक हो जाता है। जिससे मत्स्य उत्पादन प्रभावित होता है। इसके विपरीत 2.0 मी. से अधिक गहराई के तालाबों में तल में रहने वाले पादप प्लवकों को सूर्य का प्रकाश नहीं मिल पाता जिससे वे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं कर पाते। फलस्वरूप तालाब में प्राकृतिक भोजन का उत्पादन नहीं हो पाते।

3) **रंगः** तालाब में पानी का रंग प्लवकों के घनत्व को प्रदर्शित करता है जो मछलियों का प्राकृतिक भोजन होता है। हरापन लिये हुए पानी का भूरा रंग सर्वोत्तम होता है क्योंकि इसमें प्लवकों की प्रचूरता होती है। इसके विपरीत यदि पानी रंगहीन दिखाई दे तो यह स्थिति तालाबों में प्लवकों की कमी को प्रदर्शित करती है तथा तालाब का पानी अम्लीया हो सकता है। ऐसी स्थिति में तालाब में खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। पर्वतीय क्षेत्रों के तालाबों में प्रतिमाह गोबर 25–30 किग्रा./100 वर्ग मी. की दर से डालना चाहिए।

4) **गदलापन (टार्बिडिटी):** मलिनता तालाब के पानी के गदलेपन को प्रदर्शित करती है। जल की मलिनता तैरते हुए मिट्टि के सूक्ष्म कणों के कारण हो सकती है। बाढ, वर्षा, गंदे नाले के प्रवाह के कारण अस्थाई एवं निरंतर वायु प्रवाह, जल वेग और भूमि गुणों के कारण स्थायी हो सकती है। मलिनता जल की उर्वरता का एक अवरोधक है। स्वच्छ जल में प्रकाश की

किरणे अधिक गहराई में जलीय वनस्पति की वृद्धि में सहायक होती हैं। जबकि मलिन जल में भोजन निर्माण क्रियायें कम हो जाती हैं। प्लवकों की उत्पत्ति के कारण उत्पन्न हुई मलिनता उर्वरता बढाती है। लेकिन मिट्टी के कणो द्वारा उत्पन्न मलिनता हानिकारक होती है। जल की मलिनता 30 पी.पी.एम. से कम होनी चाहिए। इससे अधिक मलिनता मछलियों के क्लोंमों (गिल्स) को अवरूद्ध कर सकती है।

5) **पारदर्शिताः** तालाब के जल की पारदर्शिता 20 से 35 सेमी. के बीच होनी चाहिए। यदि पारदर्शिता 20 सेमी. से कम है तो तालाब की प्रचूरता होगी इसके विपरीत यदि पारदर्शिता 35 सेमी. से अधिक होगी तो यह जलीय उत्पादकता में कमी को प्रदर्शित करती है। पारदर्शिता सैच्ची डिस्क से मापी जाती है।

जैविक कारक

प्रत्येक तालाब या जल क्षेत्र में प्राणी एवं पादप जगत के असंख्य जीव विभिन्न अवस्थाओं में रहते है। साथ ही प्रत्येक जीव समुदाय की अपनी विशेषता होती है। जिन तालाबों या जल क्षेत्रों मे मत्स्य पालन का कार्य नहीं होता वहाँ पर इनका जीवन प्राकृतिक रूप से चलता रहता है परान्तु जिन तालाबों एवं जल क्षेत्रो मे मत्स्य पालन का कार्य होता है इनकी रोकथाम करके केवल आवश्यक जीवों को ही सहने दिया जाता है तथा पालने योग्य मछलियों की वृद्धि एवं उत्पादन को ही महत्व दिया जाता है। तालाब से अवांछित जीवों को निकालना तथा उपयोगी जीवों का उत्पादन करना सफल मत्स्य पालन के लिए आवश्यक है।

जल जीव पालन परिस्थितिकी तंत्र में मत्स्य बीज संचय घनत्व, इकाई जल स्थान, तालाब के जल क्षेत्र या रेसवे में बहते जल के आयतन में मछली की संख्या या उनकी जैविक मात्रा की माप होता है। निश्चित दर से अधिक या कम मत्स्य बीज संचय उत्पादन को प्रभावित करता है।

"हिन्दी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाने वाली भाषा है। हमें इस भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना होगा"

—रविन्द्रनाथ ठाकुर

उत्तराखण्ड में विदेशी ट्राउट मात्स्यिकी संसाधन एवं उनकी सम्भावनाऐं

दीप ज्योति बरूआ, रविन्द्रा पोस्ती, परवेज़ अहमद गनी एवं डी. सर्मा

भा.कृ.अनु.परि–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल

उत्तराखण्ड भारतीय गणराज्य का 27 वां राज्य है जो उत्तर में चीन के साथ अर्न्तराष्ट्रीय सीमाओं को साझा करता है। इसके पूर्व में नेपाल, दक्षिण में भारत का उत्तरप्रदेश और पश्चिम में हिमाचल प्रदेश स्थित है। उत्तराखण्ड राज्य को प्रभागों – गढ़वाल एवं कुमायूं में बांटा गया है जिसमें क्रमशः सात हौर छः जिलों को सम्मिलित किया गया है। उत्तराखण्ड में कुल 13 जिले हैं। उत्राखण्ड की शीतकाली राजधानी देहरादून है। और ग्रीष्मकाली राजधानी चमोली जिले के गैरसेंण में है इसके अधिकतर मंदिर एवं धार्मिक स्थल उत्तराखण्ड के अधिकतर मंदिर एवं धार्मिक स्थल पवित्र नदियों के किनारों पर स्थित होने के कारण इसे अक्सर देवभूमि के रूप में भी परिभाषित किया जाता है। भारत में उत्तराखण्ड की नदियों के भी पवित्र माना जाता है। विशेष रूप से गंगा और यमुना नदियों का उद्‌गम उत्तराखण्ड राज्य में हुआ है। राज्य की अन्य प्रसिद्ध नदियों में भागीरथी, अलकनंदा, नंदाकिनी, मंदाकिनी, रामगंगा, काली, नायर, धौलीगंगा, टोंस, सरस्वती, गोमती आदि सम्मिलित हैं। इनमें से प्रत्येक नदी का अपना धार्मिक एवं आर्थिक रूप से भी महत्व है। धार्मिक आस्था एवं मिथकों के अतिरिक्त ये नदियां अपनी सहायक नदियों के साथ अन्य गतिविधियों जैसे – राफटिंग, कयाकिंग, ट्रैकिंग, जोरबिंग एवं बंजी जम्पिंग, आखेट तथा नदियों के किनारों पर टैंट लगाकर पर्यटकों के रहने की व्यवस्था आदि के द्वारा उत्तराखण्ड की नदियों को अपने श्रेष्ठ स्थान दिला सकती हैं। स्थलाकृति ने राज्य को तीन उँचाई वाले क्षेत्रों में विभाजित किया है। पहाड़, भाबर और तराई। उँचाई की यह भिन्नता मछली की 125 प्रजातियों के लिए एक समृद्ध वास स्थल को जन्म देती है जिसमें से 76 मत्स्य प्रजातियां गढ़वाल क्षेत्र में तथा 96 मत्स्य प्रजातियां कुमायूं क्षेत्र (सोढ़ी, 2012) मे व्याप्त हैं। सैल्मोनाइडस विशेष रूप से शीतोष्ण तापक्रम (बरूआ, 2019) में अपनी उत्कृष्ट पौषणिक गुणवत्ता और आखेट की उत्कृष्टता के कारण अधिक मूल्यवान हैं। भारत में पाए जानें वाली दो सबसे महत्वपूर्ण विदेशी प्रजातियां salmonids Oncorhynchusmykiss (Walbaum 1792) और भूरी ट्राउट Salmotrutta, (Linnaeus 1758) भारतीय हिमालय क्षेत्र के शीतजल में अच्छी तरह से फूल–फल रहे है। उत्तराखंड में, ट्राउट खेती का इतिहास 1910 से आरम्भ होता है। तब चमोली जिले के तलवाड़ी में राजकीय ट्राउट फार्म में रेन्बो ट्राउट के आइड ओवा को प्रत्यारोपित किया गया था। आरम्भ में ट्राउट को केवल एक आखेट योग्य मछली ही माना जाता था और इसे एक्वाकल्चर एवेन्यू के रूप मे कम माना जाता था लेकिन धीरे धीरे रेसवे में पालन की पद्धतियों, प्रजनन और बीज उत्पादन, आहार निर्माण एवं रोग नियंत्रण आदि में तकनीकी जानकारियों की उन्नति के साथ साथ देश में ट्राउट की खेती का वाणिज्यिक परिदृश्य भी बदलने लगा।

वर्तमान में, भारत में अग्रणी ट्राउट उत्पादक राज्य जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, तमिलनाडु और केरल हैं। सिक्किम, अरूणाचल प्रदेश और नागालैंड राज्यों ने भी पर्यटकों द्वारा ट्राउट पालन में काफी उन्नति की है। उत्तराखण्ड में वाणिज्यिक रूप से ट्राउट की खेती में पिछले दशक के दौरान उत्तरोत्तर उन्नति हुयी है विशेष रूप से ग्रामीण समुदाय के मध्य उन ठण्डे जल क्षेत्रों में जहां किसी अन्य मछली की खेती की संम्भावनाएं नहीं है। भारत के इस पर्वतीय हिमालयी राज्य में मत्स्य पालन के लिए व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण प्रजतियों के रूप में जहां रेन्बो ट्राउट सबसे प्रमुख भूमिका निभाती है। राज्य मत्स्य अधिकारियों के अनुसार वर्तमान में उत्तराखण्ड राज्य में रेन्बो ट्राउट के सरकारी क्षेत्र से लगभग 4.0 टन और निजी क्षेत्र से 5.0 टन रेन्बो ट्राउट का उत्पादन होता है। कुल मिलाकर उत्तराखण्ड में ट्राउट फार्मों की संख्या 27 और रेसवे की संख्या 336 है जैसा कि चित्र 1 में

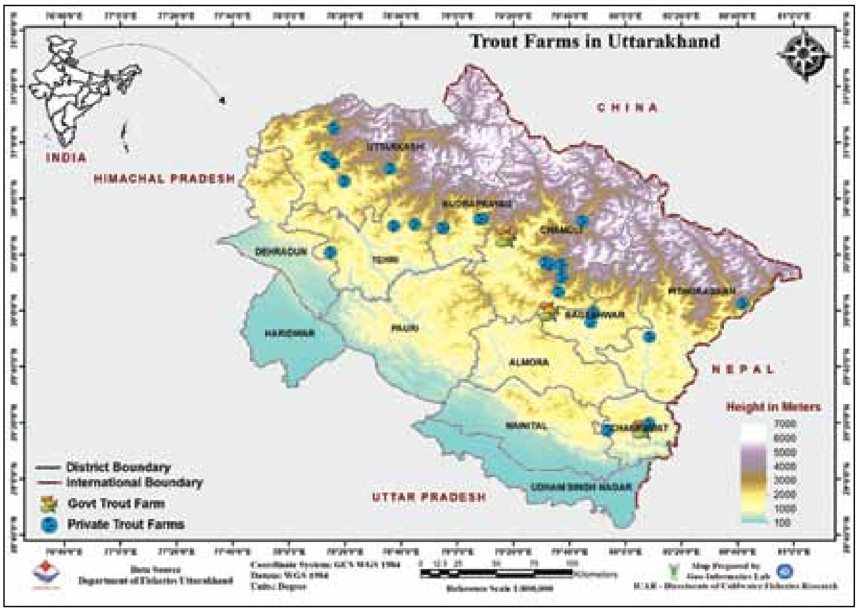

दर्शाया गया है। ट्राउट फार्मों की सबसे अधिक संख्या चमोली जिले में स्थित है, जिसमें छः निजी मालिक के और दो सरकारी क्षेत्र के।

पूरे राज्य में इस मछली के वितरण की प्रमुख विधि इसके आइड ओवा या अंगुलिकाओं का हस्तांतरण है। राज्य के चमोली जिले में तलवारी (चित्र 2) और बैरांगना में स्थित सरकारी क्षेत्र के अंतर्गत दो सुसज्जित ट्राउट हैचरियां हैं (चित्र 3 अ और ब) पिंडर नदी की सहायक नदी के किनारे स्थित तलवारी में एक ट्राउट हैचरी है और वहां पर प्रजनकों के पालन पोशण के लिए 28 रियरिंग रेसवे इकाइयॉं हैं तथा 0.1 मिलियन अण्डो से बीज उत्पान करने की सुविधा है। युवा लोग राज्य के देवाल, ताल और वान क्षेत्र के उत्पादकों के लिए विपणन करते हैं। बैरांगना में ट्राउट हैचरी गोपेश्वर टाउनशिप से 15 किला–मीटर की दूरी पर बर्फ से ढकी बलखिला गाद के किनारे स्थित है। हैचरी में 700 ब्रूडर्स हैं और हर साल लगभग 1.0 मिलियन आईवा पैदा करते हैं। कुल मिलाकर, 34 रेसवे हैचरी में प्रजनक भण्डार एवं एलविन्स के पालन–पोषण का कार्य संचालित हो रहा है। निजि फार्म शायद ही कभी अपने फार्म में बीज का उत्पादन करते है। इसलिए ट्राउट अंगुलिकाओं को प्रति वर्ष इन सरकारी ट्राउट हैचरी से अपने रेसवे में स्टॉक करने के लिए जाया जाता है। ट्राउट के बीज सुतोल. उरगाम, लवानी तथा घाट जैसी जगहो पर पहुंचाए जाते हैं। एक अन्य ट्राउट बीज उत्पादन ईकाई भा.कृ.अनु.प. डी. सी.एफ.आर. के तत्वाधान मे छिरापानी गाढ़ के किनारे चम्पावत जिले में प्रयोगिक मछली फार्म (EFF) में स्थित है। वर्तमान में यह केन्द्र 0.1 मिलियन की संख्या के हिसाब से आइड ओवा का उत्पादन करता है और आने वाले वर्षो में 1.0 मिलियन आइड ओवा के उत्पादन का लक्ष्य रखता है (चित्र 4)। 2800 प्रजनकों के रख रखाव के लिए 4 कंक्रीट रेसवे है। इन बीजों का उपयोग या तो अपने स्वयं के अनुसंधान के उद्देश्य के लिए किया जाता है या पास के गॉवों जैसे पट्टी, लोहाघाट, रीठा साहिब, कथरान्ड, मडौली को राजस्व के रूप में वितरित किया जाता है।

उपरोक्त सभी हैचरियों में निषेचित अंडों को ट्रफों में रखा गया और तब तक नही छेड़ा गया जब तक कि उनके डिम्ब नेत्र नहीं निकल आए। युवा मछलियों को उपयोगिता के आधार पर विभिन्न एफ आर.पी. टैंकों में पाला गया। हांलांकि बैरांगना चित्र 5 अद्ध रेसवे में भी इन युवा मछलियों को कंक्रीट के समानान्तर टैंको में भी पालन पोषा गया। इनमें एफ.आर.पी. टैंको की तुलना में समान सफलता प्राप्त की गयी। हैचिंग के पश्चात युवा मछलियों को जब आउटडोर ग्रो आउट सुविधा में ले जाया जाता है तो थ्रेसर एलविंस से लेकर फ्राइ स्तर (चित्र 5 c) तक वह रूपतामक परिवर्तनों की श्रृंखला से गुजरते है। रेन्बो ट्राउट ठण्डी जलवायु परिस्थितियों को पसंद करती है और वाणिज्यिक स्तर पर कंक्रीट के रेसवे में पाली जाती हैं। किसी स्थल का चुनाव करने में ताजे पानी का गुणात्मक एवं मात्रात्मक मूल्यांकन तथा ट्राउट की खेती को विकसित करने एवं स्वस्थ्य उपादकता को प्राप्त करने व रोगो को कम करने के लिए ताजा पानी प्रारम्भिक कारक होता है। इसलिए उत्तराखण्ड में ट्राउट फार्म एवं हैचरी एक ऐसी स्थलाकृति में स्थित है जहां वर्ष भर उच्च गुणवत्ता वाले बारहमासी जलस्रोत स्थित होते हैं। ट्राउट फार्म और हैचरी की इकाइयों को पूरे परिदृश्य में पानी की सुविधा. जनक आपूर्ति के लिए गुरूत्वाकर्शण का सबसे अच्छा उपयोग करने के लिए डिजाइन किया गया है (चित्र 6 और 7)। मानसून प्रवाह के दौरान पानी ज्यादातर गाद मुक्त होता है। इसलिए बफर्स (चित्र 8) के साथ

अवासादन टैंक सरकारी ट्राउट फार्मों में प्रदान किए जाते हैं ताकि पानी आने से पूर्व गाद को पहले ही रोका जा सके। राजस्व पैदा करने वाले केन्द्र बनने में ट्राउट फार्म की सफलता के लिए पानी में इष्टतम तापमान, पी.एच. पर्याप्त घुलित ऑक्सीजन, कुल क्षारीयता, कठोरता और कम अमोनिया नाइट्राइट और नाइट्रेट का स्तर अन्य महत्वपूर्ण कारक है। (तालिका 1) ट्राउट की खेती कंक्रीट के रेसवे में की जाती है इसलिए मिटटी एक प्रमुख कारक नही होती। ट्राउट की खेती के लिए रेसवे के आकार में एक छोर पर आयाताकार इनलेट पाइप और विरपरीत छोर पर पानी के तीव्र प्रवाह के लिए एक आउटलेट चैनल होता है। समय समय पर टैंक की सफाई की जाती है। रेसव का समांतर और क्रमिक दोनों प्रकार से अवलोकन किया गया और उसका मानक आयाम 15 X 3 X 1 मीटर मापा गया। रेसवे में जल का एक निरंतर प्रवाह बनाए रखा गया। वर्तमान परिस्थितियों में उत्तराखण्ड के रेसवे में 45.50 $मी^2$ स्टॉक का भण्डारण किया गया है। 12 माह के पालन पोशण के पश्चात रेन्बो ट्राउट का आकार 250–260 ग्राम तक हो जाता है जो आमतौर पर बाजार भाव के बराबर होता है। (पाण्डे एवं अली 2015) पालन की अवधि में भण्डार को आरम्भिक वर्ष में चार बार अर्थात् 2.5 ग्रा., 10.20 ग्रा, 50.60 ग्रा. और > 100 ग्रा. में वर्गीकृत किया गया है ताकि विकास में वृद्धि हो सके। समय समय पर आकार की ग्रेडिंग, मछली के बायोमास का आंकलन, विशिष्ट विकास दर, भोजन रूपांतरण दर, और उत्पादन लागत का निर्धारण बेहतर कृषि प्रबंधन प्रथाओं के तहत एक अनिवार्य आवश्यकता है।

उत्तराखण्ड में मत्स्य पालन के महत्व वाले अनेक ऐसे जलीय संसाधन है जो खराब सड़क–सुरक्षा एवं सुदूरवर्ती होने के कारण अभी भी अस्पष्टीकृत हैं। ट्राउट की खेती और एंगलिंग के लिए उपयुक्त ऐसे संभावित स्थालों के निर्धारण में जी.आई.एस. के माध्यम से प्रयास किया गया है। गैर स्थानिक आंकड़ो ने राज्य में शीतजल मात्यिकी के विकास के लिए वास्तविक भूमि को ज्ञात करने के लिए उपयुक्त मानचित्र को विकसित किया है। नदी जल स्रोतों गणना करते हुए राज्य में कुल 10928 कि.मी. नदी तंत्र की संयुक्त लंबाई दिखायी गई है जिसमें 3151.60 कि. मी. क उंचाई और मौजूदा तापीय परिस्थितियों के आधार पर ब्राउन ट्राउट के लिए उपयुक्त आवास बनाए रखने की क्षमता है। ये नदी जल स्रोत 16 °C से नीचे एक तापमान सीमा के भीतर है जो आक्सीजन युक्त ताजे पानी (6.0-9.5 mg/l) के साथ प्रवाहित होते हैं और घनी आबादी वाले स्थान पर प्रवाहित होते है। नदी के कुछ महत्वपूर्ण हिस्सों और उनकी सहायक नदियों में पायी जाने वाली ब्राउन ट्राउट को मंदाकिनी, प्राणमती गाद, धौली गंगा, लाईसर गाद, भिलंगाना नदी, हर की दून, पिंडर (सिंह इत्यादी,1983) असिगंगा, झील, डोड़ीताल के नाम से जाना जाता है। वर्तमान में उत्तराखण्ड के उत्तरी भाग में जीआईएस द्वारा संचार साधनों में नंदाकिनी, घौली गंगा, पश्चिम लाइसर

तालिका 1: उत्तराखण्ड की प्रमुख हैचरियों एवं ट्राउट फार्मों में जल की गुणवत्ता के मापदण्ड

क्र. स.	जल की गुणवत्ता	ट्राउट फार्मों एवं हैचरियां			
		तलवारी	बैरांगना	ई.एफ.एफ. चम्पावत	निजी फार्म
1	तापमक्रम (°C)	6.2-6.5	6.4-7.7	11.2-14.3	8.5-14.6
2	पी.एच.	7.8-8.4	7.1-8.1	6.5-7.3	7.7-8.2
3	घुलित आक्सीजन (mg/l)	8.56-9.85	8.58-10.32	6.42-8.64	8.10-8.80
4	कुल क्षारीयता (mg/l)	42-44	40-42	20-22	48-50
5	कुल कठोरता (mg/l)	120-130	110-130	100-110	130-140
6	अमोनिया (mg/l)	0.00	0.04	0.10	0.14
7	कुल नाइट्राइट (mg/l)	0.00	0.03	0.10	0.10
8	नाइट्रेट (mg/l)	0.01	0.06	0.30	0.60

गाद, भागीरथी, असिगंगा, प्राणमति गाद, बाल गंगा गाद, बडियार गाद, गोमती, बालासुती पिंडर नदियों में ब्राउन ट्राउट के संभावित स्थलों को दखाया गया। इसके अतिरिक्त नदियों के इन हिस्सों में शिकारमाही एव शिकार के स्थलों को स्थापित करने पर भी विचार किया जा सकता है। हालांकि, राज्य में भूरे ट्राउट का बीज उत्पादन बहुत कम है बैरंगाना के ट्राउट हैचरी में हाल के वर्शो में 200 ट्राउट ब्राउन के बीज का उत्पादन करके बीज का उत्पादन करने का प्रयास किया गया है।

अलावा, राज्य के 132.19 हेक्टेयर के क्षेत्र को समुद्र तल से 3000-6000 मीटर (चित्र 9) उँचाई वाली 132 झीलों से भी श्रेष्ठ स्थान दिया गया है। झीलों की अधिकतम संख्या उत्तरकाशी जिले में है जबकि इन झीलों द्वारा कवर किया जाने वाला अधिकतम क्षेत्र चम्बल जिले (चित्र 10) में है। इन झीलों का न्यूनतम और अधिकतम आकार क्रमशः 0.97 हैकटे. और 19.71 हेक्टेयर क्षेत्र है,जिनका औसत आकार 1.97 हैक्टे. तथा 2.54 क्षेत्र है। राज्य में 0–1 हेक्टेयर क्षेत्र की 63 छोटी आकार की झीलें (चित्र 11) में है, जबकि 5–20 हेक्टेयर क्षेत्र में सबसे बड़ी आकार की झीलों की संख्या 13 हैं। चित्र 12 से पता चलता है कि समुद्र तल से 4000–5000 मीटर की अधिकतम ऊँचाई पर झीलों की संख्या बढ़ जाती है। चित्र 12 से पता चलता है 215.16 हैक्टे. क्षेत्र को कवर करने वाली झीलों की संख्या है 121 जो सडक संपर्क से 0–30 किलोमीटर की सीमा के अर्न्तगत आती है। सडको को विशेष रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में फार्म स्थलों तक प्रमुख परिवहन मार्गो के रूप में माना जाता है। ये तथ्य ट्राउट की खेती के प्रचार प्रसार की दिशा में राज्य की क्षमता को परिलक्षित करते हैं।

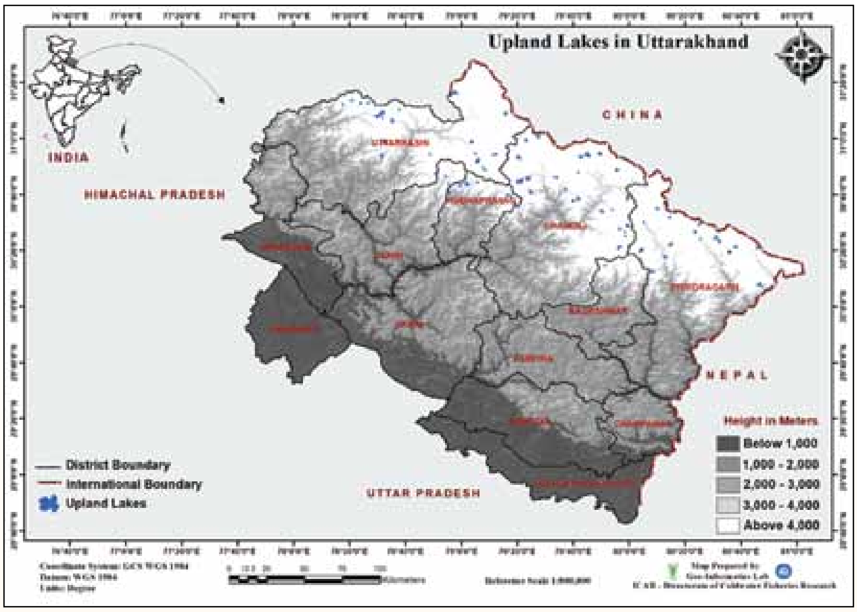

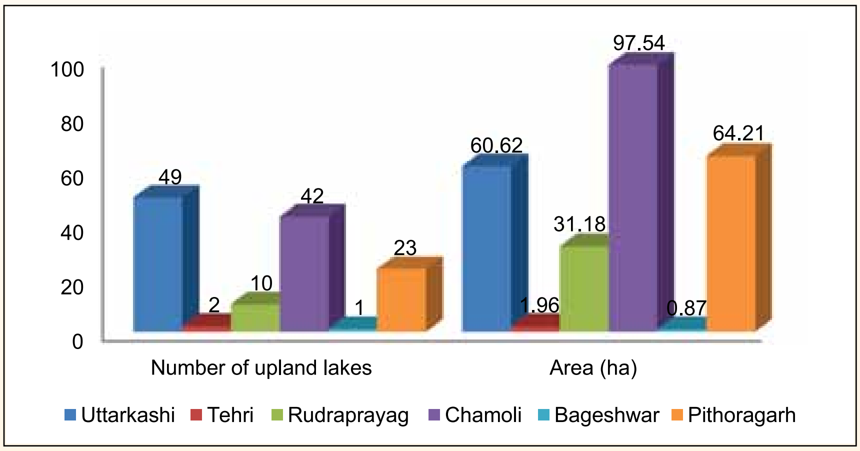

कुल मिलाकर, रेन्बो ट्राउट उत्तराखण्ड के ऊपरी क्षेत्र में एक अत्यधिक व्यावसायिक खाद्य मछली है और इसकी खेती पिछले एक दशक के दौरान तेजी से आगे बढ़ी है और यह सबसे अधिक पारिश्रमिक वाली ठंडे पानी की मछली बन गई है। जी आई एस उपकरणों के उपयोग से से पता चलता है कि राज्य के ऊपरी क्षेत्र में ट्राउट मत्स्य पालन को बढावा देने के लिए उच्च क्षमता वाले समुद्र तल से 2000 मीटर 1955.13 किमी^{2} के भूमि क्षेत्र है, 2705.01 किमी.^{2} क्षेत्र में मध्यम क्षमता और 456.86 किमी.^{2} क्षेत्र में बहुत कम है। कुल मिलाकर 11 जिलों में ट्राउट की अपार संभावनाएँ पाई गई हैं जिनमें से अल्मोडा (19.35%), पौडी (19. 26%), जिलों ने देहरादून (12.62%), उत्तरकाशी (12.8%), चमेली

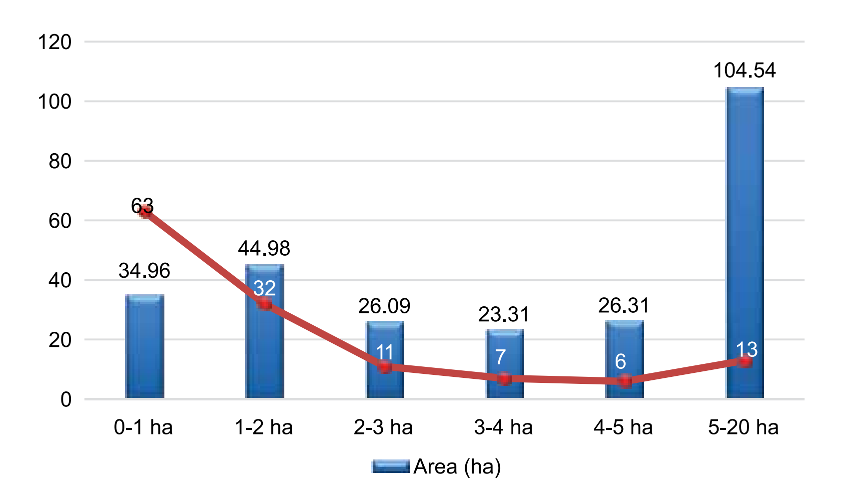

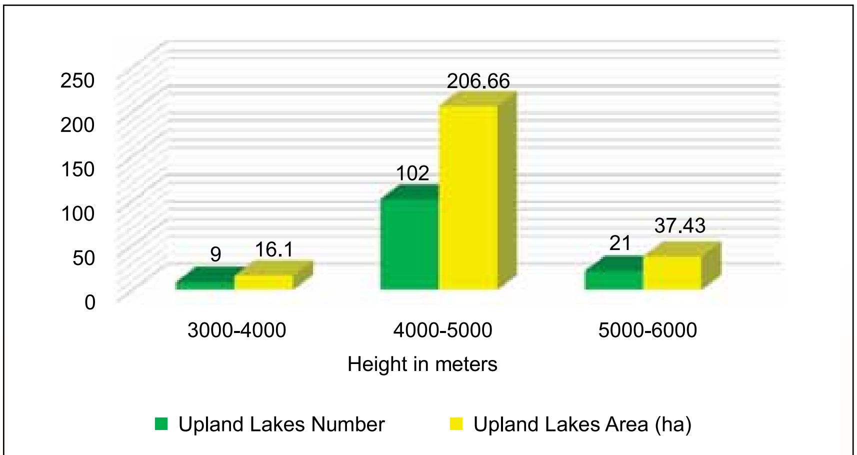

(9.89%), पिथौरागढ (8.52%), जिलों में अधिकतम क्षमता दिखाई है। शोधकर्ताओं, एंग्लर्स, हैचरी के प्रबंधको और उद्यमियों के एक ठोस राज्य में दुनिया भर के पर्यटकों को आंमत्रित करने वाली अन्य सहायक सेवाओं और साहसिक खेलों के साथ कुछ ट्राउट एंगलिंग स्पॉट विकसित हो सकते है।

संदर्भ

सोंधी, एस. 2012. उत्तराखण्ड नेचर हैण्डबुक। ए गाइड फॉर नेचुरलिस्ट्स, ईको–टूरिस्ट्स एण्ड स्टूडेंट्स। उत्तराखण्ड फौरेस्ट डिपार्टमेंट एण्ड बिशन सिंह महेन्द्र पाल।

सिंह, एच.आर., जोशी, सी.बी. एवं प्रसाद , आर. 1983. द ट्राउट फिशरीज ऑफ गढ़वाल : प्रजेंट स्टेटस, मैनेजमेंट प्रॉबलम्स एण्ड प्रोस्पैक्टस। इन:टी.वी. सिंह एण्ड जे. कौर। स्टडीज इन ईको–डिवलपमैंट: हिमालयाज माउन्टेन एण्ड मैन। प्रिंट हाऊस लखनऊ 273–88।

पाण्डे, एन एन. एण्ड अली एस. 2015 दृ रेन्बो ट्राउट फार्मिंग इन इण्डिया: आर.एण्ड डी. पर्सपैक्टिव आई.सी.ए.आर–डी.सी.एफ.आर. भीमताल, बुलेटिन नम्बर 23.

रावत, एम.एस. बेंतवाल बी., सिंह डी., एण्ड गोसाईं , ओ.पी. 2011. स्टेटस आफ ब्राउन ट्राउट (सालमो टुटा फेरियो एल.) इन गढ़वाल हिमालय विद ए नोट ऑन इट मौरफोमिट्रिक करैक्टरिस्टिक, इनवायारन्मेंट कंज. रवेषन जरनल, 12)3) : 47–52.

बरूआ, डी. गनी पी.ए., कुणाल, के., पोस्ती,आर. चिरिस, के. एण्ड योंगाम टगी 2019. ट्राउट फिशरीज रिर्सोसेज एण्ड पोटेंशियलीज इन द मेंचुंगा रिजन ऑफ अरूणाचल प्रदेश, एक्वाकल्चर ऐशिया, 23 3 (3) : 30–39

रेनबो ट्राउट मछली का प्रजनन एवं बीज उत्पादन

सुरेश चन्द्रा
भा.कृ.अनु.परि.—शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल

सालमोनिडी परिवार में 206 प्रजातियों के होने का उल्लेख है जिसमें रेनबो ट्राउट मछली आती है हमारे देश में यद्यपि रेनबो ट्राउट पालन के प्रयासों की शुरूवात 1904 में इग्लैंड से लाये गए आइड—ओवा से हुयी लेकिन हैंचिग में सफलता न मिलने के कारण यह कार्य 1912 में किया गया। श्री एम.जे.मिटचिल ने इग्लैंड के ब्लैक डोन स्थित ब्रिटल वाटर वर्क से प्राप्त रेनबो ट्राउट के आइड—ओवा हो कश्मीर के हर्बन हैचरी पर लाकर इनकी हैंचिग एवं सर्वधन में सफलता हासिल की गयी। शुरूवात में भारत में सालमोनिडी की चार प्रजातियां जिनमें ब्राउन ट्राउट, रेनबो ट्राउट, ईस्टन ट्राउट एवं अटलांटिक सालमन को प्रतिस्थापित किया गया इनमें से ब्राउन ट्राउट कश्मीर, हिमाचल, उत्तरांचल आदि राज्यों की स्थापित हुयी। रेनबो ट्राउट हैचरियों द्वारा पालन प्रक्षेत्रों मे अपनाई जाने लगी जबकी अन्य दो प्रजातियां हमारे वातावरण को सहन नही कर पायी उत्तराखण्ड में रेनबो पालन की शुरूवात 1966 के बाद हुयी जबकि हिमाचल में पालन की शुरूवात 1922 से हुयी।

सालमोनिडी वर्ग की मछलियां मुख्य रूप में भ्रमणकारी और ज्यादातर समय समुद्र में बिताने वाली तथा अण्डे देने के लिये मीठे पानी की निदियों की ओर रूख करती है। ऐसा समझा गया है कि विकास की प्रक्रिया के दौरान सालमोनिड वर्ग की कुछ प्रजातियाँ जो मीठे पानी की नदियों में स्पानिंग के लिए आयी, भूगर्भीय परिर्वतन से समुद्र से इनका सम्बध कट गया और ये छोटे—छोटे मीठे पानी की जरूरतों के अनुरूप ढलने लगी। धीरे—धीरे यह पूर्ण रूप से मीठे पानी में बढ़ने, अण्डें देने आदि के लिए अभयस्त गयी। रेनबो ट्राउट के अनेक स्ट्रेन है जिसका लेटरल लाइन पर शल्कों की संख्या एंव शारीरिक रंग से भेद किया जाता है । इनके शरीर में तारे के आकार के काले दाग पीछे से आधे लेटरल लाइन तक होते है प्रौढ़ मछलियों में गुलाबी रंग के बैन्ड लेटरल लाइन के ऊपर दिखाई देता है, यह नर मछलियों के प्रजनन के समय ज्यादा प्रभावी हो जाता हे।

आधुनिक खेती कार्यों में वैज्ञानिक तकनीकी जानकारी का बहुत अधिक महत्व है। विकसित लाभकारी विविधिकरण पद्धतियों के अनुपालन द्वारा खेती से कृषक आजीविका निर्वहन के साथ—साथ कृषि पर पढ़ने वाले दबाव को भी कम कर सकते हैं। जलीय संसाधनों की उपलब्धता वाले मध्यहिमालयी क्षेत्रों जहाँ वर्ष पर्यन्त पानी का सामान्यतः तापमान 2—3 से 21—22 डिग्री सेल्सियस के बीच रहता है इन जगहों पर, अभ्यागत रेनबो ट्राउट मछली का प्रजनन एवं पालन कर बीज उत्पादन किया जा सकता है। रेनबो ट्राउट मछली को बहते हुए ऑक्सीजन युक्त स्वच्छ जल की आवश्यकता होती है अतः ट्राउट हैचरी निर्माण पूर्व जल की समुचित व्यवस्था वाले क्षेत्र का चयन करना आवश्यक है इसके साथ ट्राउट हैचरी के लिए ऐप्रोज रोड़ एवं विधुत व्यवस्था होना भी जरूरी है। जिससे आवागमन एवं बीज परिवहन कार्यों में किसी तरह का व्यवधान उत्पन्न न हो।

ट्राउट प्रजनकों का चयन

नर व मादा रेनबो ट्राउट मछलियां रेसवे में पूर्ण लैंगिक परिपक्वता प्राप्त करती है लेकिन इनसे अण्डें प्राप्त करने के लिए इन्हें कृत्रिम रूप से स्ट्रीपिंग की जाती है ये स्वतः रेसवे में अण्डें नही छोड़ती है ट्राउट प्रजनन हेतु ब्रुड स्टॉक रेसवे फ्लों थ्रू हैचरी, रियरिंग टब, नर्सरी रेसव एवं ओवरहैड टैंक आदि की जरूरत होती है। रेनवो ट्राउट मछलियों में नर 2 वर्ष के बाद तथा मादा 3—4 वर्षो बाद की लैंगिक परिपक्वता प्राप्त करती है। प्रजनकों को पालन रेसवे से लगभग तीन चार हफ्ते पहले ट्राउट को निकाल कर नर व मादा मछलियों को अलग—अलग रख देते हैं। इनकी पहचान लैंगिक आधार पर की जाती है। नर मछलियों की पहचान उनके रंग और निचले जबड़े पर विकसित हुक से की जाती है। मादा मछलियों का उदर फुला हुआ एवं शरीर का रंग हल्का हरापन लिए रहता है। प्रजनन काल में मछलियों की त्वचा अत्यधिक मुलायम एवं रंग चमकीला हो जाता है। चम्पावत केन्द्र

रेनबो ट्राउट प्रजनक

में पाली गयी रेनवो ट्राउट मछलियों में लैंगिक परिपक्ता जनवरी माह के अन्तिम हफ्ते से देखी जाती थी लेकिन हाल के वर्षों में परिपक्वता समय से पहले देखी जा रही है। वर्ष 2011–12 में जहॉ यह जनवरी के अन्तिम सप्ताह में देखी गयी वही 2015–16 में दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में ही अण्डें देने के लिए तैयार मादा मछलियां पायी गयी। इसी तरह नर जो नवम्बर में परिपक्व होते थे, अब सितम्बर माह में ही पूर्ण परिपक्व देखे जा रहे है। रेनबो ट्राउट मछलियों का प्रजनन काल अलग– अलग जगहों पर अक्टूबर से फरवरी तक पाया गया है।

ब्रूडर रेसवे की देखभाल

ट्राउट की आदतों और स्वभाव के अनुकूल पानी का प्रवाह एवं सन्तुलित आहार प्रदान किया जाता है। खाद्य में मछली का चूर्ण, सोयाबीन की खली, चावल की कनकी, विटामिन और लवणों एवं मछली का तेल युक्त पौष्टिक भोजन की आपूर्ति की जाती है। यह आवश्यक है कि भोजन के प्रोटीन का स्तर 40 प्रतिशत ऊपर बना रहे। प्रतिदिन 2 बार मछलियों को उनके कुल वजन 4 से 5 प्रतिशत के हिसाब से पैलेट आहार दिया जाता है। मछलियों को स्वच्छ परिवेश एवं बहते हुए जल की आवश्यकता होती है। अतः 12–15 दिन के अन्तराल में टैंक की सफाई की जाती है। रेसवे में पानी का बहाव 3–4 लीटर / सेकण्ड/ किलोग्राम ट्राउट रखा जाता है।

चम्पावत स्थित ग्रो आउट ट्राउट रेसवे

नर्सरी रेसवे

रेनबो ट्राउट ब्रूडर रेसवे

ट्राउट फ्लो थ्रू हैचरी

ट्राउट प्रजनन विधि

एक मादा ट्राउट सामान्यतः 1500–2000 /किग्रा तक अण्डे देती है। हैचरी में उपलब्ध सुविधाओं और क्षमता अनुसार ही कुल लिए जाने वाले प्रजनकों का निर्धारण किया जाता है। सामान्यतः एक मादा मछली के लिए 1–2 नर मछलियों की जरूरत होती है। प्रजनन पूर्व इनेमल ट्रे, साफ तौलिये, स्पंज, ब्रुडफिश ले जाने के लिए ब्रूड फिश कैरियर, पंख एवं हैचिंग टब और ट्रे आदि की व्यवस्था कर दी जाती है निषेचन के बाद प्रवाहित जल प्रणाली में अण्डों को रखने के लिए हैचिंग टब, ट्रे आदि पोटेशियम परमैंगनेट के घोल से अच्छी तरह धो कर रख लिए जाते हैं।

स्ट्रीपिंग

नर एवं मादा प्रजनक पकड़कर रेसवे हापा में रख लियें जाते है इसके बाद बारी–बारी से प्रजनकों को

ट्राउट के विकसित अंडे

मादा से अण्डों की स्ट्रिपिंग

ट्रे में निषेचित अंडे

स्ट्रीपिंग पूर्व 20–30 लीटर वाले टब में रखा जाता है। चूंकि यह मछली प्रजनन के समय उछलती ज्यादा है इसलिए इसमें चोट लगने का भय रहता है इससे बचाव के लिए इन्हें बेहोश करने के लिए लौंग के तेल (30–40 मिलीग्राम/लीटर) एथेनोल के घोल 9:1 के अनुपात में 3–5 मिनट तक डुबाया जाता है। इससे स्टीपिंग कार्य में आसानी हो जाता है एवं मछलियों को चोट लगने की संभवाना भी कम हो जाती है। मादा प्रजनकों को स्वच्छ तौलिये से हल्के से पोछकर सूखी ट्रे के ऊपर एक हाथ से पकड़कर अंगूठे की सहयता से धीरे–धीरे पेट के अगले हिस्से को बाहर की तरफ दबाते हैं इससे अण्डे पिचकारी की तरह बाहर निकल आते हैं। चमकदार पीले रंग के समान आकार के अण्डे अच्छे होते हैं जबकि सफेद अण्डे उचित परिणाम नहीं देते हैं। सामान्यतः स्वस्थ्य मछलियों के अण्डे 3–7 मिमी आकार के एवं 40–80 मि.ग्रा. वजन के होते हैं। प्रायः एक मछली के कुल वजन के 8–10 प्रतिशत तक अण्डे प्राप्त हो जाते हैं। इन अण्डों के ऊपर मादा मछली का मिल्ट डालते हैं।

स्ट्रीपिंग के समय अच्छी गुणवत्ता का बीज पैदा करने के लिए 2–3 नर मछलियों का मिल्ट मिलाकर अण्डों को निषेचित करने के लिए मिश्रित किया जाता है। इसमें भी नर मछली का पेट आगे से पीछे को दबाकर सफेद मिल्ट बाहर निकलता है। इन अण्डों और मिल्ट को एक मुलायम पंख से हल्के हाथ से मिलाते हैं। इस दौरान यह ध्यान देना आवश्यक है कि इसमें प्रकाश कम से कम पड़े। ट्रे में इन्हे 7–10 मिनट तक ढक कर रख दिया जाता है। इसके पश्चात इन्हे साफ पानी से धो दिया जाता है। अण्डों में स्ट्रीपिंग के समय मिलने वाले मछलियों के मल, रक्त के थक्के आदि को सफाई के दौरान बाहर निकालना आवश्यक है। निषेचित अण्डे पानी डालने के बाद 15–20 प्रतिशत तक आकार में बढ़ जाते हैं, ऐसा पाया गया है कि अण्डों को निषेचन के 20 मिनट बाद से 48 घंटे तक अन्य जगहों को भेजा जा सकता है। उसके बाद आइड–ओवा अवस्था जब अण्डों के अन्दर काले ऑख का स्पॉट दिखाई देता है फिर तब इन्हें परिवहन किया जाता है।

निषेचित अण्डों का जल प्रवाहित प्रणाली मे सम्वर्द्धन

45x45x15 सेंमी0 आकार के जालीयुक्त ट्रे में अण्डे सर्वधन हेतु रखे जाते हैं। इसमें 3–4 ली/मिनट पानी का बहाव रखा जाता है। एक ट्रे में 3000–5000 तक अण्डे रखे जा सकते हैं। इन अण्डों से भरी ट्रे को 2.5 मी लम्बे एवं 50 सेमी चौड़े आयताकार फाइवर टैंक में रखे जाते हैं। एक फाइवर टैंक में उपर लिखित आकर की 4 ट्रे तक रखी

जा सकती हैं और इनमें 12–15 हजार तक अण्डे सवंर्धित किये जा सकते हैं। खराब अण्डों को नियमित रूप से बाहर निकाल लिया जाता है। आइड ओवा तापमान अनुसार 20–40 दिन में तैयार हो जाते हैं, जिनका परिवहन अन्य जगहों को किया जा सकता है। सामान्यतः 03–9 डिग्री सेल्सियस (370 डिग्री डेज) तापमान पर 35–60 दिन में अण्डे से बच्चे बाहर निकल आते हैं वर्ष 2015–16 में चम्पावत में दिसम्बर–फरवरी माह के बीच हैचरी के पानी का तापमान 3–7 डिग्री सेल्सियस रहने के कारण सम्वर्द्धन अवधि 58–60 दिन तक पायी गयी। ज्यादा लम्बी अवधि में कवक संक्रमण की संभावना ज्यादा रहती है इससे अण्डों की उत्तरजीवितता दर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। ट्रे एवं टैंको का नियमित सफाई अत्यन्त आवश्यक है। हैचरी संवर्धन के दौरान बढ़ती अवधि एवं पानी के तापमान के साथ जैसे–जैसे निशेचित अण्डों में विभिन्न अवस्थायें प्राप्त होती हैं, इनमें कवक एवं बैक्टिरिया संक्रमण की आशंका बढ़ जाती है। अतः समय–समय पर टैंकों की पूर्ण सफाई अत्यन्त आवश्यक है। इस दौरान लगभग 70–80 प्रतिशत आइड–ओवा से अण्ड पीत युक्त लार्वी प्राप्त होते हैं। इसके पश्चात इन्हैं बड़े टबों में सवंर्धित किया जाता है। टब में लार्वी संवर्धन–अण्डों से हैचिंग उपरान्त अण्ड पीत युक्त लार्वी प्राप्त होते हैं। सामान्यतः 60–70 प्रतिशत तक अण्डे हैच कर जाते हैं। अण्ड पीत लगी रहने के कारण लार्वी चलना फिरना नहीं कर पाते हैं। इस अण्ड पीत के अवशोषित होने में तापमान के अनुसार 2–4 हफ्ते तक लग जाते है। इसके पश्चात इनका चलना फिरना शुरू हो जाता है। और बाहर से महीन सन्तुलित आहार ग्रहण करने योग्य हो जाते हैं।

लार्वी को विभिन्न आकार के गोलाकार या आयताकार टबों में रखा जाता है। वहते हुए पानी की

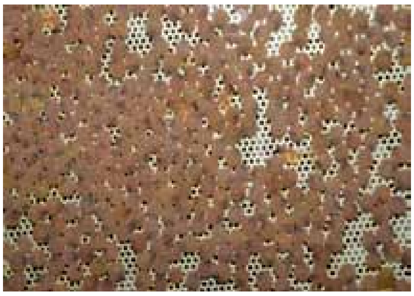

विकसित आईड ओवा

अण्ड पीत लार्वी

व्यवस्था करना भी आवश्यक है। टबों के लिये जल की उत्तम गुणवत्ता बनाये रखने के लिए प्रतिदिन एक साफ ब्रश से सफाई की जाती है। जिससे दिये गये आहार के बच्चे अवशेष एवं मछलियों के अपवर्ज पदार्थ बाहर हो जाते हैं। पानी के कुछ भाग को बीच–बीच में बदलाव करना लाभप्रद होता है। हैचरी में प्राप्त होने वाले पानी की मात्रा एवं तापमान का लार्वी संवर्धन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। 13–14 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान एवं कमजोर लार्वी में डीफोरमेटी देखी जाती है।

अतः इस ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। लार्वी को प्रतिदिन महीन संतुलित आहार दिन

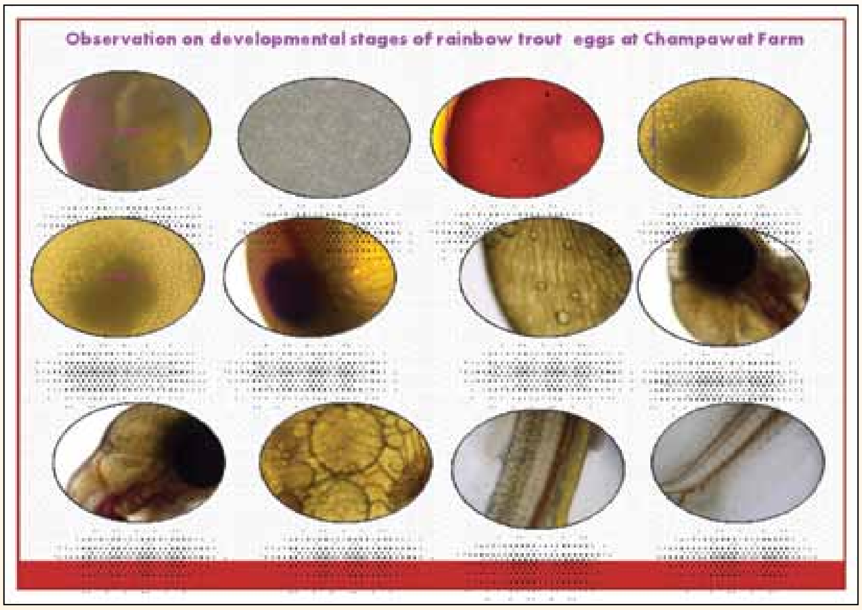

हैचरी में ट्राउट अण्डों की विभिन्न अवस्थायें

में 4–5 बार टैंक के उपर पाउडर रूप में दिया जाता है। लगभग 30–45 दिन इन्डोर संवर्धन के बाद ये शारीरिक रूप से मजबूत हो जाते हैं जिन्हें प्रक्षेत्र के नर्सरी रेसवे में संचय किया जा सकता है।

नर्सरी प्रबंधन

लगभग एक माह के ट्राउट फ्राई छोटे–छोटे आयताकार नर्सरी रेसवे जिनका आकार सामान्यतः 30–50 मी^{2} होता है में 100–200/मी2 के हिसाब से संचय की जाती हैं।

अण्ड पीत लार्वी

अण्ड पीत फ्राई

ट्राउट एडवांस फ्राई

लेकिन संचय घनत्व पानी के बहाव अनुसार बढाया घटाया जा सकता है। ट्राउट मछली के नर्सरी प्रबन्धन के लिए कुछ महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

उत्तम बीज उत्पादन प्राप्त करने हेतु कुछ उपाय

- प्रजनक ट्राउट मछलियों का चयन प्रजनन के तीन–चार माह पूर्व कर लेना चाहिए।
- इन्हें सन्तुलित आहार नियमित रूप से देते रहना चाहिए।
- प्रतिदिन रेसवे में रखी गयी प्रजनक ट्राउट का व्यवहार एवं खाद्य ग्रहण करने पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।
- प्रजनन से 15–20 दिन पूर्व नर और मादा मछलियों का चयन कर लिया जाना चाहिए।
- नर एवं मादा ट्राउट को अलग–अलग रेसवे में रखना चाहिए।
- 0.7 से 2 किलो तक के मादा प्रजनक जिनकी आयु तीन से पॉच वर्ष हो स्ट्रीपिंग में आसानी के साथ–साथ अधिक अण्डें भी प्राप्त होते है।
- जिस दिन प्रजनन कार्य करना हो उसके पहले दिन की शाम के समय ट्राउट मछलियों को रेसवे में खाद्य नही देना चाहिए, क्योंकि स्ट्रीपिंग के समय नर और मादा मछलियों के मल द्वारा अण्डों के खराब होने की सम्भावना बहुत अधिक रहती है।
- स्ट्रीपिंग पूर्व नर और मादा मछलियों को लौंग के तेल (40 मिग्रा प्रति0 लीटर) के घोल में 1–2 मिनट तक डुबोने से यह अचेत हो जाती है। जिन्हें बिना तनाव के स्ट्रीपिंग किया जा सकता है।
- लगभग एक किलो की स्वस्थ्य मादा ट्राउट से 1600–2000 तक अण्डें प्राप्त किये जा सकते है।
- एक स्वस्थ्य नर से प्राप्त मिल्ट से 2 से 3 मादा मछलियों के प्राप्त अण्डों का निषेचन किया जा सकता है।
- प्रजनकों को स्ट्रीपिंग करते समय यह ध्यान देना चाहिए कि उनके शरीर पर अत्यधिक दबाव न पड़े, इससे प्रजनक मछलियों के आन्तरिक अंगो मे चोट पड़ने की सम्भावना बढ़ने के साथ–साथ स्ट्रीप किये अण्डें भी खराब हो जाते है। प्रायः ऊपर से धीरे–धीरे दबाकर नीचे की तरफ को दबाव डालना चाहिए इससे अण्डें पिचकारी की तरह बाहर निकल आते है।
- जिन मादा मछलियों के स्ट्रीपिंग के समय पहले पानी बाहर निकले उनमें तुरन्त नर का मिल्ट मिला देना चाहिए इससे निषेचन बढ़ने की सम्भावना रहती है।
- यह समस्या उन मादा मछलियों में देखी जाती है जो अधिक परिपक्व हो गयी हैं अतः प्रजनन के महिनों में नियमित रूप से मछलियों की जॉच करते रहना चाहिए।
- प्रायः ऐसा पाया गया है कि वातावरणीय परिर्वतन एवं मछलियों के वढ़ते पालन से लैंगिक परिपक्वता पहले प्राप्त हो जा रही है। यह अवधि लगभग 20 दिन से 30 दिन तक देखी गयी है अतः जो इस क्षेत्र में कार्यरत है उन्हें भी इस तरह के परिर्वतनो पर ध्यान देना चाहिए।
- स्ट्रीपिंग करते समय यह ध्यान रहे कि सभी अण्डें बाहर निकल गए है। प्रायः ऐसा देखा गया है कि जिन मादा मछलियों में अण्डें पेट में रह जाते है। उनके यकृत एवं आंतो में सक्रमण की सम्भावना बढ़ जाती है और प्रजनक मरने लगते है।
- ऐसी ट्राउट मादा जिन्हें स्ट्रीपिंग के लिए उपयोग नही किया गया उन मछलियों के भी अण्डे यदि पेट में उपस्थित हो तो बाहर निकाल देना चाहिए। जिससे नए बनने वाले अण्डे सही तरह से विकसित होते है।
- प्रजनन कार्य के बाद ब्रुडर मछलियों को वीटाडीन या पोटेशियम परमेग्नेट के घोल में डुबोकर बड़े पालन रेसवे में डालना चाहिए, इस दौरान रेसवे में प्रवेश करने वाले पानी का बहाव समुचित मात्रा में उपलब्ध हो तथा रेसवे का नितल भी साफ रखना चाहिए।
- निषेचित अण्डों को यथासम्भव सीधे प्रकाश से दूर रखना चाहिए एवं प्रजनन कार्य भी कम से कम प्रकाश में करना चाहिए।
- निषेचन के 15–20 मिनट बाद अण्डों को अच्छे से धोकर सर्वधन ट्रे में रखा जाता है।
- निषेचन के लगभग एक घण्टे बाद सवर्धन ट्रे के सफेद पड़ गयें अण्ड़ो को उसी दिन बाहर कर देना चाहिए।
- हैचरी में अण्ड सवर्धन के दौरान विशेष सावधानी बरतनी चाहिए एवं नियमित रूप से खराब अण्डों को ट्रे से बाहर निकालते रहना चाहिए।इस प्रकार की कुछ सावधानियां अपनाकर अधिक ट्राउट बीज प्राप्त किया

जा सकता है। बहते हुए साफ जल की सतत् आपूर्ति बनाये रखना

- नियमित रूप से दो तीन बार आहार प्रदान करना
- एक निश्चित समयन्तराल में नर्सरी रेसवे की पूर्ण सफाई करना
- नर्सरी टैंकों की सफाई के दौरान फ्राई को दो तीन प्रतिशत नमक के घोल अथवा 200–300 मिलीग्राम/लीटर पाटेशियम परमैगनेट के घोल में 1–2 मिनट तक डुबा कर नर्सरी में छोड़ना
- ट्राउट मांसाहारी के साथ–साथ कैनाबिलिस्टिक व्यवहार भी दर्शाती है अतः फ्राई की 20–25 दिन में एक बार आकारनुसार ग्रेडिंग करना आवश्यक है।
- इसमें अलग अलग आकर की फ्राई को अलग अलग नर्सरी संवर्धन इकाईयों में संचय करना चाहिए जिससे छोटी फ्राई को नुकसान न पुहंचे इस प्रकार 20–30 दिन बाद तैयार फ्राई को बड़े टैंकों में संचय अथवा इनका विक्रय किया जा सकता है।

उपसंहार

यद्यपि अलग–अलग संवर्द्धन स्थितियों में उत्तरजिविता दर अलग– अलग होती है 1 कि0ग्रा0 मादा प्रजनक मछली के द्वारा 400–600 तक फ्राई प्राप्त की जा सकती है। अभ्यागत रेनबो ट्राउट मछली तीव्र बढ़वार, मजबूत एवं शीतजल के 21–22 डिग्री सेल्सियस पानी के तापमान को सहने की क्षमता के चलते नियन्त्रित प्रक्षेत्रों में पालन हेतु अत्यन्त उपयोगी एवं लाभप्रद होती जा रही है। प्रचुर बहते हुए स्वच्छ जल की उपलब्धता के बाबजूद अनेक पर्वतीय कृषक ट्राउट बीज की सही उपलब्धता न होने के कारण इस व्यवसाय को नहीं अपना पाते हैं। ट्राउट प्रजनन एवं बीज उत्पादन की वैज्ञानिक जानकारी एवं इसके सही अनुपालन द्वारा न केवल रेनबो ट्राउट बीज की उपलब्धता सुलभ होगी बल्कि यह पहाड़ के ग्रामीण अंचलों में आय का एक सबल साधन बन सकता है।

"राष्ट्रगान, राष्ट्रीय ध्वज
राष्ट्रीय पशु और राष्ट्रीय पक्षी की तरह
राष्ट्रीय भाषा भी राष्ट्र का गौरव है"

–राजगोपालाचार्य

पोषण

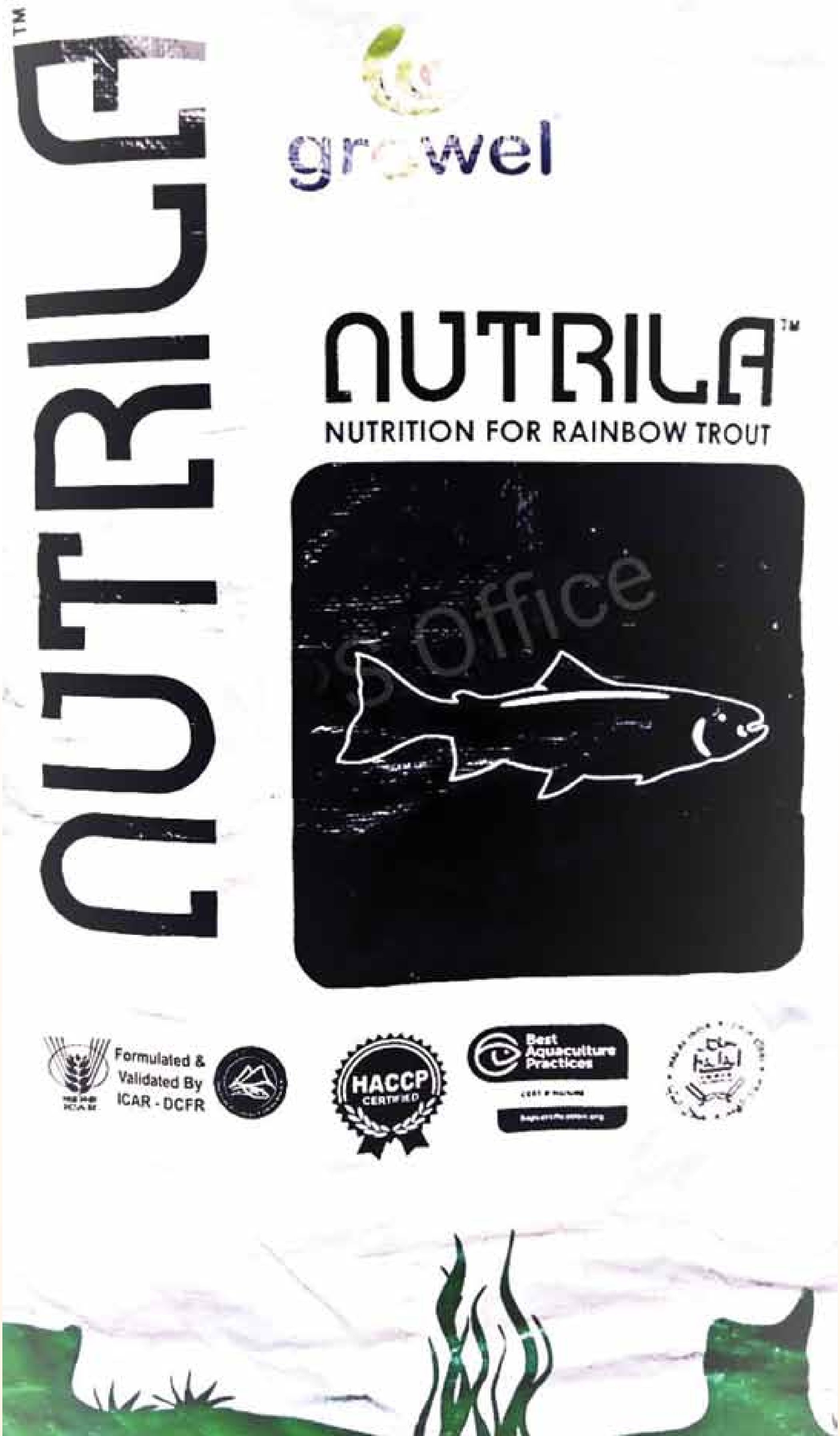
NUTRILA™
growel
NUTRILA™
NUTRITION FOR RAINBOW TROUT
Formulated & Validated By ICAR - DCFR
HACCP CERTIFIED
Best Aquaculture Practices

घर में मछलियों के लिऐ प्रति जैविक पदार्थ युक्त भोजन बनाने की कार्यविधि

सुमन्त कुमार मल्लिक, नीतू शाही, शिवम सिंह, आर.एस. पतियाल, सुरेश चंद्रा एवं कृष्णा काला

भा. कृ. अनु. प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

नीली क्रांति की शुरूवात 1960 के दशक के मध्य में हुई थी और तब से आज तक जलीय कृषि (एक्वाकल्चर) में प्रतिवर्ष वृद्धि देखी जा सकती है। जैसे–जैसे मछलियों और अन्य जलीय उत्पादों के लिए हमारी निर्भरता जलीय कृषि में बढ़ रही है उसी अनुपात में प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र (जैसे महासागर, सागर, नदियां और झीलें आदि) पर पड़ने वाले भार को कम करने के क्षेत्र में सहायक साबित हो रही है। मानव जीवन में जलीय कृषि का चलन बहुत पुराना है मगर हम आज भी जलीय जीवों और जलीय पौधों की अपनी आवश्यकताओं के लिए अधिकतर उनके प्राकृतिक आवासों जैसे समुद्रों नदियों और झीलों पर ही निर्भर है।

जलीय कृषि या एक्वाकल्चर में जलीय जीवों, मछलियों क्रसटेशियन (झींगा, केकड़ा) मोलस्क (सीप), जलीय पौधों शैवाल आदि का नियंत्रित परिस्थितियों में पालन किया जाता है। जिसमें मीठे पानी और खारे पानी की खेती शामिल है मगर कभी–कभी इन परिस्थितियों को कुछ महत्वपूर्ण कारक प्रभावित करते है। जिसमें रासायनिक तनाव जैसे–पानी की गुणवत्ता में कमी, भोजन की गुणवत्ता में कमी, प्रदूषण आदि, जैविक तनाव जैसे–जनसंख्या घनत्व, अतिशूक्ष्म व सूक्ष्म जीवों की उपस्थिति आदि और भौतिक तनाव जैसे–तापमान आदि है यह तीनो कारक एक दुसरे से जुड़े हुऐ है जिस कारण जलीय कृषि में कभी–कभी इसका दुष्प्रभाव देखने को मिलता है जैसे जब कभी जलीय कृषि में (जैविक कारक) जनसंख्या घनत्व अधिक हो और पानी की रासायनिक गुणवत्ता में कमी आये (घुलनशील ऑक्सीजन की कमी, अमोनिया की अधिकता) तो इस स्थिति में मछलियों की प्रतिरक्षा प्रणाली कमजोर होने से अतिसुक्ष्म जीव सक्रिय होकर मछलियों में रोग उत्पन्न करते है और इस परिस्थिति से निपटने के लिए वर्तमान में प्रतिजैविक पदार्थो का प्रयोग किया जाता है।

जलीय कृषि में यह परिस्थितियां कब आ जाये इसका पुर्वानुमान लगाना सम्भव नही होता और प्रतिजैविक पदार्थ युक्त भोजन की भी एक समय सीमा होती है जिसमें की यह अधिक कारगर होते है। अगर कभी हमारे सामने यह परिस्थितियां आये और हमारे पास प्रतिजैविक पदार्थ युक्त भोजन उपलब्ध ना हो इस परिस्थिति में हम घर में ही प्रतिजैविक पदार्थ युक्त भोजन बनाकर अपनी मछलियों की रक्षा करने का प्रयास कर सकते है।

अमेरिका खाद्य एंव औषधि प्रशाधन ने जलीय कृषि में उपयोग के लिए कुछ ही दवाओं की अनुमति दी है जिसमें से ऑक्सीटेट्रसाइक्लीन 82 मिली.ग्रा. प्रति कि.ग्रा. मछली का भार प्रति दिन 90 दिनों के लिए, रोमेट (सल्फाडाई मिथोक्सीन/औरमेटोप्रिम) 50 मि.ग्रा. प्रति कि.ग्रा. मछली का भार प्रतिदिन, 5 दिनों, 5 दिनों के लिये और फ्लोरफिनिकोल 90 मि.ग्रा./कि.ग्रा. मछली का भार प्रतिदिन, 90 दिनों के लिए आदि है।

बनाने की विधि

↓

अमेरिका खाद्य एवं औषधि प्रशासन द्वारा मान्यता प्राप्त प्रतिजैविक पदार्थ को अपनी आवश्यकता के अनुसार वजन करने के बाद प्रथक रख दें जो 90 दिनो की आवश्यकता के लिए प्रयाप्त हो।

↓

मछलियों के प्रतिदिन के भोजन के अनुसार 90 दिनो का भोजन वजन करके पृथक रख दें।

↓

प्रतिजैविक पदार्थ को मछली के भोजन के ऊपरी परत में लगाने के लिए मछली का तेल, वनस्पति तेल या जिलेटिन घोल की मात्रा को पृथक कर दे जो 90 दिनों मछली के भोजन का 5 प्रतिशत होना चाहिए।

↓

अब प्रतिजैविक पदार्थ व मछली/वनस्पति तेल को अच्छे से मिलाने

के बाद उस पर मछली का भोजन उडेल दें और अच्छे से मिलाते रहे जब तक प्रतिजैविक पदार्थ युक्त मछली/वनस्पति तेल के लेप की परत मछली के भोजन के ऊपर अच्छे से लग जाये।

↓

इसके बाद मछली के भोजन को अंधेरे में फैलाकर 24–48 घंटो तक हवा में सुखाने के बाद उसे प्रकाश रोधी/वायुरोधी बर्तन में संभाल कर रख देना चाहिए और लगातार 90 दिनो तक उपयोग करना चाहिए।

उदाहरण

मान लिजिए आप के पास 90 कि.ग्रा. की मछलियां है, प्रतिदिन हमें ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन (या अन्य प्रतिजैविक जो लेख में उल्लेखित है) की मात्रा 82 मि.ग्रा./कि.ग्रा. चाहिए तो 90 कि.ग्रा. की मछली के लिए प्रतिदिन ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन की मात्रा होगी 82x10= 820 मि.ग्रा. प्रतिदिन के लिए

- अब हमें 90 दिनों तक प्रतिजैविक पदार्थ युक्त भोजन खिलाना है तो 90 दिनों के लिए ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन की आवश्यकता होगी। 820 मि.ग्रा. x10=8200मि.ग्रा. या 8.2 ग्राम
- यदि 90 कि.ग्रा. वजन वाली मछलियों को हम प्रतिदिन 2 प्रतिशत की दर से भोजन देते है तो प्रतिदिन के भोजन की आवश्यकता होगी।

  $\frac{90x2}{900}$ $\frac{20}{100}$ 0.20 कि.ग्रा. या

  90 दिनो की भोजन की मात्रा होगी।

  0.2 कि.ग्रा.x 90 = 2.0 कि.ग्रा.
- महत्वपूर्ण बिन्दु: हमें 90 दिनों की जरूरत से थोड़ा कम ही भोजन वजन करना चाहिए क्योंकि जब मछली बिमार होती है तो उसके भोजन ग्रहण करने की इच्छा भी कम होती है अतः हम 90 दिनो के लिऐ 2.0 कि.ग्रा. भोजन की जगह 9.5 कि.ग्रा. भोजन ही वजन करके पृथक रखेगें।
- बाइडर के रूप में हम मछली या वनस्पति तेल का उपयोग करेगें जो 90 दिनों के भोजन का 5 प्रतिशत होना चाहिए।

  $\frac{9.5 \text{ कि.ग्रा.x5}}{100} = \frac{7.5}{100} = 0.075$

  ली. या 75 मि.ली. तेल

कुछ महत्वपूर्ण बातें

- अमेरिका खाद्य एवं औषधि प्रबन्धन ने प्रतिजैविक पदार्थ युक्त भोजन की जो समय सीमा तय करके रखी हुयी है उतने समय तक प्रतिदिन प्रतिजैविक पदार्थ युक्त भोजन मछलियों को खिलाना चाहिए।
- प्रतिजैविक पदार्थ युक्त भोजन को छाया में 24–48 घंटो के लिए हवा से सुखाने के बाद प्रकाश रोधी व हवारोधी बर्तन में सम्भाल कर रखना चाहिए।

शुमिन्निया न आप औषाधय: सन्तु

(यजुर्वेद ।६/२२)

जल और औषध (वनस्पतियां)

हमारे लिए सर्वदा सुखदायक हो

रोग

फिशमिंट (मत्स्य पुदीना): रोगाणुरोधी और स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाले गुण

खांडेम्बम विक्टोरिया चनु एवं डिम्पल ठाकुरिया
भा.कृ.अनु.पं–शी.मा.अनु. निदेशालय, भीमताल

परिचय

फिश मिंट अर्थात मत्स्य पुदीना (Houttuyniacordata) एक खाद्य औषधीय जड़ी बूटी है जो दक्षिण पूर्व एशिया, चीन, कोरिया और जापान में मूल रूप से पायी जाती है। इस पौधे की पत्ती में एक तेज सुगंध होती है, जिसके कारण इसे आमतौर पर फिश मिंट कहा जाता है हालांकि पुदीना (मिंट) वर्ग का सदस्य नहीं हैं। इसे हार्ट लीफ, फिश वोर्ट, चीनी छिपकली की पूंछ, गिरगिट का पौधा, इंद्रधनुष का पौधा या विशप के खरपतवार के रूप में भी जाना जाता है। यह पौधा नम से गीली मिट्टी में अच्छी तरह से उगता हैं जब तक उसे धूप मिलती है और यहां तक की सूखे में यह बढ़िया तरीके से पनप जाता है। यह एक बारहमासी पौधा है तथा तेजी से फैलता है। यह बगीचों अथवा उद्यानों में बहुत आक्रामक हो सकता है। कठोर सर्दियों के दौरान इसकी पत्तियां सूख जाती हैं, लेकिन बसंत में पुनः उग आती हैं। यह आमतौर पर

अप्रैल से जुलाई के महीने के दौरान फूलता है। यह पौधा जापान, चीन, कोरिया, वियतनाम और उत्तर–पूर्व भारत के लोगों में अपनी पाकशाला के उपयोग और औषधीय गुणों के लिए जाना जाता है। इस वनस्पति पौधे के सभी भागों को खाया जाता है और कई देशों में तो यह स्थानीय व्यंजनों का प्रमुख हिस्सा रहता है। जापान और कोरिया में, इसकी सूखी पत्तियों का उपयोग स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाली हर्बल चाय के रूप में किया जाता है।

पारम्परिक चिकित्सा में उपयोग

मत्स्य मिंट अर्थात पुदीना का लंबे समय से एशियाई देशो में पारंपरिक चिकित्सा के रूप में इस्तेमाल किया जाता रहा है। जापान में, ताजे पत्तों का उपयोग पेट के अल्सर, शुद्ध त्वचा रोगों और मूत्रवर्धक के रूप में किया जाता है। कोरिया में, यह खांसी निमोनिया, ब्रोंकाइटिस, पेचिश, ड्रॉप्सी, ल्यूकोरिया, गर्भाशयशोध, एग्जिमा, हरपीज सिंप्लेक्स, मुंहासे, जीर्ण साइनुसाइटिस और नाक पॉलीप्स के उपचार के लिए उपयोग किया जाता है। थाइलैंड में इसका उपयोग प्रपिरक्षा–उत्तेजना के लिए किया जाता है। भारत में, विशेष रूप से पूर्वोत्तर राज्यों में, इसका उपयोग हैजा, पेचिश, रक्त की कमी का इलाज, रक्त की शुद्धि और रक्त शर्करा को कम करने के लिए किया जाता है। चीनी पारंपरिक चिकित्सा में यह घावों, ऊष्माघात, बवासीर, छिद्रार्बुद, मलेरिया, टॉन्सिलिटिस, वाइपर और कीट से विष, हाइड्रोपॉसी, त्वचा के अल्सर, दस्त, पेचिश, आंत्रशोथ, उपदंश, मूत्रमार्गशोथ, क्षय रोग, कोरोनरी हार्ट रोग, एंजाइना और कई अन्य रोगों के प्रति इस्तेमाल किया जाता है। इसमें एंटी– ऑक्सीडेटिव, एंटी–म्यूटाजेनिक, एंटी–कैंसर, एंटी–इंफ्लेमेटरी, एंटी–एलर्जी, हेपाटोप्रोटेक्टिव, एंटी–डायबिटिक, एंटी–मोटापा, एंटी बैक्टीरियल और एंटी वायरल गतिविधियों जैसी कई दवाओं के प्रभाव होने की सूचना है।

औषधीय गुण

अन्य औषधीय पौधों की तरह फिश मिंट अर्थात मत्स्य पुदीना में भी फ्लेवोनोइड्स, वाष्पशील तेल और अल्कलॉइड जैसे सक्रिय तत्व होते हैं। इस वनस्पति पोधे के प्रमुख पहचाने जाने वाले फ्लेवोनोइड्स रूटीन, क्वेरसेट्रिन, आइसोक्वेरिट्रिन और हाइपरिन आदि हैं जो एंटीनियोप्लास्टिक, एंटीऑक्सिडेंट, एंटी–म्यूटाजेनिक और फ्री रेडिकल स्केवेंजिग गतिविधियों को प्रदर्शित करते हैं। प्रमुख वाष्शील; houttuynin, myrcene, decanal, cis-ocimene और bornyl acetate हैं। फिश मिंट अर्थात पुदीना से

आवश्यक तेल में अधिक मोनोट्रेप्स और मोनोटेर्पनोइड्स होते हैं, जिनमें से उलतबमदम सबसे प्रचुर मात्रा यौगिक है। Myrcene में रोगाणुरोधी अम्लता होने की सूचना है और यह एंटीबायोटिक दवाओं की गतिविधियों को भी बढ़ाता है।

जीवाणुरोधी एवं फफूँदनाशी गतिविधि बैक्टीरियल संक्रमण के उपचार में फिश मिंट अर्थात पुदीना के पानी का अर्क लाभकारी होता है। फुसोबेक्टेरियम नुक्लेअतम, स्ट्रेप्टोकोकस म्यूटन्स और कैंडिडा अल्बिकन्स के प्रति इसके एंटीबायोफिल्म प्रभावो के साथ, मौखिक संक्रामक रोगों को रोकने में इसके संभावित उपयोग के लिए मत्स्य मिंट का भी सुझाव दिया गया है। इसके इथेनॉलिक अर्क में मेथिसिलिन–प्रतिरोधी स्टेफाईलोकॉकस ऑरियस (एमआरएसए) के खिलाफ जीवाणुरोधी प्रभाव होने की सूचना है, जबकि अर्क में मल्टी ड्रग प्रतिरोधी इस्चेरीचिया कोलाई के प्रति सक्रियता देखी गयी है।

विभिन्न रिपोर्ट में विभिन्न जीवाणुओं के प्रति इसकी जीवाणुरोधी गतिविधि के बारे में भी उल्लेख किया गया है, जिसमें स्टेप्टोकोकस न्यूमोनिया, शिजेला डीसेंटरी, बेसिलस सेरेस, बेसिलस सबटिलिस, विब्रियो कोलेरा, एंटरोकोकस फेसेलिस, स्ट्रेप्टोकोकस पाइयोजिनिस क्लेबसिएल्ला न्यूमोनि, सेरासिया मार्सेसेंस, सरसीना यूरी आदि सम्मिलत हैं।

वायरस रोधी गतिविधियां

फिश मिंट के अर्क के एंटी वायरल गतिविधि को प्रदर्शित करने के लिए कई शोध किए गए हैं। ईष्टतम खुराक पर यह स्यूडोरेबीज वायरस द्वारा वेरो जीवकोष के संक्रमण को रोकता है। एक जैवसक्रिय यौगिक, नॉरसेफ्राडियन बी को पोधे से पृथक करके हर्पीज सिम्पलेक्स वायरस–1 (एचएसवी–1) और एचएसवी–2 के प्रति निरोधात्मक गतिविधियां दिखायी गयी हैं। फिश मिंट से Quercitin नामक यौगिक पोर्साइं महामारी दस्त (PEDV), इन्फ्लूएंजा ए और एचआईवी–1 के वायरल प्रतिकृति को रोकता है। यह भी दावा किया जाता है कि फिश मिंट के जलीय अर्क डेंगू वायरस सेरोटाइप 2 के इंट्रासेल्युलर वायरल आरएनए प्रतिकृति को दृढता से रोकती है। इसकी प्रतिक्रिया एएंटेरोवायरस ए 71 और कॉक्ससैकेरवाइरस ए 16, हाथ–पैर और मुंह की बीमारी के मुख्य रोगजनकों, संक्रामक ब्रोंकाइटिस वायरस (आईबीवी), माउस हेपेटाइटिस वायरस, मुराईन कोरोनावायरस, रोटोवायरस, राइनोवायरस और महामारी रक्तस्त्रावी बुखार वायरस के खिलाफ इसकी गतिविधि भी बताई गई है। यह पौधा पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना के पारंपरिक चीनी चिकित्सा प्रशासन द्वारा प्रस्तावित घटकों में से एक था, जो गंभीर तीव्र श्वसन सिंड्रोम (SARS) के प्रति निरोधक के रूप मे था।

मत्स्य स्वास्थ्य पर प्रभाव

फिश मिंट के अर्क का वर्ण–संकर कैट फिश के वृद्धि प्रदर्शन, आहार उपयोग हेमाटोलौजिकल सूचकांको पर पड़ने वाले प्रभाव का मूल्यांकन करते हुए शोधकर्ताओं ने बताया कि फिश मिंट के पत्तों के अर्क छिड़के गये आहार देने से मछली के औसत दैनिक वृद्धि (ADG), में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। इसके अलावा विशिष्ट वृद्धि दर (SGR), आहार दक्षता (FE), प्रोटीन दक्षता अनुपात (PER), कुल लाल रक्त कोशिकाओं और कुल सफेद रक्त कोशिकाओं में वृद्धि के साथ ही कम आहार रूपान्तरण दर (FCR) देखी गयी। यह भी दावा किया गया है कि फिश मिंट का अर्क फिंगरलिंग के उपचर्या में आवेदन के लिए उपयुक्त है। इसके अलावा, एक अन्य शोधकर्ताओं ने फिश मिंट पाउडर खिलाया गया नील तिलिया पर प्रयोगात्मक अध्ययन के साथ मछली की प्रतिरक्षा पर फिश मिंट के लाभकारी प्रभाव की सूचना दी है। प्रभाव में शामिल हैं, बेहतर त्वचा श्लेम लाइसोजाइम गतिविधि, त्वचा में श्लेम पेरोक्सीडेज गतिविधि में सुधार, बेहतर सीरम लाइसोजाइम, पेरोक्सीडेज तथा अल्टरनेटिव कॉम्प्लीमेंट जो इसकी त्वचा, श्लैष्मिक और सीरम प्रतिरक्षा को बढ़ाने की क्षमता की सूचना देती है।

मात्स्यिकी में एंटीबायोटिक्स/एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध (ए.एम.आर.): "भविष्य के लिए एक चुनौती"

विकाश साहू, एस.एम श्रीवास्तव, चन्द्र भूषण कुमार, आनुतोष पारिया एवं गौरव राठौर
मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन एवं विदेशज विभाग, भा.कृ.अनु.प.–रा.म.आनु.सं. ब्यूरो, लखनऊ

देश में एंटीबायोटिक्स/एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध (ए.एम.आर.) वर्तमान में स्वास्थ्य प्रबंधन विभाग के लिए एक भयानक व उभरती हुई समस्या बनती जा रही है। वास्तविकता यह है की हममें बहुत से लोगों को इस नये खतरे के बारे मे कुछ खास नहीं जानते है, इसलिए इसकी भयावहता से भी अनभिज्ञ हैं। मत्स्यपालन के क्षेत्र में भी आज इस नये संकट का प्रवेश हो चुका है, जिसके अध्ययन व जागरूकता हेतु आईसीएआर (ICAR) एवं खाद्य व कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) की सहायता से INFAAR (Indian Network for fisheries and Animal Antimicrobial Resistance) परियोजना चलाई है। इस परियोजना के अंतर्गत देश में मत्स्यपालन के क्षेत्र में इस संकट का अध्ययन करके, मत्स्य स्वास्थ प्रबंधन के नई चुनौतियों का अध्ययन व पर्यावरण पर इसके प्रभाव का परीक्षण किया जा रहा है, इसके अतिरिक्त जलकृषि मे एंटीबायोटिक उपयोग पर एक नेशनल एक्शन प्लान बनाना है।

एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध (ए.एम.आर.) क्या है?

आज से लगभग 90 वर्ष पहले कई बीमारियों से लड़ने के लिये चिकित्सा जगत में कोई कारगर दवा नहीं थी। लेकिन 1928 में जब अलेक्जेंडर फ्लेमिंग ने पहली एंटीबायोटिक 'पेन्सिलीन' का अविष्कार किया तो यह खोज जीवाणुओं के संक्रमण से निपटने में जादू की छड़ी की तरह काम करने लगी। एंटीबायोटिक के अविष्कार ने चिकित्सा जगत को एक मैजिक बुलेट थमा दी। समय के साथ–साथ एंटीबायोटिक का धड़ल्ले से प्रयोग होने लगा। लेकिन एंटीबायोटिक खा–खाकर बैक्टीरिया इतना ताकतवर हो गया है कि उस पर एंटीबायोटिक दवाओं का असर कम होने लगा। धीरे–धीरे यही प्रभाव अन्य सूक्ष्मजीवों (micro & organism) के संदर्भ में भी देखने को मिलने लगा, तथा एंटीफंगल, (Antifungal) एंटीवायरल (Antiviral) और एंटीमलेरियल (ntimalarial) ड्रग्स (दवाओं) का भी असर कम होने लगा।

अतः एंटीबायोटिक प्रतिरोध (antibiotic resistance) ही नहीं बल्कि एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध (Antimicrobial resistance–एएमआर) आज समस्त विश्व के लिये एक बड़ा खतरा है। क्योंकि इसके कारण सामान्य से भी सामान्य बीमारियों के कारण मौत हो सकती है। एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध विकसित करने वाले सूक्ष्मजीवों को "सुपरबग" के नाम से जाना जाता है। सुपरबग एक ऐसा सुक्ष्मजीवी है, जिस पर एंटीमाइक्रोबियल ड्रग्स (दवाओं) का प्रभाव नहीं पड़ता।

एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध क्यों?

20वीं सदी के शुरुआत से पहले सामान्य और छोटी बीमारियों से भी छुटकारा पाने में महीनों लगते थे, लेकिन एंटीमाइक्रोबियल ड्रग्स (एंटीबायोटिक, एंटीफंगल, और एंटीवायरल दवाएँ) के इस्तेमाल से बीमारियों का त्वरित और सुविधाजनक इलाज होने लगा। लेकिन विज्ञान यहाँ भी वरदान के साथ–साथ अभिशाप होने के अपने गुण को चरितार्थ कर गया, इन ड्रग्स का धड़ल्ले से प्रयोग होने लगा। एंटीबायोटिक समेत एंटीमाइक्रोबियल ड्रग्स का अत्याधिक सेवन स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है। एंटीमाइक्रोबियल ड्रग्स के अधिक और अनियमित प्रयोग से इसका प्रभाव धीरे–धीरे कम होता जाता है। विदित हो कि प्रत्यके व्यक्ति एक सीमित स्तर तक ही एंटीबायोटिक ले सकता है, इससे अधिक एंटीबायोटिक लेने से मानव शरीर एंटीबायोटिक के प्रति अक्रियाशील हो जाता है। प्रायः देखा जाता है कि वायरस के कारण होने वाली बीमारियों में भी लोग जानकारी के अभाव के चलते एंटीबायोटिक दवा लेने लगते हैं। "किसी नए प्रकार के आक्रमण से बचाव के लिये एक अलग प्रकार का प्रतिरोध विकसित करना प्रत्येक जीव का स्वाभाविक

गुण है और सूक्ष्मजीवियों के साथ भी यही हुआ है''। गौरतलब है कि एंटीमाइक्रोबियल ड्रग्स के अत्यधिक उपयोग ने सूक्ष्मजीवियों को प्रतिरोध विकसित करने का अवसर उपलब्ध कराया है।

एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध कैसे?

दरअसल यह एक सामान्य सा विचार है कि एंटीमाइक्रोबियल ड्रग्स के इस्तेमाल से धीरे–धीरे कुछ सुक्ष्मजीवी इतने शक्तिशाली हो जाते हैं कि यही एंटीमाइक्रोबियल ड्रग्स उनके सामने प्रभावहीन साबित होने लगते हैं। लेकिन, इस संबंध में वैज्ञानिकों का मानना है कि वातावरण में मौजूद कुछ बैक्टीरिया के संपर्क में आकर मानवों में रोग के कारण बनने वाले सुक्ष्मजीवी, उनसे उनके प्रतिरोधक गुण लेकर सुपरबग बन जा रहे हैं। प्रकृति में सबसे पहला एंटीबायोटिक–प्रतिरोधक जीन लाखों साल पुराना है। लेकिन जब मानवों ने 1940–50 के दशक में एंटीबायोटिक दवाओं का निर्माण शुरू किया, तो एक नाटकीय बदलाव आया। पशुपालन उद्योग, दवा निर्माता कंपनियों और अस्पतालों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों के जरिये पर्यावरण में बड़ी संख्या में ऐसे एंटीबायोटिक–प्रतिरोधक जीन आ गए हैं, जो आसानी से मानव शरीर के अंदर सुपरबग बना सकते हैं।

वर्ष 2009 में नई दिल्ली से लौटे एक स्वीडन के नागरिक में एक घातक प्रतिरोधक जीन पाया गया था और वैज्ञानिकों ने इसका नाम 'नई दिल्ली मेटलो–बीटा–लैकटमैस–1' (New Delhi metallo & beta & lactamase 1) रखा था, जिसे एनडीएम–1 भी कहा जाता है। अगर भारत तेजी से इस संबंध में प्रयास नहीं करता है तो फार्मा क्लस्टरों से निकलने वाले अपशिष्ट जल से एनडीएम–1 जैसे कई नए प्रतिरोधक जीन जन्म ले सकते हैं और यह भारतीयों के साथ–साथ दुनिया भर में हजारों लोगों के लिये मौत को दावत देने के समान होगी। एंटीमिक्रोबियल प्रतिरोध (एएमआर) से दुनिया भर में करीब 7 लाख लोगों की मौत हो रही है और 2050 तक मृत्यु का आंकड़ा 1 करोड़ तक पहुंच सकती है। इन मौतों में बढ़ोतरी का प्रमुख कारण एंटीबायोटिक दवाओं का अनियंत्रित इस्तेमाल है।

अब तक भारत का एंटीबायोटिक प्रतिरोध अभियान अनावश्यक एंटीबायोटिक के इस्तेमाल को रोकने पर केन्द्रित रहा है, किन्तु अब ''द 2017 नेशनल एक्शन प्लान (NAP) ऑन एंटीमिक्रोबियल रेजीस्टेंस'' में पहली बार इन दवा निर्माताओं द्वारा वातावरण मे डम्प किए जा रहे एंटीबायोटिक को समुचित तरीके से निष्क्रिय किए जाने कि बात की जा रही है। अतः NAP ऑन एंटीमाइक्रोबियल रेसिस्टेंस' इस दिशा में किया जा रहा एक महत्त्वपूर्ण सुधार है।

एंटीबायोटिक दवाओं का कृषि खपत (Antimicrobial usage)

विश्व में एंटीबायोटिक दवाओं का कृषि खपत, जो मुख्य रूप से जानवरों की बीमारी का इलाज एवं विकास को बढ़ावा देने के लिए प्रयोग किया जाता है, 2010 में 63,151 टन होने का अनुमान है और 2030 तक दो तिहाई बढ़ने की उम्मीद है। अनुसंधान बताता है कि पशुओं को दिया गया 75–90% एंटीबायोटिक्स पर्यावरण के माध्यम से पारित होता है, इससे दवा प्रतिरोधी बैक्टीरिया को बढ़ावा देता है जो मनुष्य और जानवरों को संक्रमित करते हैं। हम को सुपरबग से बचाव का उपाय खोजना होगा और इसके लिये अनुसंधान को प्रोत्साहन देना होगा। एंटीबायोटिक के अधिक प्रयोग को रोकने के लिये सरकार ने बिक्री योग्य दवाओं की नई सूची जारी कर उसके आधार पर ही दवा विक्रेताओं को दवा बेचने का निर्देश दिया है। लेकिन कहीं भी आसानी से एंटीबायोटिक का मिल जाना चिंताजनक है। अतः भारत में अंटीबीओटिक बिक्री के निगरानी तंत्र को और चौकस बनाना होगा। एंटीबायोटिक प्रयोग (एएमयू) के लिए एक राष्ट्रीय निगरानी प्रणाली का विकास करना होगा।

मत्स्यपालकों के लिए सुझाव

मत्स्य पालन मे भी एंटीबायोटिक के अधिक इस्तेमाल को रोकने के लिये यह अभियान शुरू किया गया है। ध्यान देने योग्य बात ये है कि विश्व भर में कोई भी फार्मा कंपनी अगले कुछ वर्षों तक कोई भी नई एंटीबायोटिक दवा तैयार नहीं करने वाली है। अतः परिस्थितियों को देखते हुए हमे अपने सीमित एंटीबायोटिक संसाधनो का उपयोग विकट स्थितियों मे ही सावधानी पूर्वक करना चाहिए, जिससे की हम अपना भविष्य व वातावरण स्वक्ष व सुरक्षित बनाए रखें। मछलियों में बीमारी का वास्तविक कारण व गंभीरता की जानकारी के बगैर

उसमे दवा या एण्टीबायोटिक्स का उपयोग करना न सिर्फ मत्स्यपालकों को आर्थिक हानि देगा, अपितु प्रकृति को इसके दूरगामी दुष्परिणाम झेलने पड़ेंगे। अतः मत्स्यपालकों को अपने तालाबों मे यदि कोई गंभीर समस्या दिखाई दे, तभी मत्स्य स्वास्थ विशेषज्ञ की उचित सलाह लेकर उपचार करें। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि मत्स्यपालन में सर्वोत्तम प्रबंधन उपायों का पालन करके, ''इलाज से बेहतर रोकथाम'' रणनीति को अपनाना चाहिए।

संदर्भः–

"The Hindu"

Reference title: Living in a world of emerging microbial resistance.

Reference link: http://www.thehindu.com/opinion/op-ed/living-in-a-world-of-emerging-microbial-resistance/article21339943.ece

Reference title: The superbugs of Hyderabad.k~

Reference link: https://www.thehindu.com/opinion/op-ed/the-superbugs-of-hyderabad/article20536685.ece

"Punjab Kesari"

https://www.punjabkesari.in/apki-kalam-se/news/antibiotic-resistance-is-a-serious-threat-to-public-health-796270

ईश्वर चित्र में नहीं
चरित्र में बसता है
अपनी आत्मा को
मंदिर बनाओ।

–आचार्य चाणक्य

संरक्षण

अण्डजनन शाला (हैचरी) में सुनहरी महाशीर, टौर प्युटिटोरा के बीज उत्पादन का प्रबंधन

देबाजीत सर्मा एवं एम. एस. अख्तर
भा.कृ.अनु.प.—शी.मा.अनु. निदेशालय, भीमताल

सुनहरी महाशीर जिसे मुख्यतः टौर प्युटिटोरा के रूप में भी जाना जाता है, एक बड़ी साइप्रिनिड वर्ग की हैं। यह ऐशिया के साफ—सुथरे एवं तेज बहने वाले जलस्त्रोतों में तथा दक्षिण—पूर्वी ऐशियाई वनों की ऊष्णीय नदियों से लेकर हिमालय के ठण्डे जल स्त्रोतों एवं नदियों में वास करती है। भारतीय उपमहाद्वीप में महाशीर को ''भारतीय जल—प्रणाली की राजा'' मछली के रूप में जाना जाता है।

महाशीर पूरे विश्व के आखेटकों को अपनी ओर आकर्षित करने के साथ—साथ उनको अद्वितीय मनोरंजन भी प्रदान करती है। अपने वृहद आकार के कारण महाशीर मत्स्य पालकों के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। खाद्य मछली के रूप में यह सम्मानित होने के साथ ही ये मछली उत्तर तथा उत्तर—पूर्वी भारत में बाजार दर से ऊँची कीमत पर बिकती है। एक समय अपनी प्रचुरता होने के बावजूद आज इस मछली के आकार और संख्या में बहुत कमी आयी है। अतः प्राकृतिक जल स्त्रोतों में इनकी विलुप्ति गंभीर समस्या है। जल—पर्यावरण प्रदूषण, पारिस्थितिकी तंत्र में विभिन्न जैविकी परिवर्तनों जैसे—नगरीकरण, अवैध मत्स्य संदोहन, मछली पकड़ने के दोषपूर्ण तरीके जैसे—करंट, विषैले रसायन, डायनामाइट विस्फोट आदि के प्रयोग द्वारा विभिन्न प्राकृतिक जल—स्त्रोतों में इनकी संख्या में कमी आयी है। जिसके परिणाम स्वरूप देश के अधिकांश भागों में मत्स्य पालक समुदाय इसको कम पालने लगे है। इससे निकट भविष्य में ये प्रजाति संकटग्रस्त हो सकती है। मत्स्य उत्पादन को बढ़ावा देने एवं इसके संरक्षण हेतु कैप्टिव ब्रीडिंग एवं कल्चर टैक्नीक्स प्रमुख साधन है।

टौर प्युटिटोरा (सुनहरी महाशीर) हिमालयी क्षेत्र की एक बहुमूल्य देशी मत्स्य प्रजाति है। मलेशिया, इन्डोनेशिया, वियतनाम, पाकिस्तान, नेपाल, लाओस, कम्बोडिया, थाइलैण्ड, मयन्मार, चाइना, बंग्लादेश, अफगानिस्तान सहित सिक्किम, जम्मू एवं कश्मीर, असम तथा मध्य हिमालयी क्षेत्र की सभी झीलों, नदियों, धाराओं आदि से टौर की लगभग 20 विभिन्न प्रजातियों का पता लगाया गया है। प्राकृतिक जल—स्त्रोतों में ये मछली लम्बाई 2.75 मी. (9 फिट) तथा भार 54 किग्रा. (118 आई.बी.) तक होती है। यद्यपि आज इस प्रकार के आकार वाली मछली यदा—कदा ही देखने को मिलती है।

आहार—व्यवहार

व्यस्क स्तर में सुनहरी महाशीर को सर्वाहारी मछली के रूप में जाना जाता है। प्रारम्भिक अवस्था में अपने खुले मुंह एवं बड़े आकार के कारण इसे मांसाहारी भी माना जाता है। महाशीर को हरे शैवाल—तन्तु, कीट—पतंग, सूक्ष्म मोलस्क एवं पत्थरों पर लगी हरी काई (शैवाल) आदि को भी खाते हुए पाया गया है। यह पता लगाया है कि सुनहरी महाशीर अंगुलिकाओं के भोजन में कीड़े—मकौड़े (81.4%), पादप (15.9%), एवं मत्स्य सहित (1.6%) अन्य दूसरे पदार्थ शामिल है। वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि महाशीर मछली रूक—रूक कर भोजन ग्रहण करती है। हरे शैवाल तन्तु, कीड़े—मकौड़े, पत्थरों की चिपचिपी पपड़ी व अन्य जलीय पौधे आदि तत्व महाशीर के पेट से प्राप्त हुए है। हरे—नीले शैवाल, हरे शैवाल, सूक्ष्म एवं सूक्ष्म नितल जीव—समूह (डाइटम युक्त) आदि इस प्रजाति के पसंदीदा भोजन है। नावीकूला, एम्फोरा, सिम्बैला, साइनिड्रा, फैजिलैरिया, ओसिला टोरिआ, स्पाइरोगेरा, ट्राइबोनिमा, एरिल्ला, कीराटेला, एवं चिरोनोमस आदि विभिन्न प्रजातियों की आंतों से प्राप्त हुए है।

महाशीर फार्म का स्थान चयन

सफल मत्स्य पालन के लिए फार्म हेतु स्थान का चयन बहुत महत्वपूर्ण होता है। फार्म किस प्रकार का होना चाहिए और इसके निर्माण में उपलब्ध जल की मात्रा व फार्म की

उस जल को वहन करने की क्षमता का भी फार्म के निर्माण में ध्यान रखा जाना चाहिए।

हैचरी में आने वाला जल–स्त्रोत शुद्ध एवं उचित मात्रा में होना चाहिए। हैचरी में आपूर्तित जल में ऐसे प्रदूषित एवं विषैले तत्व नही होने चाहिए जो मछली के लिए अहितकारी हों। महाशीर पालन के लिए प्राकृतिक रूप से उपलब्ध जल स्त्रोत सबसे अच्छा उपाय है। इस प्रकार उपलब्ध जल का तापक्रम अधिक अवक्रमित नही होता। जल के आक्सीजन तत्व बहुत प्रभावकारी होते हैं तथा सभी ऋतुओं में वर्षभर इनका स्तर 7.0 से 9.0 मि.ग्रा./ली. होना चाहिए। प्रजनन के समय जल का तापक्रम 20.0 से 25.0 डिग्री से. ग्रे. तथा पोषण अवधी में थोड़ा इससे अधिक हो सकता है।

प्रकृति द्वारा प्रदत्त बहते हुए झरने सबसे बहुमूल्य संसाधन हैं चाहे इनका प्रयोग कुछ भी हो। अतः इसके संरक्षण का विचार किया जाना चाहिए। महाशीर फार्म को होने वाली जल की आपूर्ति सीधे प्राकृतिक स्त्रोत अथवा नदियों से होनी चाहिए। इन स्त्रोतों के किनारों पर हल्के बांध बनाकर भी पानी के बहाव को फार्म की ओर मोड़ना पर्याप्त होगा। अधिकतर मत्स्य प्रक्षेत्रों का निर्माण इन हल्के बांधों और तटबन्धों के पास ही करना चाहिए। फार्म में भोजन उपलब्ध कराने से पहले यह बेहतर होगा कि उसके पानी को सघन–संग्रह प्रकोष्ठ से गुजारा जाए। प्राकृतिक जल स्त्रोतों, नदियों एवं नालों में इतना पर्याप्त पानी होना चाहिए कि निस्पन्दन, अन्तः स्पन्दन एवं वाष्पीकरण से होने वाली हानियों की प्रतिपूर्ति हो सके। फार्म में पानी का वितरण इस प्रकार नियन्त्रित होना चाहिए कि उसकी प्रत्येक ईकाई में आक्सीजन युक्त ताजे पानी को प्राप्त करने के लिए अलग–अलग प्रवेश द्वारा हो। फार्म में पानी की सुविधा के साथ ऊपर एक टैंक लगाना अच्छा विकल्प होता है।

सुनहरी महाशीर हेतु पोषणशाला (हैचरी) इकाई

पोषणशाला एक ऐसी संरचना है जहां पर अंडों का उत्प्रेरण एवं उद्भवन किया जाता है। यह उन अवयस्क तथा वयस्क जीरों के लिए भी एक अभिक्रियात्मक ईकाई है जहां पर ये अपना प्रारम्भिक भोजन ग्रहण करने तक रहते हैं और यहीं से अण्डों को उनके उद्भवन तथा उसके विकास की अवस्था तक पहुँचाने के लिए नर्सरी टैंको में स्थानान्तरित किया जाता है। कम कीमत पर हैचरी निर्माण के लिए एक चौखट (फ्रेम) के चारों ओर टिन अथवा प्लास्टिक की चादर लगायी जाती है। लम्बी अवधी के कार्य के लिए इस संरचना का निर्माण लकड़ी अथवा सीमेंट की ईटों से कक्षों की भांति भी किया जा सकता है। इसका फर्श सीमेंट का और ढलान वाला होना चाहिए ताकि फर्श की सफाई सरलतापूर्वक की जा सके । हैचरी की सुरक्षा इस प्रकार की जानी चाहिए कि उसमें सीधे सूर्य का प्रकाश न पड़े, साथ ही हैचरी साफ–सुथरी जगह पर होनी चाहिए।

ट्रफ

हैचरी ट्रफ एवं ट्रे, अण्डों के निषेचन एवं उद्भवन तथा जीरों से लेकर अंगुलिका स्तर तक के लिए हैचरी की आधारभूत आवश्यकता हैं। हैचरी ट्रफ एवं ट्रे विभिन्न आकार–प्रकार के हो सकते है। लेकिन इन ट्रफों में अंडो, जीरों व अंगुलिकाओं के पालन हेतु पर्याप्त पानी को वहन करने की क्षमता होनी चाहिऐ। महाशीर के अण्डों को पालने के लिए आयताकार ट्रफों (220x50x40 से.मी. या 220x60x50 से.मी.) का प्रयोग किया जा सकता है। महाशीर के अण्डों और जीरों को पालने के लिए इन ट्रफों की गहराई को 10–25 से.मी. बढ़ाया जा सकता है। ये ट्रफ कंक्रीट, एल्युमिनियम, कलईदार युक्त लोहे की चादर आदि के बने हो सकते हैं किन्तु इनके स्थान पर फाइबर ग्लास के ट्रफों को महत्ता दी जानी चाहिए। हैचरी में ट्रफ एक क्रम में लगे होने चाहिए ताकि स्त्रोत से पानी का बहाव पहले अथवा प्रधान ट्रफ में तत्पश्चात अन्य ट्रफों में आ सके। अतिरिक्त जल की आपूर्ति प्रत्येक ट्रफ में अवमुक्त आक्सीजन को बढ़ा देता है। पानी के यंत्रण हेतु प्रत्येक ट्रफ में अलग–अलग प्रवेश द्वार और निकास द्वार होने चाहिए। एक ट्रफ में कम से कम पाँच हैचिंग ट्रे होनी चाहिए जिसमें 20,000–25,000 निषेचित अण्डों को रखा जा सके।

ट्रे

हैचरी ट्रे के आकार–प्रकार ट्रफों के अनुसार होने चाहिऐ। प्रत्येक ट्रफ में लगभग 4–5 ट्रे फिट होनी चाहिए। ये ट्रे फाइबर ग्लास/लकड़ी के फ्रेम की होनी चाहिऐ। ये वर्गाकार एवं आयताकार हो सकती हैं। प्रत्येक हैचिंग ट्रे के नीचे सिंथेटिक कपड़े का जाल (0.2 मि.मी. छिद्र वाला

जाल) फिट होना चाहिए ताकि जल का निरंतर संचरण होता रहे। प्रत्येक ट्रे की ऊँचाई 3–4 इंच होनी चाहिए। इन ट्रे को उनके बाह्य आकार के अनुसार ट्रफ की लम्बाई के अनुरूप एक क्रम में लगाकर रखा जाता है। प्रत्येक ट्रे में 40,000–5,0000 निषेचित अण्डों को रखने की क्षमता होती हैं।

सम्बर्द्धन तालाब

नर्सरी तालाब भी हैचरी की एक अन्य प्रमुख ईकाई है जहां पर महाशीर के अवयस्क जीरों का पालन–पोषण होता है। ये तालाब अथवा टैंक भिन्न–भिन्न आकार–प्रकार के हो सकते हैं किन्तु अधिक गहरे नही हो सकते। महाशीर के नन्हे जीरों का कुशल पालन कम पानी वाले टैंको में सम्भव है। आयताकार नर्सरी टैंकों का आकार 2.0x0.5x0.6 मी. या 2.0x0.75x0.60 मी. तथा गोलाकार टैंको का 2.2x0.75 या 0.60 मी. सुझाया गया है। पानी के उचित निकास के लिए प्रवेश द्वार और निर्गम द्वार की सुविधायुक्त फाइबर ग्लास/सीमेंट के टैंकों का भी प्रयोग किया जा सकता है। इन नर्सरी तालाबों में 3–4 ली./मिनट की दर के बहाव वाले टैंको में 0–3 माह के जीरों का पालन–पोषण करना चाहिए।

पालन–पोषण तालाब

महाशीर अंगुलिकाओं के पालन–पोषण हेतु उचित स्थान उपलब्ध होना चाहिए। फार्म में समुचित जल आपूर्ति वाले मिट्टी के दो प्रकार के तालाबों का निर्माण किया जा सकता है। पहला, छोटा तालाब (5.0 x 1.5 x 0.75 मी.) जिसमें नर्सरी तालाबों से वयस्क जीरों को तुरंत लाकर रखा जाता हैं और दूसरा बड़ा तालाब (10.0 x 4.0 x 1.0 मी.) जिसमें एक वर्ष की मछलियों को पाला पोषा जाता है। इन तालाबों/टैंकों का निर्माण सीमेंट अथवा फाइबर ग्लास से इस प्रकार किया जा सकता है कि उनमें लगातार जल के पुर्नशोधन की सुविधा हो (बहाव दर 4–6 ली./मिनट)। इन तालाबों 1000 मी^{2} की दर से जीरों को संचयित किया जा सकता है।

बाह्य प्रवेश द्वार

महाशीर फार्म का बाह्य जल–प्रवेश द्वार काफी चौड़ा होना चाहिए ताकि फार्म नर्सरी, रिअरिंग व स्टाकिंग पौण्डस से निकालने वाले जल को धारण कर सके। भोजन द्वार को सीधे प्रवेश द्वार के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है ताकि प्रजनक मछली के भण्डारण के समय पानी की आवश्यकता होने पर प्रवाह दर को बढ़ाया जा सके। प्रजनन–काल में जब प्रजनक–मछली को बहते पानी की आवश्यकता होती है तब बाह्य जल प्रवेश द्वार प्रजनक द्वार का भी कार्य कर सकता है।

जल–आपूर्ति

उपलब्ध जल की मात्रा को देखकर ही यह निर्णय लेना चाहिए कि फार्म किस प्रकार का होना चाहिए और उसकी क्षमता कितनी होनी चाहिए। महाशीर पालन के विभिन्न स्तरों में पानी की पर्याप्त आवश्यकता होती है। जिसकी सही जानकारी नीचे दी गई है:

अण्डजनन

यह पता चला है कि सुनहरी महाशीर पूरे वर्ष भर रूक–रूक कर कुछ अंतरालों में अंडे देती है। किंतु मानसून काल में इसका अण्डजनन चरम पर होता है। यह मछली स्वच्छ पानी में प्रजनन और

पानी का प्रवाह	पालन–पोषण
1 ली./मिनट	20–28 डिग्री से.ग्रे. पर 2000 अंडों का उद्भवन एवं पालन–पोषण
3–4 ली./मिनट	20–27 डिग्री से.ग्रे. पर 2000 जीरों का (0–3 माह) पालन–पोषण
4–6 ली./मिनट	1500 अंगुलिकाओं का पालन–पोषण (4–9 माह की आयु)
जल प्रवाही पोषण शाला (हैचरी)	
उर्ध्वस्थ (ऊपरी) टैंक	5 मी.की ऊँचाई पर 1000 ली. के टैंक स्थापना
हैचरी टैंक	जस्ते की चादर अथवा 200x60x30 से.मी. की फाइबर ग्लास की
हैचिंग ट्रे	50x30x10 से.मी. का 1 मि.मी. मैस साइज का सिंथेटिक जालीदार कपड़ा जिसमें 5000–6000 अण्डे संचयित किऐ जा सकें।

विस्थापन करना पसंद करती है। बाढ़ के समय महाशीर नदियों के ऊपरी क्षेत्रों को बढ़ती है तथा तय करती है। यह अपने अण्डे गड्ढो में स्थित पत्थरों की शरण में देती है यह एक बार में गुच्छों की तरह अंडे देती है और यही प्रक्रिया पूरे प्रजनन काल में रूक–रूक कर दोहराती रहती है। यह देखा गया है कि महाशीर मुख्यतः वर्षा के आगमन पर ही अण्डे देती है। महाशीर वर्ष में एक से अधिक बार प्रजनन करती है। मादा महाशीर के प्रजनन की पांच भिन्न–भिन्न स्तरों की पहचान की गयी है।

ये हैं–प्रथम स्तर (मैच्योर वरजिन्स)

द्वितीय स्तर (मैच्योरिंग वरजिन्स)

तृतीय स्तर (राइपनिंग)

चतुर्थ स्तर (राइप)

पंचम स्तर (फुली राइप)

कृत्रिम प्रजनन

प्राकृतिक जल स्त्रोतों में महाशीर की संख्या में वृद्धि के अलावा यह भी आवश्यक है कि इसका सम्बर्धन कर इनके बीजों को बड़े पैमाने पर विभिन्न नदियों, झीलों एवं तालाबों आदि में डाला जाऐ। पहले महाशीर के बीजों को प्राकृतिक स्त्रोतों से एकत्रित किया जाता था किंतु अब इनको कृत्रिम प्रजनन के द्वारा उत्पादित किया जाता है।

प्रजनन एवं पालन–पोषण

चयनित प्रजनकों को पिछले वाले (पूंछ की ओर) हिस्से से दबाकर उनके अण्डों और शुक्र रस को निकाला जाता है। यह कार्य बड़ी सावधानीपूर्वक किया जाता है। अण्डों को प्लास्टिक की ट्रे में एकत्र करके उनके ऊपर शुक्र रस को फैलाया जाता है। अण्डों और शुक्र रस (मिल्ट) को पक्षी के पंख की सहायता से 5 मिनट तक अच्छी तरह से मिलाया जाता है। तत्पश्चात अण्डों को आक्सीजन युक्त शुद्ध पानी में 3–4 मिनट तक इस प्रकार धोया जाता है कि शेष बचा हुआ शुक्र रस साफ हो जाए। हैचिंग ट्रे में रखने से पूर्व इन अण्डों को साफ पानी में एक अन्य में ट्रे में 25–20 मिनट तक छाया में रख दिया जाता है ताकि ये अण्डे कठोर हों जाऐं। ये निषेचित अण्डे सुनहरे भूरे और हल्के पीले रंग के हो जाते है। निषेचित अण्डों की प्रतिशतता 90–100% तक होती है। टौर प्युटिटोरा की उद्भवन–अवधी 22–24.0 डिग्री से. ग्रे. जल के तापक्रम पर 80–96 घण्टे होती है। एक बार जब अण्डपीत पूर्ण रूप से अवशोषित हो जाता है और जीरा (स्विम अप–फ्राई) स्वतंत्र रूप में इधर–उधर घूमना आरम्भ कर देते हैं तो उनको 8000 से 10,000 प्रति टैंक की दस से प्रति मिनट 2–3 ली. जल–प्रवाह वाले नर्सरी टैंकों में स्थानान्तरित कर दिया जाता है। तरूण अंगुलिकाओं को कृत्रिम आहार दिया जाता है। खाद्य योग्य एवं प्रजनक संग्रहों में वृद्धि को दृष्टि से प्राकृतिक बीजों अथवा हैचरी (पोषणशाला) में उत्पादित बीजों को मिट्टी के तालाबों, सीमेंट के तालाबों तथा बहते पानी के तालाबों अथवा केजों में संग्रह किया जा सकता है।

अण्डों का हवाई–हस्तान्तरण

मछली के हस्तान्तरण के लिए पी. वी.सी. फाइबर ग्लास, लोहे अथवा एल्युमिनियम निर्मित विभिन्न आकार–प्रकार के प्लास्टिक थैले या कंटीनरो का प्रयोग किया जाता है। अनुकूलन एवं हस्तान्तरण के दौरान मछली लगातार चोटिल होते रहती है। यदि मछली के हस्तान्तरण की अवधी लंबी है तो उसे 20–40% मि.ग्रा./ली. की दर से एंटीबायटिक्स दिए जा सकते है। हस्तांतरण के दौरान मछलियों को 0.05–0.3% रसोई अपशिष्ट देने से उनकी अत्यधिक सक्रियता और अति संवेदनशीलता को कम कर देती है। हस्तांतरण के समय अत्यधिक भार (coverloading) की सुविधा से बचना चाहिए। हस्तांतरण के पश्चात मछली को प्रवेशित करते समय जल के तापमान एवं उसकी गुणवत्ता को धीरे–धीरे बराबर करना चाहिए।

बीज उत्पादन

महाशीर बीजों के उत्पादन एवं उनके पालन हेतु एक अच्छी हैचरी का होना महाशीर पालन की दिशा में एक बहुत बड़ी रूकावट है। इस दिशा में शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय ने ऐ ठोस कदम उठाते हुए सुनहरी महाशीर के बीज उत्पादन हेतु निदेशालय परिसर में एक इकाई की स्थापना की है साथ ही उसके बीजों को देश की विभिन्न नदियों, झीलों आदि में प्रवेशित कराया है ताकि इस प्रजाति के प्राकृतिक आवासों को बढावा मिलने के साथ–साथ इसके जनन द्रव्य को संरक्षित किया जा सके। हैचरी में उत्पादित बीजों को राज्य मत्स्य विभाग, प. बंगाल, मत्स्य विभाग, सिक्किम सहित दूसरे अन्य विभागों/संस्थाओं आदि को भेजा गया। निदेशालय ने 2001 में कुमायूँ

क्षेत्र की श्यामलाताल झील में भी सुनहरी महाशीर को संचयित किया है जहां इनकी संख्या और आकार में अच्छी वृद्धि हुयी है जिस कारण इस क्षेत्र में पर्यटकों का आकर्षण बड़ा है। यह आशा की जाती है कि महाशीर की पैदावार बढ़ाने के लिए जल स्त्रोतों में इसका अधिकाधिक संचय निरंतर जारी रखा जाए और इनको एक प्राकृतिक अभ्यारण्य के रूप में प्रयोग किया जाए। इस प्रकार के कार्य उन सभी क्षेत्रों में किए जा सकते हैं जहां महाशीर होती है।

निष्कर्ष

हम यह कह सकते हैं कि जो मत्स्य पालक एक लम्बे समय से महाशीर पालन में लगे हुए हैं वे वर्तमान में इस प्रजाति के वजूद के लिए संघर्षशील है। इस प्रजाति को उन्मूलन से बचाने के लिए वैज्ञानिक समुदाय एवं निति–निर्धारकों को गम्भीर प्रयास करने होंगे। इस प्रजाति का पालन एवं शिकारमाही के लिए अत्यधिक संदोहन किया जा चुका है। अतः आगामी अनुसंधानों एवं परियोजनाओं को ध्यान में रखते हुए इस का संरक्षण आवश्यक है। इस हेतु प्रारम्भिक कार्यकर्त्ताओं (जैसे– आखेटकों एवं मत्स्य जीव–वैज्ञनिकों) द्वारा प्रजाति का व्यापक तरीके से अध्ययन कर उसे प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया। यह उन्ही के अध्ययन का परिणाम या जिसकी वजह से भारत में महाशीर अनुसंधान परियोजना की शक्तिशाली नींव पड़ी।

उत्तराखण्ड के पर्वतीय मोटर मार्गों से लुप्त होते मछ्ली-भात के ठिकाने

बिपिन कुमार विश्वकर्मा, प्रीतम काला, दिनेश मोहन, नित्यानन्द पाण्डेय एवं अजय थापा
भा. कृ. अनु. प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

पर्यटन की दृष्टि उत्तराखण्ड न केवल भारत में बल्कि पूरे विश्व मे विख्यात है। विश्वभर से हर साल लाखों सैलानी उत्तराखण्ड छुटियां मनाने और धूमने फिरने आते हैं। उत्तराखण्ड में मनोरम दृश्यों के अलावा यहां की धुमावदार सडकों का सफर कई सैलानियों को खूब भाता है। शायद इसलिए साल दर साल यहां सैलानियों की संख्या पहले से ज्यादा बढ़ रही है।

यहां के प्राकृतिक दृश्यों के अलावा यहां की नदियाँ भी बहुत अधिक दर्शनीय है। यहां की ज्यादातर नदियों के किनारे मोटर मार्ग हैं जो यात्रा को और मनोरंजन और आनन्दित बना देते हैं और इन्ही मार्गो पर कुछ छोटे–छोटे गांव–कस्बे बसे हुये हैं। यहां का पहाडी खाना जो भी खाता है कभी भूल नही पाता। इन पहाड़ी व्यंजनों में प्रमुख है पहाडी ककडी का रायता, आलू पकोड़ी, दाल–भात और झोली भात। मांसाहार का शौक रखने वाले मीट भात और मछली भात का खूब लुत्फ उठाते रहे हैं। मछली भात यहां के सबसे प्रचलित पहाडी व्यंजनों में से एक है। एक दशक पहले आलम था कि मांसाहार परोसने वाला हर दूसरा भोजनालय मछली भात के लिए पहचाना जाता था। इन जगहों की खास बात थी, स्थानीय नदियों से पकडी गई स्वाद और पौषिकता से भरपूर मछलियाँ, जिनमें असेला, महाशीर, बैरिल्स, लोच और लेबियो की प्रजातियां प्रख्यात थी। जो लगभग हर दूसरे भोजनालय में यात्रियों और सैलानियों का एक मुख्य और आर्कषक भोजन हुआ करता था। बहुत कम खर्च पर बेहद पौषिक और स्वादिष्ट खाना मिल जाया करता था।

लेकिन कालान्तर में स्थानीय मछली न मिलने के कारण इन ढाबों और भोजनालयों पर भीड़ धीरे–धीरे घटने लगी। अब हालात ऐसे हो चले हैं कि शायद खोजने पर कोई मछली भात का ठिकाना मिल पाये। जहां कई बार पूछने पर पता चलता है कि जिस मछली भात के लिए आप आये थे वो यहां मिलता ही नही है।

मछली भात ठिकानों के घटने के प्रमुख कारण

1. **मछलियों का अनियंत्रित दोहन**– स्थानीय लोगों द्वारा नदियों में मछलियों का अत्यधिक दोहन हुआ। जिसके कारण नदियों में मछलियों की संख्या घटने लगी। मछलियों के शिकार के ऐसे उपाय भी इस्तेमाल किये गये जो अवैध घोषित थे। जैसे–जहर, करंट व डायनामाइटिंग से मछली का शिकार।
2. **निर्माण कार्य हेतु भूमि कटान से क्षति** उत्तराखण्ड एक विकासशील देश का विकासशील राज्य है जहां नित नये सड़क मार्ग बनते ही रहते है। जिसके लिए पहाड़ों का कटान करना पड़ता है, लेकिन कटान से निकला मलबा नदी में डाल दिया जाता है, जो कि नदी के पानी में अत्यधिक गंधलाहट पैदा कर देता है जो कि मछलियों के प्राकृतिक प्रजनन क्षेत्रों को नुकसान पहुचाता है।
3. **बांधो के निर्माण से क्षति** बाधों के निर्माण से भी मछलियों के प्राकृतिक प्रजनन क्षेत्रों में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और मछलियों का प्राकृतिक पलायन अवरुद्व होता है जो कि नदियों में मछलियों की संख्या में गिरावट का कारण बनता है।
4. **मत्स्य संरक्षण के ज्ञान की कमी**– एक तरफ जहां लगातार अवैध तरीकों से मछलियों का शिकार हो रहा था वही दूसरी तरफ मत्स्य संवर्धन की आवश्यकता से लगभग हर कोई अनभिज्ञ था। किसी ने भी इस बात पर गौर नही किया कि आज मछलियों का जो दोहन हो रहा है वह भविष्य मे क्या प्रभाव डालेगा। मछली के शिकार में ध्यान रखा जाना अत्यन्त आवश्यक है कि शिकार के समय उसका क्या आकार है, जिससे कि यह सुनिश्चित हो सके कि एक मछली अपने जीवनकाल में कम से कम एक बार प्रजनन कर सके ताकि भविष्य के लिए उसकी प्रजाति

का संवर्धन हो सके।

इन्ही सब कारणों से धीरे–धीरे स्थानीय नदियों में असेला, महाशीर, बैरिल्स, लोच और लेबियो की प्रजातियों की मछलियों की संख्या घटती रही है। हांलाकि इन भोजनालयों और ढाबों पर उनकी जगह मछलिया बाहर से मंगवाई जाने लगी, परन्तु बाहर से आयातित मछलियां वो स्वाद कभी नही दे पायी जो स्थानीय नदियों से पकडी गयी मछलियों का होता था। और धीरे–धीरे मछली–भात के लिए मशहूर ये ठिकाने भूतकाल की कहानियां बनते चले गये।

मछली भात के ढाबों को पुर्नजीवित करने के कुछ उपाय

- मछली भात एवं अन्य पहाड़ी व्यजनों को एक पहचान के रुप में स्थापित करने के लिये प्रयत्न किये जायें।
- नुक्कड़ नाटक, सोशल मीडिया आदि के माध्यम से लोगों में मत्स्य संरक्षण के प्रति जागरुकता अभियान चलायें जाये।
- समय–समय पर मत्स्य विभाग द्वारा नदियों में उपयुक्त मछलियों के बीज डालने चाहिये।
- निर्माण कार्यो की पर्यावरण की दृष्टि से समय–समय पर समीक्षा की जानी चाहिये।
- सड़क निर्माण के लिये भूमि कटान का मलबा नदी में ना डालकर डम्पिंग जोन बनाकर डालना चाहिये।
- बाध निर्माण के समय मछलियों के पलायन के लिये फिस लैडर आदि की व्यवस्था की जानी चाहिऐ।
- स्थानीय लोगों को खुद जागरुक होकर मछली के प्रजनन काल में मछली का दोहन रोकना चाहिये।
- मछली भात को नये स्वरोजगार के अवसर के रुप मे देखना चाहिये।

हांलाकि अब भी कुछ जगहों में ऐसे भोजनालय यदा कदा मिल जाते हैं। लेकिन वो भी मछली की खेप के लिये भाग्य के भरोसे रहते हैं। आज आवश्यकता है कि अपनी नदियों और जल श्रोतों को पुर्निजीवित किया जाये। जिसके लिये मछली दोहन और संरक्षण के लिये जन–जागरुकता की आवश्यकता है ताकि मछली भात के ठिकाने पुर्नजीवित हो सके और रोजगार के नये अवसर मिल सकें।

उस काम का चयन कीजिए जिसे आप पसंद करते हों,
फिर आप पूरी जिंदगी एक दिन भी काम नही करेंगें

–कन्फ्यूशियस

शीतजल मात्स्यिकी द्वारा जीविकोपार्जन एवं महिलाओं की सहभागिता

ब्रजेश चन्द्र त्यागी, अमित कुमार जोशी एवं आर. के. आर्या
भा.कृ.अनु.प.—शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

भूमिका

बहुत वर्ष पहले 1976 में कृषि आयोग ने भारत में उपलब्ध जल स्रोतों के महत्व को पहचानते हुए यह सुझाव दिया था कि पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित नदियां, जलाशय, तालाबों आदि में उपलब्ध मत्स्य संपदा, उसके विकास तथा मत्स्य पालन के कार्यक्रमों की रूप रेखा तय कर अनुसंधान किया जाए जिससे इस क्षेत्र में मत्स्य सम्पदा को सुरक्षित रख विकास सम्भव हो और मत्स्य पालन की नयी तकनीक विधियां विकसित कर मत्स्य उत्पादन बढ़ाया जा सके। इसी उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु केन्द्रीय मत्स्य अनुसंधान संस्थान बैरकपुर में शीतजल मात्स्यिकी प्रकोष्ठ का गठन हुआ और अंततः इस केन्द्रीय शीतजल मत्स्य अनुसंधान निदेशालय का दर्जा देकर भीमताल में स्थापित किया गया। मत्स्य अनुसंधान क्षेत्र में काफी कार्य हुआ और नई तकनीक भी विकसित हुयी परन्तु नयी तकनीक पर्वतीय क्षेत्रों के अनुकूल नही बन सकी।

पर्वतीय क्षेत्रों में विषम भौगोलिक परिस्थितियां, साधनों की कमी तथा विभिन्न जलवायु व लोगों का रहन सहन में विविधिकरण होने के कारण मत्स्य उत्पादन तकनीक का विकास करना वास्तव में एक चुनौती थी जिसे केन्द्रीय मत्स्य अनुसंधान निदेशालय भीमताल के वैज्ञानिकों ने स्वीकारा और लगभग 8 वर्षों के अथक प्रयास व अनुसंधान के बाद पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन की नयी तकनीक प्रस्तुत की। इस तकनीक को अपनाते हुए न केवल उत्तराखण्ड बल्कि हिमाचल, सिक्किम, अरूणाचल, मणीपुर, मेघालय आदि के मत्स्य पालक मत्स्य उत्पादन बढ़ाकर अपना जीविकोपार्जन कर रहे हैं और कुपोषण को खत्म करने के साथ अपनी आमदनी में भी बढ़ोत्तरी कर रहे हैं।

मत्स्य पालन के सिद्धान्त

मैदानी क्षेत्रों अथवा समुद्र में उपलब्ध जल की परिस्थितिकी पर्वतीय क्षेत्रों में उपलब्ध जल स्रोत से भिन्न होती है। पर्वतीय क्षेत्रों में पानी का तापक्रम तथा स्थिति उस जल स्रोत के स्थान, उंचाई पर स्थिति, जल प्राप्त करने के स्रोत आदि पर निर्भर करती है। अतः मैदानी क्षेत्रों में पाली जाने वाली मछलीयां यहां रहकर बढ़ नही सकती क्योंकि मछली के शरीर का तापक्रम अस्थिर होता है। वह जिस जल क्षेत्र में रहती है उसी के अनुसार मछली के शरीर का तापमान होता है। मछली की वृद्धि जल के तापमान और जल क्षेत्र में उपलब्ध खाद्य पर निर्भर रहती है।

दूसरे, हर प्रजाति की वृद्धि, पालन योग्य क्षमता इस बात पर भी निर्भर करती है कि मछली का जनेटिक प्रकार, जाति कैसी है तथा रहने अथवा वृद्धि करने हेतु तापक्रम सीमा क्या है।

तीसरे, जल क्षेत्र में उपलब्ध खाद्य अथवा बाहर से दिया जाने वाला भोजन कैसा है और मछली उसे कैसे ग्राह्य करती है यह भी पर्वतीय क्षेत्रों के लिए महत्वपूर्ण है।

चौथा, मत्स्य पालन योग्य प्रजाति की प्रजनन क्षमता, प्रजनन करने का तरीका, उत्प्रेरित प्रजनन द्वारा मत्स्य बीज का उत्पादन आदि ऐसे ही पहलू हैं जिनका ज्ञान न केवल आवश्यक हैं बल्कि इच्छानुसार मत्स्य बीज की उपलब्धता अतिआवश्यक है।

पांचवी बात यह है कि पालने योग्य प्रजाति अन्य प्रजातियों के साथ तालाब में रहने, खाने व वृद्धि के लिए मुकाबला न करती हो तथा रोग न होने या रोग से लड़ने की क्षमता भी ठीक हो।

छठी बात यह है कि मत्स्य पालक को मछली प्रजाति, भोजन, जल पारिस्थितिकी आदि का उचित ज्ञान हो जिससे वह ठीक समय पर फैसले ले सके और सभी पहलुओं में समन्वय बैठा कर मत्स्य उत्पादन बढ़ाकर अपनी सम्पन्नता में वृद्धि कर सके।

पर्वतीय क्षेत्रों में शीतजल

पर्वतीय क्षेत्रों में वे जल स्रोत जहां पानी का तापक्रम 20 डिग्री से.ग्रे. से उपर न जाता हो, शीतजल कहलाते हैं। दूसरे हम यह भी कह सकते हैं कि जिन जल क्षेत्रों में साल्मोनिडी परिवार की मछलियां रह सकती हैं ऐसे ही जल स्रोतों को शीतजल कहा जा सकता है।

भारत के जम्मू कश्मीर, हिमाचल, उत्तराखण्ड, सिक्किम, मेघालय, अरूणाचल, मनीपुर तथा पश्चिमी बंगाल का उत्तरी क्षेत्र, तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक के कुछ पठारी क्षेत्रों में शीतजल स्रोत उपलब्ध हैं। इनकी संख्या अथवा क्षेत्रफल का सही आंकलन तो नही है परन्तु यह कहा जा सकता है कि शीतजल मात्स्यिकी के विकास की अपार संभावनाऐं हैं। उपर अंकित किए गए राज्यों में मत्स्य पालन के हिसाब से प्रत्येक राज्य को तीन श्रेणी में बांट सकते हैं:

1. ट्राउट क्षेत्र (ब्राउन, स्नो तथा रेन्बो ट्राउट) 20–30 प्रतिशत समुद्र तल से 1800 मी. से उपर
2. चाइनीज कार्प क्षेत्र (ग्रास, कामन, सिल्वर कार्प महासीर) 40–60 प्रतिशत समुद्र तल से 800–1800 मी. से उपर
3. भारतीय मेजर कार्प क्षेत्र (रोहू, कतला, मृगल, कामन कार्प) 15–20 प्रतिशत समुद्र तल से 700 मी.

मत्स्य सम्पदा

पर्वतीय क्षेत्रों के जल स्रोतों में लगभग 258 प्रजाति की ही मछलियां पायी जाती हैं। परन्तु मत्स्य वृद्धि/पालन योग्य प्रजाति कुछ ही है और उनके खाने, प्रजनन आदि की समस्याऐं होने के कारण उनका मत्स्य पालन में उपयोग न हो सका। अतः कुछ प्रजाति जैसे रेन्बो ट्राउट, चाइनीज कार्प आदि को शीतजल क्षेत्रों में लाया गया और सफलतापूर्वक पाला जा रहा है।

शीतजल क्षेत्रों में मत्स्य पालन

स्वतंत्रता के पूर्व भी शीतजल क्षेत्रों में मत्स्य पालन की कोशिश की गयी तथा ब्राउन ट्राउट, रेन्बो ट्राउट, कामन कार्प का समावेश किया गया परन्तु वर्ष 1994 तक की स्थिति का अगर अवलोकन करें तो निष्कर्ष है कि:

- जल स्रोत अच्छे, बढ़िया और उत्पादन योग्य हैं
- मत्स्य उत्पादन कम किन्तु उत्तम होगा
- ब्राउन ट्राउट, रेन्बो ट्राउट पाली जा रही है किन्तु केवल राजकीय फार्मों/संस्थानों में
- इसी प्रकार कामन कार्प की कहानी है
- मत्स्य पालन में महासीर, स्नो ट्राउट, दूसरी प्रजातियां, चाइनीज कार्प आदि का न अध्ययन और न ही पालन किया गया
- शीतजल क्षेत्रों में अधिकतर जल क्षेत्रों के सर्वे, परिस्थितिकी, आदि पर ही अनुसंधान कार्य होता रहा है। छोटे व मध्यम आकार के तालाबों में मत्स्य पालन विषय पर कोई विशेष कार्ययोजना नही बन सकी।

केन्द्रीय शीतजल मत्स्य अनुसंधान निदेशालय की भूमिका

अब तक हुए कार्यो की समीक्षा करते हुए वर्ष 1994 में निदेशालय के वैज्ञानिकों ने पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन की नयी तकनीकियां विकसित करने हेतु एक कार्यक्रम तय किया जिसका उद्देश्य था कि पर्वतीय क्षेत्रों में अधिक क्षेत्र में उपयोगी, कम लागत वाली, आसान प्रबन्धन वाली तकनीक विकसित की जाय जो मत्स्य पालकों को सस्ता, अधिक कीमत तथा नगण्य लागत दे सके।

अतः कार्प प्रजाति, ट्राउट, रेन्बो ट्राउट, महासीर, स्नो ट्राउट आदि अन्य प्रजाति का विशेष अध्ययन किया गया। इसके पहलू थे:

1. प्रजाति का जैनेटिक प्रकार व क्षमता
2. वृद्धि के लिए तापक्रम, प्राणवायु, तथा अन्य कारकों की आवश्यक सीमा
3. प्रजाति की वृद्धि, रोगों से लड़ने की क्षमता/बचाव
4. प्रजाति का दूसरी प्रजातियों के साथ रहने, खाने में सहभागिता
5. पालन योग्य प्रजातियों का प्रजनन व बीज उत्पादन / उपलब्धता
6. प्रजातियों के रख रखाव ध्पालन के साधन, ज्ञान, व्यय तथा आमदनी का व्यौरा

इन सभी पहलुओ पर अध्ययन किया गया। विस्तृत अध्ययन चम्पावत मत्स्य प्रक्षेत्र में वर्ष 1994–98 के मध्य पूरा किया गया। अध्ययन के बाद परिणाम बड़े ही उत्साहजनक रहे। अध्ययन के बाद यह निष्कर्ष निकला कि रेन्बो ट्राउट अत्यधिक लागत होने के कारण तथा सुदूर बाजार आदि के कारण कुछ ही क्षेत्रों

में प्रोत्साहित किया जाए। ब्राउन ट्राउट तथा स्नो ट्राउट की प्रजनन तकनीक विकसित कर बीज उत्पादन बढ़ाकर जल स्रोतों में संचयित किया जाए।

सभी प्रजातियों में चाइनीज कार्प बड़ी ही सटीक प्रजाति पायी गई और अधिक कार्य क्षेत्र, कम लागत तथा आसान प्रबन्धन आदि को ध्यान में रखकर समन्वित मत्स्य पालन तकनीक विकसित की गयी। चाइनीज कार्प की विशेषता है:

1. सभी जगह उपलब्ध तथा खाने योग्य मछलियों ज्यादा मांग
2. प्रजनन तथा बीज उत्पादन आसान
3. रहने तथा बृद्धि के लिए पानी के तापक्रम की बड़ी सीमा (4–32 डिग्री)
4. तेज वृद्धि 500 –800 ग्राम/7–8 माह में (19–26 डिग्री)
5. प्राण वायु की आवश्यकता कम अतः अधिक घनत्व में संचय (2–4 मछली/मीटर)
6. तालाब, भोजन, रसोई का बचा भोज्य पदार्थों के उपयोग करने की क्षमता
7. अत्यधिक मांग व आसान प्रबन्धन
8. मत्स्य पालन के लिए अति उत्तम (800–2000 मीटर के बीच)

अतः इसी आधार पर चाइनीज कार्प और महासीर मछली को उपयोग करते हुए समन्वित मत्स्य पालन तकनीक का विकास किया गया यह तकनीक संक्षेप में इस प्रकार है:

समन्वित मत्स्य पालन तकनीक

1. समुद्र तल से 800–2000 मी. के बीच जल क्षेत्रों के लिए उपयुक्त
2. खाने योग्य उत्पादन केवल 8 माह में मध्य मार्च से नवम्बर के बीच
3. छोटे से बड़े तालाब तक सम्भव 100–400 मी. जल क्षेत्र
4. कम पानी की आवश्यकता 1.6–2.0 मीटर गहराई
5. मत्स्य घनत्व 2.8–3.2 मछली/मी.
6. प्रजातिः ग्रास कार्प 40–50, सिल्वर कार्प 20–25, कामन कार्प 30–40 महासीर 6–10 जिनका आकार 60–8 मिमी. हो
7. 300–450 किग्रा. चूना/प्रत्येक ळे0/वर्ष, प्रत्येक बारहवें दिन
8. केवल गोबर की खाद
9. साधारण प्रबन्धन
10. उत्पादन लागत करीब 30–40 रू./किग्रा
11. बिक्री मूल्य करीब 100–120 रू./किग्रा

विकसित तकनीक का प्रसार एवं ग्राहयता

वर्ष 1998 से 2004 के बीच इस तकनीक को और उपयुक्त, समग्र बनाया गया और सर्वप्रथम गांव तौली, पाटी क्षेत्र जिला चम्पावत में आरम्भ कर उत्तराखण्ड के अन्य जिले–नैनीताल, पिथौरागढ़ अल्मोड़ा, बागेश्वर, देहरादून चम्पावत में भी मत्स्य पालकों ने इस तकनीक को बड़े उत्साह से अपनाया। इससे पहले जहां मत्स्य पालन का कृषि आमदनी में कोई योगदान नहीं था अपना एक उचित स्थान प्राप्त कर लिया। प्राप्त आंकड़ों के अनुसार कृषि से आमदनी 51 प्रतिशत, पशुपालन से 14 प्रतिशत, बाग नर्सरी से 5, तथा मत्स्य पालन से 30 प्रतिशत आमदनी अंकित की गयी जो अपने में एक उपलब्धि थी।

आगे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर इस तकनीक में अनेक बदलाव कर दो नए प्रारूप तैयार किए गए। इन्हे न केवल उत्तराखण्ड बल्कि अरूणाचल, मनीपुर, मेघालय, सिक्किम, उत्तर पश्चिमी बंगाल के चुने हुए क्षेत्रों में 2005–2010 के बीच प्रदर्शन किया गया। लगभग 390 मत्स्य पालकों ने इस तकनीक को अपनाया।

किसी भी मत्स्य पालक ने इस तकनीक द्वारा मत्स्य उत्पादन के कार्यक्रम का त्याग नही किया है। यही इसकी सफलता की कहानी है।

तकनीक का विविधीकरण

पर्वतीय क्षेत्रों में प्राप्त सफलता से उत्साहित होकर केन्द्रीय मत्स्य अनुसंधान निदेशालय भीमताल के वैज्ञानिकों ने इस मत्स्य पालन तकनीक को आधार बनाकर निम्न तकनीक विकसित की हैं। ये सभी तकनीक मत्स्य पालकों द्वारा अपनायी जा चुकी हैं:

1. धान–मत्स्य पालन एक साथ अरूणाचल के जीरो माडल को विकसित कर इसे अरूणाचल, मणीपुर, और मेघालय में लागू किया
2. पशुपालन–मत्स्य पालन एक साथ

3. बहते पानी में सघन मत्स्य पालन सिक्किम, उत्तर पश्चिमी बंगाल, उत्तराखण्ड में इसे अपनाया गया।

भविष्य

इस तकनीक से मत्स्य पालकों को बराबर लाभ मिलता रहेगा। केन्द्रीय मत्स्य अनुसंधान निदेशालय भी समय समय पर इस की समीक्षा कर वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर इस तकनीक को और उपयुक्त एवं ग्राह्य योग्य बनाने में अपना योगदान देता रहेगा।

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन में महिलाओं की सहभागिता

वर्ष 1979 में तथा 2000 में संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा महिलाओं के सशक्तिकरण को लेकर कई प्रस्ताव पास किए हैं। सभी 193 देशों तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं महिलाओं की सभी कार्यों में भागीदारी तथा समाज में उचित स्थान प्राप्त करने के लिऐ प्रयत्नशील हैं। भारत सरकार भी अपनी नीतियों एवं कार्यप्रणाली में बदलाव लाकर महिला उत्थान, शिक्षा आदि क्षेत्रों में सराहनीय कार्य कर रही है।

भारत में कृषि तथा कृषि से जुड़े कार्यों में महिलाएं महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। परन्तु उनके योगदान को सराहा नही जाता और अनुपात भी कम है। इस विषय पर अध्ययन भी नही किऐ गऐ हैं। अतः सही स्थिति का आंकलन करना मुश्किल है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के कुछ संस्थानों द्वारा कृषि व मत्स्य पालन में महिलाओं की हिस्सेदारी व समस्याओं को छुआ गया है। वर्ष 2008 के आंकड़ों के अनुसार 5.4 मिलियन महिलाएं मत्स्य कार्यों से जुड़ी है। यह कुल जनसंख्या का 12 प्रतिशत है। मछली खाद्य संरक्षण, बिक्री आदि में इनकी संख्या अधिक है। पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन में महिलाओं का योगदान/आवश्यकता पर कोई भी आंकड़े उपलब्ध नही है। फिर भी एक अनुमान के अनुसार पूर्वी राज्यों में लगभग 24 प्रतिशत महिलाएं मत्स्य पालन में अपना योगदान देती है।

महिलाओं को शिक्षा, सामाजिक चेतना को बढ़ाकर तथा पर्वतीय क्षेत्रों में महिलाओं के आने जाने की व्यवस्था आदि समस्याओं को दूर कर महिलाओं को मत्स्य पालन में उचित प्रतिनिधित्व दिया जा सकता है।

महिलाएं तेजी से, सुन्दरता से समय पूर्वक अपने कर्तव्यों को पालन करने में सक्षम होती हैं अतः उनकी सहभागिता न केवल मत्स्य उत्पादन बढ़ाने में बल्कि पारिवारिक, वित्तिय स्थिति को सम्पन्न करने के लिए आवश्यक है।

किसी आदमी को एक मछली दीजिए और आप एक दिन के लिए उसका पेट भरेंगे, किसी आदमी को मछली पकड़ना सीखा दीजिए और आप जीवन भर के लिए उसका पेट भर देंगे

—चाइनीज कहावत

रुद्रप्रयाग के ताल: इकोटूरिज्म संभावना

प्रीतम काला, रविंद्र पोस्ती, दिनेश मोहन एवं बिपिन कुमार विश्वकर्मा
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

उत्तराखंड हिमालय पर्वतमाला की तलहटी में स्थित पहाड़ी स्थलाकृति वाला राज्य है। यह नेपाल और चीन (तिब्बत) के साथ अपनी सीमाओं को साझा करते हुए देश की उत्तरी सीमा का हिस्सा है। राज्य में मीठे पानी के अत्यधिक संसाधन हैं जिनमें 2700 किलोमीटर नदियां, 24200 हेक्टेयर जलाशय, 289 हेक्टेयर झीलें और लगभग 2000 हेक्टेयर तालाब शामिल हैं। राज्य में कुमाऊं और गढ़वाल नाम के दो प्रमुख क्षेत्र शामिल हैं।

रुद्रप्रयाग, उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल क्षेत्र में स्थित एक जिला है। अलकनंदा और मंदाकिनी दो नदियों के संगम पर स्थित रुद्रप्रयाग जिले की स्थापना 16 सितंबर 1997 को हुई थी। इसका कुल क्षेत्रफल 1,984 किमी^{2} है। यह पंच प्रयागों में से एक है। इसे प्रकृति का उपहार मिला है, जिसकी जलवायु क्षेत्र की ऊंचाई पर निर्भर करती है। यह जिला उत्तर में उत्तरकाशी, दक्षिण में पौड़ी, पूर्व में चमोली, और पश्चिम में टिहरी गढ़वाल जिले से घिरा हुआ है। इसके उत्तर में श्री केदारनाथ मंदिर, पूर्व में मदमहेश्वर, दक्षिण पूर्व में नागरासु और चरम दक्षिण में श्रीनगर है। केदारनाथ से उत्पन्न पवित्र मंदाकिनी जिले की मुख्य नदी है।

इस क्षेत्र की भूविज्ञान से पता चलता है कि हिमालय दुनिया के युवा पर्वत हैं। आज का रुद्रप्रयाग शुरुआती मेसोजोइक काल, या द्वितीयक भूवैज्ञानिक काल के दौरान टेथिस समुद्र का हिस्सा था। हिमालय की ऊंचाई के शुरू होने की संभावित तारीख मेसोजोइक काल के करीब होने के बारे में है, लेकिन उनकी संरचना की कहानी का पता अभी शुरू हुआ है, और कई मामलों में चट्टानों की कोई डेटिंग अभी तक संभव नहीं है।

यह स्थान अपनी जैव विविधता के लिए जाना जाता है। यहाँ कस्तूरी मृग, हिरन, चीतल, थार गोरल, भरहेल, हिमालय लोमड़ी, पर्वत बकरी, जंगली सुअर, भालू, जंगली बिल्ली, किंगफिशर, कोयल, चकोर, लकड़ी कबूतर आदि जानवरों और पक्षियों की प्रजातियां निवास करती हैं। जिले के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में फलने–फूलने वाला ब्रह्माकमल उत्तराखंड राज्य का राजकीय पुष्प है। सेमेल, सारासू, धाक, ईट, बाज, चिड़, देवदार, खादिक, धुन, सुरई, कैल, पापड़डी, मौरू, अंगू, रीठा, अखरोट, इराती भीमल, बेदू, गेन्थी, तिमला, हरिज, दर्द, कट्टा, कचनार आदि ईंधन और इमारतों के पेड़ जिले में पाए जाने वाले मूल्यवान पेड़ हैं। प्रमुख हर्बल किस्में पहाड़ की चोटियों और जंगलों में बहुतायत में उपलब्ध हैं। अन्य वनोपज झला घास, लीजा, किंगौरा, हिंसर, भामोरा, काफल, फरद, चोरा आदि भी यहाँ बहुताय मात्रा में पाए जाते हैं। यहाँ ठन्डे पानी की मछलियों का पाया जाना भी जैव विविधता को बढ़ाता है।

झील पारिस्थितिकी तंत्र लेंटिक पारिस्थितिकी प्रणालियों का एक प्रमुख उदाहरण है, जिसमें जैविक के साथ–साथ अजैविक कारक भी शामिल है। झीलें, मनोरंजक, सौंदर्य और सुंदर गुणों के लिए मूल्यवान हैं, और उनके पास पानी है जो हमारे प्राकृतिक संसाधनों में सबसे कीमती है। जल की गुणवत्ता और प्रजातियों की विविधता का रखरखाव झील पारिस्थितिकी तंत्र के निर्वाह के लिए आवश्यक है।

इकोटूरिज्म को एक प्रकार के पर्यटन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जहां पर्यावरण, स्थानीय समुदाय और आगंतुक सभी लाभान्वित होते हैं। इकोटूरिज्म में आम तौर पर ऐसे गंतव्यों की यात्रा शामिल होती है जहां वनस्पतियां, जीव और सांस्कृतिक विरासत प्राथमिक आकर्षण हैं। इकोटूरिज्म के लक्ष्यों में से एक पर्यावरण पर मनुष्यों के प्रभाव में पर्यटकों को अंतर्दृष्टि प्रदान करना और हमारे प्राकृतिक आवासों की अधिक सराहना करना है। इकोटूरिज्म का एक अभिन्न हिस्सा रीसाइक्लिंग, ऊर्जा दक्षता, जल संरक्षण और स्थानीय समुदायों के लिए आर्थिक अवसरों का निर्माण को बढ़ावा देना है।

रुद्रप्रयाग के ताल समुद्रतल से बहुत ही ऊँचाई पर स्थित हैं। प्रस्तुत अध्याय में हम रुद्रप्राय के कुछ तालों के बारे में चर्चा करेंगे:

बासुकी ताल

स्थानः 30°43'37-58"N, 79°02'02-31"E

यह टार्न (एक पहाड़ झील, यह तब बनती है जब बारिश या नदी का पानी भरता है) प्रकार की झील है। इसकी समुद्रतल से ऊंचाई 4,231 मीटर है। यह 7.27 हेक्टेयर क्षेत्र में फैली हुई है। इसका आकार वर्ग मध्यम उप–वाटरशेड है। इसकी बेसिन बासुकी गंगा नदी है। गहराई वर्ग में इसे डीप ट्रोफिक एवं स्तर में ओलिगोट्रोफिक (पानी में पोषक तत्वों का कम स्तर) में रखा जाता है। यहाँ नम अल्पाइन वनस्पति पायी जाती है। बासुकी ताल केदारनाथ वन्यजीव अभ्यारण्य में स्थित एक सुंदर, मध्यम आकार की झील है। बासुकी ताल बासुकी गंगा नदी का स्रोत है। इसे वासुकी ताल नामक गंगोत्री ग्लेशियर पर एक और बहुत छोटे और कभी–कभी मौसमी तालाब से अलग करने के लिए 'अ' के पहाड़ी संस्करण को 'इ' से बदलने के लिए पसंद किया गया है। वासुकी ताल केदारनाथ से 8 किमी पर स्थित है। यह झील ऊंचे पहाड़ों से घिरी हुई है और चौखम्बा चोटियों का एक उत्कृष्ट दृश्य प्रदान करती है।

पैंया कुंड

स्थानः 30°44'34-43" N, 79°00'20-71" E

यह टार्न प्रकार की झील है। इसकी समुद्रतल से ऊंचाई 4,910 मीटर है। यह 2.46 हेक्टेयर क्षेत्र में फैली हुई है। इसका आकार वर्ग मध्यम उप–वाटरशेड है। इसकी बेसिन बासुकी गंगा नदी है। गहराई वर्ग मंच इसे उथला एवं स्तर में ओलिगोट्रोफिक में रखा जाता है। यहाँ नम अल्पाइन वनस्पति पायी जाती है। पवैया कुंड केदारनाथ वन्यजीव अभयारण्य के भीतर स्थित है। केदारनाथ से संपर्क करने पर यह मिताली दर्रे के रास्ते में होता है। सर्दियों के समय में यह जम जाता है।

मियली ताल

स्थानः 30° 44'30-12"N, 78° 59'09-20"E

यह टार्न प्रकार की झील है। इसकी समुद्रतल से ऊंचाई 4,771 मीटर है। इसका आकार वर्ग मध्यम उप–वाटरशेड है। इसकी बेसिन भिलंगना नदी है। गहराई वर्ग में इसे बहुत गहरी एवं स्तर में मेसोट्रोफिक (पोषक तत्वों का मध्यम स्तर) में रखा जाता है। यहाँ नम अल्पाइन वनस्पति पायी जाती है। मियली ताल केदारनाथ वन्यजीव अभयारण्य के भीतर स्थित है। मियली दर्रे के पास होने के कारण इसे यह नाम दिया गया है।

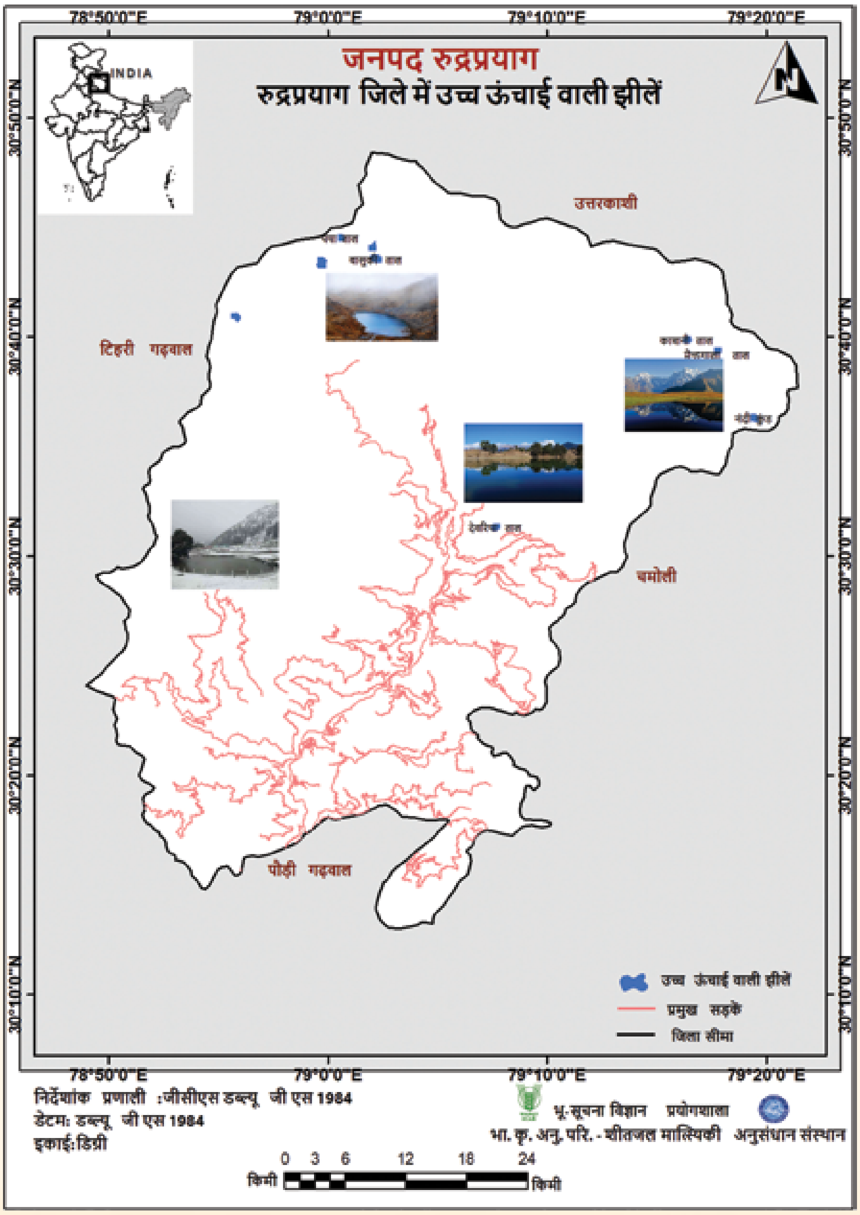

मासुरी ताल

स्थानः 30°44'51-22"N, 78° 58'50-77"E

यह टार्न प्रकार की झील है। इसकी समुद्रतल से ऊंचाई 4,735 मीटर है। यह 2.17 हेक्टेयर क्षेत्र में फैली हुई है। इसका आकार वर्ग छोटे उप–वाटरशेड है। इसकी बेसिन भिलंगना नदी है। गहराई वर्ग में यह उथला एवं स्तर में ओलिगोटरोफिक में रखा जाता है। यहाँ नम अल्पाइन वनस्पति पायी जाती है। मासुरी ताल केदारनाथ वन्यजीव अभयारण्य के भीतर है।

देवरिया ताल

स्थानः 30°31'20-4 N, 79°7'41-09 E

यह स्थायी मीठे पानी के दलदल/पूल प्रकार की झील है। इसकी समुद्रतल से ऊंचाई 2,350 मीटर है। इसका क्षेत्रफल 2.63 हेक्टेयर है। यह 2.28 हेक्टेयर क्षेत्र में फैली हुई है। देवरिया ताल उखीमठ– चोपता मार्ग पर मस्तूरा और सारी गांवों से करीब 3 किलोमीटर ऊपर स्थित है। झील में 20 मीटर की अधिकतम गहराई है और इसका कोई आउटलेट नहीं है। देवरिया ताल में हवा का औसतन तापमान 7.7 और 26.9°C के बीच रहता है। यह एक पर्यटन स्थल है। इस झील में चारों तरफ जंगल के साथ मनोरम परिवेश है। झील में शक्तिशाली चौखम्बा चोटी का प्रतिबिंब एक सुंदर प्रभाव पैदा करता है। हिंदू आस्था बताती है कि देवताओं ने इस झील में स्नान किया, इसलिए इसका नाम देवरिया है। इस झील को पुराणों में इंद्र सरोवर भी माना जाता है। यह भी माना जाता है कि यह वह स्थान था जहां यक्ष ने पांडवों से प्रश्न पूछे थे। स्थानीय लोग आसपास की जमीन का उपयोग मवेशियों को चराने के लिए करते हैं। यहाँ स्थानीय समुदाय द्वारा हर साल जन्मआष्ट्मी महोत्सव के दौरान धार्मिक मेलों का आयोजन किया जाता है।

बधानी ताल

स्थानः 30°29'43-3"N, 78°54'53-9"E

यह ब्लॉक जखोली के धारकुड़ी गांव से 4 किमी की दूरी पर स्थित है। यह समुद्र तल से 2,134 मी की ऊंचाई पर है। यह 500 वर्ग मीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है। इस ताल में रंगीन मछलियाँ जैसे कोई कार्प, गोल्ड फिश एवं कॉमन कार्प डाली गई हैं जो पर्यटको एवं बच्चो के लिए एक आकर्षण बनी रहती हैं। हर साल यहाँ बैशाखी मेले का आयोजन किया जाता है।

चोराबाड़ी ताल

स्थानः 30°44'48-23" N, 79°03'41-90" E

2013 की केदारनाथ बाढ़ आपदा ने इस झील को खत्म कर दिया था। इसकी समुद्रतल से ऊंचाई 3,850 मीटर थी। वर्ष 1948 में यहां महात्मा गांधी की कुछ अस्थियां विसर्जित की गई थीं, जिसके बाद इसका नाम बदलकर गांधी सरोवर कर दिया गया था। यह केदारनाथ तीर्थ स्थल से कुछ किलोमीटर ऊपर, चोराबाड़ी ग्लेशियर के पुश–मोरेन (चट्टानों और तलछट का एक द्रव्यमान जो ग्लेशियर द्वारा जमा किया जाता है) में स्थित थी।

उपसहार

रुद्रप्रयाग जिले में उपस्थित ताल बहुत ही रमणीय, सुन्दर एवं प्रकृति की गोद में है। यहाँ का वातावरण बहुत ही शांत एवं प्रदूषण रहित है। यहाँ के बर्फीले पहाड़ों की सुंदरता, बुगयालों (छोटे घास के मैदान) की चादर ओर खुले आसमान की चमक मन को शान्ति देने वाली है। यहाँ के तालों को पूर्ण रूप से इकोटूरिज्म पर्यटन के रूप में विकसित करना चाहिए। यहाँ के तालों का वैज्ञानिक अध्ययन ज्यादा नहीं किया गया है जिसके कारण इनकी क्षमता का पता नहीं चल पाता है। ये ताल ठन्डे पानी की मछलियों के लिए एक सरंक्षण स्थल का कार्य कर सकते हैं। इकोटूरिज्म के रूप में पहचान मिलने से स्थानीय लोगों की आमदनी में इजाफा किया जा सकता है।

संदर्भ

- एचटीटीपीऐसः//फारेस्ट.यूके. जीओवी.इन/पेजेज/डिस्प्ले/39–इको–टूरिज्म
- एचटीटीपीऐसः//रुद्रप्रयाग.जीओवी.इन
- वेटलैंड्स ऑफ उत्तराखंड (2012), रिपोर्ट जॉइंटली पब्लिश्ड बाए द उत्तराखंड फारेस्ट डिपार्टमेंट एंड डब्लूडब्लूऐफ इंडिया

मत्स्य पालन ग्रामीण स्वरोजगार एवं आजीविका का एक उत्तम साधन

रमेश सिंह चलाल, आकांक्षा खाती एवं *बिपिन कुमार विश्वकर्मा
राज्य मत्स्य विभाग, पिथौरागढ, मत्स्य विज्ञान महाविद्यालय, पंतनगर,
*भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

जनपद के पर्वतीय क्षेत्रों की अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती है खेती ही उनकी आजीविका का मुख्य साधन है यहां छोटी–छोटी बिखरी हुई जोत, कठिन भौगोलिक परिस्थितियां तथा वर्षा आधारित खेती होने के कारण कृषि उत्पादकता काफी कम है। किसान अभी भी परम्परागत रूप से खेती कर रहे है जो कि अधिक लाभदायक नहीं है तथा कृषि से काफी कम आय प्राप्त होती है। अधिकांश किसानो के छोटे–छोटे बिखरे हुये जोत एवं सीमित सिचाई के संसाधनों के कारण यहां के किसानो के लिये कम क्षेत्रफल में अधिक लाभ प्राप्त करने वाली तकनीकियों का समावेश आवश्यक है। संग्रथित एवं समन्वित मत्स्य पालन एक लाभकारी तकनीकी है, जिसके अन्तर्गत मछली पालन, कृषि, उद्यान, सब्जी उत्पादन, बकरी पालन, मुर्गी पालन, बत्तख पालन, गाय पालन आदि विभिन्न घटकों को अलग–अलग ना कर के मछली पालन से जोड़कर किया जाना ही समन्वित मत्स्य पालन है। इस विधा का में एक–दूसरे के मल–मूत्रों अपशिष्ट पदर्थों, बेकार भागों आदि को दूसरे घटकों द्वारा भोजन, खाद आदि के रूप में प्रयोग कर उत्पादन में आयी लाागत को कम कर आय में वृद्धि की जा सकती है। मत्स्य पालन की इस लाभकारी तकनीकी से मत्स्य पालक अधिक आय प्राप्त करने के साथ साल भर विविधता पूर्ण पौष्टिक खाद्य सामाग्री जैसे की दूध, अण्डे, मांस, सब्जी व फल का भी उत्पादन करते है, जिससे दुर्भाग्यवश किसी फसल (घटक) में असफल होने पर किसान को अत्यधिक नुकसान नही उठाना पड़ता है। यह तकनीकी अपशिष्ट पदार्थो के पुनरावर्तन के सिद्वान्त पर आधारित है। इस प्रकार के मत्स्य पालन में तालाबो में खाद एवं मछलियों हेतु परिपूरक आहार की आवश्यकता ना के बराबर होती है जिससे मत्स्य पालक के मत्स्य पालन एवं कृषि निवेश के व्यय में कमी होती है एव मत्स्य पालक अधिक लाभ प्राप्त करता है।

अतः समय की मांग को देखते हुये पर्वतीय क्षेत्रो में संग्रथित एवं समन्वित मत्स्य पालन कृषक बन्धुओं के लिए परम्परागत खेती की अपेक्षा कम मेहनत और अधिक लाभ वाली बहुत लाभकारी व्यवसाय है।

उद्देश्य–

1. मत्स्य उत्पादन 0.5–0.75 किग्रा से 1.25–1.5 किग्रा प्रति घन मी0 जल क्षेत्र।
2. सिमित मत्स्य पालन प्रजाति अभ्यागत कार्प से भारतीय मेजर कार्प, ट्राउट, पंगाास मत्स्य पालन का समावेश।
3. एकल मत्स्य पालन से मिश्रित मत्स्य पालन एवं सम्न्वित मत्स्य पालन को बढ़ावा।
4. कार्प मत्स्य उत्पादन एवं मूल्य में बढोत्तरी।
5. मत्स्य जीरा के स्थान से मत्स्य अंगुलिका संचयन से उत्पादन में वृद्वि।
6. मत्स्य पालकों को मत्स्य उत्पादन के साथ–साथ मत्स्य नर्सरी में अंगुलिका उत्पादन से विविध आय के श्रोत का सृजन।
7. बारम्बार मत्स्य अंगुलिका संचय एवं बारम्बार मत्स्य निकासी से वर्षभर अधिक उत्पादन एवं अधिक आय।
8. मात्र सिचाई एवं जल संरक्षण हेतु निर्मित फार्म पौण्डों, पोखरों एवं तालाबों को मत्स्य पालन हेतु उपयोग में लाने से संसाधनों का बेहतर उपयोग एवं आय के नये आयम स्थापित किया गया।

ऐसे करें तालाब का निर्माण

पर्वतीय क्षेत्रों के प्राकृतिक जलस्रोतों में तालाब निर्माण कर सघन मत्स्य पालन से प्रति 100 वर्ग मी0 अथवा आधा नाली क्षेत्रफल में 0.75 से 1.5 कुन्तल तक का उत्पादन लेकर मछली पालन कर लघु एवं सीमान्त कृषकों के आर्थिकी को सढ़ृढ़ किया जा सकता है। इस हेतु निम्न बातों को ध्यान में रखते हुए स्थल का चयन किया जाना चाहिए।

(1) वर्ष भर पानी की उपलब्धता हो।

(2) प्राकृतिक धारे–नौली, गाड़–गधेरे के नजदीक की जगह अथवा सिमार वाली जगह।

(3) स्थल जो प्राकृतिक रूप से गहरा हो अथवा बरसात में पानी ठहरता हो।

(4) स्थल जहॅा प्राकृतिक रूप से पानी रिसता हो एवं धान के अलावा अन्य फसल ना ले पांये।

(5) मिट्टी जिसकी जलधारण क्षमता अच्छी एवं उपजाऊ हो।

(6) चिकनी मिट्टी अथवा चिकनी दोमट मिट्टी अच्छी होती है जो पानी को बाहर नहीं जाने देती व तालाब के बन्धे मजबूत होते हैं।

(7) मिट्टी ना ज्यादा अम्लीय हो ना ही ज्यादा क्षारीय (मिट्टी का पी0एच0 मान 6 से 8 के मध्य हो)।

(8) स्थल बाढ़ग्रस्त ना हो अन्यथा बन्धे टूटकर मछली के बहने का भय रहता है।

(9) ऐसे स्थल का चुना करें जहां पर खुदान के 1.5 मी0 तक कंकड़, पत्थर अधिक ना निकले अन्यथा लागत ज्यादा होगी व पानी का रिसाव अधिक होता है।

(10) स्थल घर से ज्यादा दूरी पर न हो, अथवा चोरी एवं जहर डालने आदि भय बना रहता है व देखरेख में परेशानी होती है।

(11) भूमि थोड़ी ढलान वाली हो ताकि मछली निकासी के समय जमा पानी कम किया जा सके व तालाब सुखाने में आसानी हो।

(12) खुली जगह जिससे कि लम्बे समय तक तालाब को धूप मिल सके।

तालाब के प्रकार– सामान्यः पर्वतीय क्षेत्रों में तीन प्रकार के तालाब बनाये जा सकते हैं।

(1) **कच्चे तालाब**– इस प्रकार के तालाब उन जगहों पर बनाये जाते हैं, जहां मिट्टी की जल धारण क्षमता अच्छी हो। इस प्रकार के तालाब बनाने में लागत कम आती हैं, तथा इनमें प्रचुर मात्रा में मछली का प्राकृतिक भोजन भी तैयार होता हैं अतः मछली उत्पादन में लागत कम आती है।

(2) **पक्के तालाब**– पथरीली व कंकड़ तथा ज्यादा रेतीली भूमि पर पक्के तालाबों का निर्माण किया जाता है। तली में 1–1.5 फीट बारीक छनी हुई ऊपजाऊ मिट्टी डाली जाती है। इस प्रकार के तालाबों में अपेक्षाकृत कम प्राकृतिक भोजन बनता है एवं तालाब निर्माण में अधिक लागत आती है।

(3) **पालीथीन वाले तालाब**– जिन जगहों पर मिट्टी में जल धारण क्षमता कम होती है। कच्चे तालाब खोदकर छनी हुई मिट्टी को तालाब की तली एवं बंधों पर बिछाकर कुटाई की जाती है। तत्पश्चात एच.डी.पी.ई. या सिलपोलीन (एक प्रकार की मजबूत व मोटी पोलीथीन) को बिछाकर ऊपजाऊ मिट्टी की 1–1.5 फीट परत डाली जाती है। इस प्रकार के तालाबों में पक्के तालाबों की अपेक्षा कम लागत आती है।

तालाब निर्माण हेतु मिट्टी की पहचान

(1) हाथ में बारीक छनी मिट्टी लेकर आटे की तरह गूंथ लें। गुँथी मिट्टी का गोला बनाकर हवा में 30–50 सेमी. तक उछालें यदि गोला हाथ में टकराकर बिखर जाये तो मिट्टी उपयुक्त नहीं है। और यदि गोला बना रहे तो उपयुक्त है।

(2) गोले को 3–4 मी0 की दूरी से दीवार में फैंके यदि गोला बिखर जाये तो मिट्टी उपयुक्त नहीं है। और यदि गोला दीवार से चिपक जाये या फिर पिचक कर गिर जाये तो मिट्टी तालाब बनाने योग्य है।

तालाब का निर्माण– आयताकार तालाब मछली पालन हेतु अच्छा माना जाता है। तालाब की लम्बाई तालाब की चौड़ाई का तीन गुना होना चाहिए। तालाब की लम्बाई पूर्व से पश्चिम दिशा में रखना लाभदायक होता है, जिससे तालाब को लम्बे समय तक धूप मिल सके जो तालाब की उत्पादकता बढ़ाने मे सहायक सिद्ध होती है।

तालाब निर्माण हेतु चयनित खेत पर हल से जुताई कर ऊपरी सतह (8–12 सेमी0) की मिट्टी का एक कोने में ढेर लगा दिया जाता हैं, इसमें कंकड पत्थर की मात्रा कम रहती है और अपेक्षाकृत गहरी मिट्टी से ज्यादा उपजाऊ होती है।

सामान्यतः तालाब की खुदाई जमीन की सतह से 1 से 1.5 मी गहराई तक अन्दर की ओर ढाल (1:1.5 अनुपात) देकर की जानी चाहिए जिससे कि बंधे मजबूत रहें और जाल चलाते समय आसानी हो। बन्धों की खुदाई के समय प्रत्येक फीट की ऊँचाई पर मिट्टी को लकड़ी के गुटके अथवा वजनदार रोलर इत्यादि से पिटाई करनी चाहिए जिससे की बन्धा मजबूत हो जाय, बन्धे चिकनी मिट्टी के मजबूत होते

हैं। यदि चिकनी मिट्टी तालाब वाली जगह पर उपलब्ध ना हो तो बाहर से चिकनी मिट्टी लाकर बन्धे के नीचे इसकी दीवार बनाकर बीच में वहीं की मिट्टी डालकर ऊपरी सतह से पिटाई करनी चाहिए और खुदाई में निकली मिट्टी कों तालाब के चारों ओर डालकर पाट दिया जाता है। जिससे की आवश्यक पानी की मात्रा 1–1.5 बनी रहे और ऊपर जमा की गयी मिट्टी तालाब के पानी की सतह से 30–50 सेमी0 का अतिरिक्त गहराई प्रदान कर हवा को ज्यादा समय तक पानी के सम्पर्क में बना सके व मछली उछलकर बाहर ना आये व अधिक बरसात में जल भराव से मछलियां तालाब से निकलकर बह ना जाये।

पर्वतीय क्षेत्रों में खेत सीढ़ीदार होते हैं तो इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि तालाब की खुदाई खेत के किनारे से 1.5 से 2 मी0 अन्दर की तरफ से की जाय अन्यथा बन्धों के टूटने का भय बना रहता है। तालाब की आयु बढ़ाने के लिए तालाब की अंदरीय सतहों पर पत्थर की दीवार बनानी चाहिए अन्यथा कामन कार्प मिट्टी के बन्धों मे सड़े–गले घास आदि की जड़ों को खाने एवं भोजन की खोज में तालाब के बन्धो को नुकसान पहुंचा सकती है अथवा तेज हवा से उठने वाली पानी की लहरें बन्धों का कटान कर सकती है। इन अंदरूनी ढालदार बंधों पर रेंगने वाली दूब घास आदि का रोपण करना चाहिए जिससे बन्धों का कटान कम हो एवं ग्रास कार्प के लिए चारा भी उपलब्ध हो सके। बन्धों की ऊपरी सतह पर नैपियर घास, बरसीम, चरी अथवा मौसमी सब्जियों का रोपण करना चाहिए जिससे कि खाली पड़े बन्धे का सदुपयोग कर अतिरिक्त आमदनी हो सके और ग्रास कार्प के लिए चारे का प्रबन्ध हो सके।

पानी के आगमन हेतु एक पाइप ऊँचाई पर लगाया जाता है, इसके दूसरी छोर पर निकासी पाईप लगाना चाहिए।

मछली के बीज संचय से पहले करें तालाब की तैयारी

- किसान भाइयों मछली की फसल लेने के बाद मछली के मल–मूत्र पौधों तथा खाद्य पदार्थों के अवशेष तथा गोबर एवं मुर्गी की खाद आदि तालाब की तली में इकठ्ठा हो जाती हैं। यदि आप तालाब की तली में जमा काली मिट्टी को सूँघे तो इसमें से तीखी बदबू आयेगी अगली फसल लेने से पहले इसकी सफाई अथवा तालाबों के तली की मिट्टी को दरार पड़ने तक सुखानी आवश्यक होती है। इस जमा काली बदबूदार मिट्टी को तालाब के बंधे पर अथवा खेतों पर डालकर साग–सब्जी की फसल भी अच्छी बढवार लेती है।
- मछली का बीज संचय करने के दो सप्ताह पूर्व बिना बूझा हुआ चूने का 2–3 किग्रा प्रति आधा नाली की दर से छिड़काव करना चाहिए।

खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग

- मत्स्य उत्पादन बढ़ाने के लिए तालाब में गोबर की खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक है। इनके प्रयोग से तालाब में प्राकृतिक भोजन (वनस्पति एवं जन्तु प्लवक) तालाब में पैदा होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रत्येक माह 2–3 किग्रा/आधा नाली की दर से चूने का छिड़काव भी तालाब की उत्पादकता एवं स्वच्छता बनाए रखने के लिए अच्छा होता है। जैविक एवं रासायनिक दोनों प्रकार की खादों को तालाब में बारी–बारी से प्रत्येक माह निम्न विवरण के अनुसार डालना उचित रहता है।
- तालाब में प्राकृतिक रूप से बना भोजन 2–3 दिनों में समाप्त हो जाता है, अतः प्लवकों के स्तर को बनाये रखने के लिये जैविक खाद की तालाब के कोने में ढेर लगा देनी चाहिए, जिससे की खाद का थोड़ी–थोड़ी मात्रा तालाब में घुलकर प्राकृतिक भोजन के स्तर को बनाये रखे।
- तालाब में पानी का स्तर कम से कम 1 मी0 एवं अधिकतम 2 मी0 से ज्यादा ना हों।

क्र0 सं0	खाद	मात्रा
1	गोबर प्रथम किस्त	50–60 किग्रा/आधा नाली
2	गोवर की खाद (मासिक किस्त)	20–25 किग्रा/आधा नाली
3	सुअर की खाद (मासिक किस्त)	15–20 किग्रा/आधा नाली
4	मुर्गी की विष्ठा (मासिक किस्त)	10–15 किग्रा/आधा नाली
5	यूरिया मासिक किस्त	250 ग्राम/आधा नाली
6	सिंगल सुपर फास्फेट मासिक किस्त	500 ग्राम/आधा नाली

- तालाब के पानी का रंग सदैव हरा व हल्का भूरापन लिये होना चाहिये जो तालाब की प्लवक (प्राकृतिक भोजन) की प्रचुर मात्रा को दर्शाता है। यदि तालाब रंगहीन है, और ऊपर देखने पर तालाब की तली साफ दिखाई देती है तो तालाब में प्राकृतिक भोजन की कमी है। जो मछली के उत्पादन को काफी कम कर सकता है। इस हेतु तालाब में जैविक खादों (गोबर, मुर्गी की बीट, वर्मिंग कम्पोस्ट) को समय–समय पर डालते रहना चाहिए। गोबर 150–200 किग्रा0 ताजा गोबर प्रति नाली या 100 वर्ग मी0 प्रति वर्ष या 5 मुर्गियों की बीट प्रति दिन अथवा 50–60 किग्रा0 वर्मिंग कम्पोस्ट प्रति नाली या 100 वर्ग मी0 प्रति वर्ष की दर से तालाब में डालने पर प्राकृतिक भोजन का वांछित स्तर बनाये रखा जा सकता है।

मछली के बीज का संचय

कृषक भाईयों माह मार्च में कामन कार्प एवं अप्रैल माह से निजी हैचरियों में ग्रास कार्प तथा अन्य कार्प मछलियों का बीज उपलब्ध हो जाता है।

मछलियों का कृत्रिम भोजन या परिपूरक आहार

मछलियों की अच्छी वृद्धि के लिए प्राकृतिक भोजन के साथ–साथ कृत्रिम भोजन का विशेष महत्व है। मछलियों को उनके वजन का 2 से 5 प्रतिशत तक कृत्रिम भोजन दिया जाता है, शुरूआत के दिनों से 2–3 माह तक मछलियों को आहार रोज सुबह एवं शाम को सभी मछलियों के शारीरिक भार के 5 प्रतिशत की दर से देना चाहिये बाद में कृत्रिम भोजन की मात्रा को धीरे–धीरे 3 तथा 2 प्रतिशत की दर तक कम करके दिया जाता है। यद्यपि कृत्रिम भोजन बाजार में उपलब्ध हो जाता है, किन्तु कृषक बन्धु अपने घर पर ही सस्ता एवं पौष्टिक आहार तैयार कर सकते हैं। सामान्यतः घर पर ही कृत्रिम भोजन तैयार करने के लिए धान की पालिश (चावल का कना) एवं सरसों की खल (पीना) को वजन में बराबर मात्रा में लेकर इसमें 1 प्रतिशत विटामिन, मिनरल का मिश्रण (बाजार मे एग्रिमिन फोर्ट या अन्य नामों से उपलब्ध है) मिलाकर प्रयोग किया जाता है।

कृषक बन्धु निम्न विधि से भी सुसंगत संतुलित कृत्रिम आहार तैयार कर सकते हैं

संतुलित कृत्रिम आहार बनाने की विधि– सुसंगत संतुलित कृत्रिम आहार तैयार करने हेतु खाद्य पदार्थों की पोषकता का ज्ञान आवश्यक है, जिन्हें एक निश्चित मात्रा में मिलाकर आहार तैयार किया जा सकता है। अग्रलिखित तालिका में कुछ स्थानीय स्तर पर प्राप्त होने वाले खाद्य सामाग्रियों का पोषक मान दिया गया है।

कृत्रिम अथवा परिपूरक आहार तैयार करने हेतु विभिन्न खाद्य सामग्रियों का पोषक मान मात्रा (प्रतिशत में)

क्र.सं.	खाद्य सामग्री	प्रोटीन	बसा/लिपिड
1	मक्के की खल	9–10	4–5
2	सरसों की खल (पीना)	30–40	8–10
3	चावल की पालिश	13–14	2–3
4	चावल का कन्ना	12–16	5–15
5	सोयाबीन की खल	46–47	1–2
6	मूँगफली की खल	34–35	13–14
7	गेहूँ की चोकर	13–14	4–5
8	सूखी मछली का चूर्ण	50–60	4–8

कृत्रिम भोजन देने की विधि

1. तालाब में मछली का बीज डालने के बाद से लगभग 2 महीने तक कृत्रिम भोजन छानकर दिया जाता है छने हुए आहार को दो से चार मुठ्ठी पूरे तालाब में छिड़क दिया जाता है जिससे कि मछलियों को आसानी से भोजन प्राप्त हो सके शुरूआत मछलियों की बढ़वार तेजी से होती है, अतः कृत्रिम भोजन को एक दिन में दो से तीन बार तक देना चाहिये।
2. कृत्रिम भोजन की कुछ मात्रा को गूंथकर गोला बना लें। फिर पुराने थाल या परात को तराजू की तरह बॉधकर गोले को इसमे रखकर इसे तालाब मे 3–4 जगहों पर अलग–अलग ऊँचाईयों पर लटका दिया जाता है, इस विधी में मछली को आहार की आवश्यकता का

आंकलन लगाना आसान होता है। खाना देने के 20 से 25 मिनट बाद धागे को खींचकर देख लिया जाता है कि खाना बर्तन में बचा है या नही यदि खाना बर्तन में बचा है तो कृत्रिम भोजन की मात्रा को कम कर देते है यदि खाना बर्तन में नही बचा है तो कृत्रिम भोजन की मात्रा को थोड़ा–थोड़ा करके बढ़ाते रहते हैं।

3. जब मछलियां 4 से 5 महीने की या हथेली के बराबर लम्बाई की हो जाय तो कृत्रिम भोजन को गूँथकर गोला बना लेते है, फिर इन गोलों को अँगूठे के आकार छेद वाले सिमेंट के कटटों में भरकर तालाब के बीच में या किनारों पर किसी आधार से बांधकर लटका दिया जाता है। मछलियां इन छेदों से भोजन को खाती है। इस विधी में भी उपरोक्त दूसरी विधी की तरह से कृत्रिम भोजन की मात्रा का आंकलन कर खाना दिया जाता है।

उपरोक्त विधियों के अनुरूप मछलियों को कृत्रिम या परिपूरक आहार देने से आहार व्यर्थ नही जाता है एवं तालाबों से वांछित मत्स्य उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

जाल द्वारा तालाब से मछलियों की निकासी

सामान्यतः तालाब में जाल का प्रयोग आवश्यक रूप से हर माह करनी चाहिए और यदि संभव हो तो माह में दो बार जाल के प्रयोग से मछलियों के स्वास्थ्य, बढ़ोत्तरी की जॉच के साथ–साथ ही मछलियों में तंदुरस्ती आती है जिससे मछलियां अधिक मात्रा में भोजन ग्रहण कर अच्छा बढ़वार प्राप्त करती है। पर्वतीय क्षेत्रों में मछली पकड़ने के लिए घघरिया जाल, गिल नैट, मच्छर दानी आदि का प्रयोग किया जाता है। इन विधियों द्वारा मछलियो की निकासी अच्छी प्रकार से नही हो पाती है और प्रायः चोटिल हो जाती है। कुषक बन्धुओं को चाहिए कि वो स्थानीय स्तर पर छोटी फन्दों वाली खींचा जाल बनवा लें या फिर बाजार से मोल ले लें अथवा जिन कृषकों के पास ओला रोकने वाला हेल नैट उपलब्ध हो का भी उपयोग किया जा सकता है। यह हेल नैट सस्ता भी होता हे और मछलियों को भी कम चोट पहुचती है।

खींचा जाल चलाने से तालाब की तली में जमीं काली बदबूदार मिटटी का भी सुधारीकरण हो जाता है, जिससे इसमें बॅधे हुए पोषक तत्व तालाब के पानी में घुलकर मछलियों के प्राकृतिक भोजन के पैदावार सहायक होती है। जाल चलाकर बाजार की मॉग के अनुसार बड़ी मछलियों की बिक्री कर देनी चाहिए जिससे कि छोटी मछलियों को बढ़ने का अवसर प्राप्त हो सके और नित्य कुछ ना कुछ आय प्राप्त हो सके। यदि संभव हो तो साथ में छोटी नर्सरी तालाब में अंगुलिकाओं का संचय होने पर बड़े तालाब से निकाली हुई प्रजाति का संचय करने से तालाब में जरूरत के अनुसार निश्चित प्रजातियों की उपलब्धता बनी रहती है एवं उपलब्ध प्राकृतिक भोजन का सदुपयोग हो पाता है। इसके अतिरिक्त यदि केवल बड़ी ग्रास कार्प को निकाल कर बेच दिया जाता है तो तल भक्षी प्रजाति जैसे कॉमन कार्प हेतु भोजन की कमी हो जाती है जिससे कामन कार्प की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जैसा कि ग्रास कार्प के त्यागे मल को कॉमन कार्प भोजन के रूप में ग्रहण करती है। और यदि केवल तली भक्षी कामन कार्प को ही निकाला जाता हे तो तली में सड़े गले पदार्थों के जमाव से तालाब का पानी प्रदूषित होता है, जो आक्सीजन की कमी कर मछलियों की मृत्युदर को बढ़ा सकती है।

तालाब में जाल चलाते समय सावधानियाँ

1. जाल चलाने के 2–3 दिन पहले मछलियों को कृत्रिम अथवा पूरक आहार नही देना चाहिए।
2. तालाब के पानी का स्तर कम करने से जाल चलाने में आसानी होती है एवं इसके तुरन्त पश्चात पानी को तालाब में खोल देना चाहिए, जिससे मछलियां तनाव में ना आये।
3. ग्रास कार्प को ई गयी वनस्पतियों के डंठल, जलीय वनस्पतियों को जाल चलाने के पूर्व साफ कर लेना चाहिए अन्यथा जाल चलाने में परेशानी होती है।
4. दूसरे तालाब में चली जाल को पोटेशियम परमैग्नेट या नमक के घोल में उपचारित करने के पश्चाात प्रयोग करना चाहिए।
5. प्रातः काल में मछली का निष्कासन ज्यादा लाभप्रद होता है, ताकि शाम तक मछलियों की बिक्री हो सके।

6. जाल चलाकर मछलियों का ढेर बनाकर रखने की बजाय मच्छर दानी अथवा मारकिन के कपड़ें में डालकर तालाब में डुबोकर रखने से मछलियां ज्यादा समय तक जिन्दा रहती हैं और ज्यादा मूल्य भी मिलता है।
7. जाल चलानें के बाद जाल को ढेर बनाकर रखने के बजाय बन्धे में सुखा देने से जाल की उम्र बढ़ती है और दूसरी बार जाल चलाने से पहले उपचारित करने की जरूरत नही पड़ती।

प्रसंस्करण

मत्स्य उत्पादन का प्रसंस्करण एवं संरक्षण

राजीव कपिला
भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संसधान, करनाल

मछली उच्च कोटी का आहार है। भारत जैसे देश में जहां की जलवायु उष्ण कटिबन्धीय है वहां मछली के खराब होने की प्रक्रिया तेज होती है, इसलिए मछली को पकड़ने के बाद बाजार में शीघ्राताशीघ्र ग्राहक तक पहुंचाना आवश्यक है। खराब होने की प्रक्रिया मछली के मांस पेशीयों में उपस्थित ग्लाइकोजन का लैक्टिक अम्ल में परिवर्तित होने के कारण प्रारम्भ होती है, मासं कड़ा हो जाता है और तत्पश्चात उसके मांस में शिथिलता आ जाती है।

मछली के मरने के बाद खराब होने की प्रक्रिया मुख्यतः तीन कारणों से होती हैः–

- जीवाणुओं द्वारा
- स्वलयन एंजाइम द्वारा (जैविकी उत्प्रेरक)
- आक्सीकरण प्रक्रिया के द्वारा

मछली के मरने के पश्चात शीघ्र ही उतकों एवं आंतड़ियों के स्वलयन एंजाइम्स द्वारा मांस ढीला हो जाता है तथा जीवाणुओं द्वारा अपघटन की प्रक्रिया सरल हो जाती है। ताजे पानी की मछलियों के मरने पश्चात उसमें उपस्थित वसा का आक्सीकरण होने के कारण खट्टापन आ जाता है व रंग भूरा हो जाता है। इसी प्रकार मछली में निहित प्रोटीन और अन्य नाइट्रोजन जनित अवयव–अमोनिया, कार्बनडाइ ऑक्साइड, अमीनो एसिड तथा अन्य वाष्पीकृत क्षारीय तत्वों में टूट जाते हैं। अतः मछली में से गन्दी गन्ध हाइड्रोजन सल्फाइड तथा ट्राइ मिथाइलअमाइन नामक रसायन के बनने के कारण आने लगती है।

मछली के ताजेपन के मापदण्ड

बाजार में उपलब्ध मछली ताजी है अथवा नही इसकी पहचान निम्न मापदण्डों के द्वारा की जा सकती हैः–

- ताजी मछली का मांस सुदृढ़ होता है न कि नरम एवं ढीला
- ताजी मछली को छूने पर उसकी त्वचा पर अंगुलियों के निशान नहीं पड़ते
- आंखे चमकीली एवं गलफड़ों का रंग चमकीला लाल होता है
- मल छिद्र बाहर की ओर नही होता
- ताजी मछली के गलफड़ो व श्लेष्मा मे से मछली की गंध आनी चाहिए

मत्स्य संरक्षण की विधियां

1. प्रशीतन एंव हिमीकरण

कम तापमान मछली के सड़ने गलने की दर को न्यूनतम कर देता है। जब भी मछली को कुछ दिन के लिए संचय करना हो तो उसे बर्फ में ठण्डा रखा जा सकता है। यदि मछली आकार में बढ़ी हो तो बर्फ को उसके शरीर के अन्दर भी रखा जा सकता है। कम तापमान पर संचय से पहले मछली की आंतो को निकालकर अलग कर लेना चाहिए क्योंकि आंतो में अत्यधिक जीवाणु होते हैं जो मछली की गुणवत्ता को बनाए रखने में मुश्किलें पैदा करते हैं। जब भी मछली को लम्बे समय तक संग्रह करना हो तो उसे शीघ्र ही ठण्डा कर लेना चाहिए इससे जीवाणु द्वारा सड़ने की क्रिया को रोका जा सकता है अत्यधिक कम तापमान (–20 डिग्री सेंटीग्रेड) पर रखी गई मछली काफी समय तक अपनी भौतिक एवं पौषणिक गुणवत्ता बनाए रखती है जो कि ताजी मछली के समान होती है।

2. शुष्कीकरण

मछली को संरक्षित करने हेतु शुष्कीकरण की क्रिया सबसे आसान व पुरानी है जबकि समुद्री पानी की मछलियों की अपेक्षा ताजे पानी की मछलियों के संरक्षण हेतु इस क्रिया का प्रयोग बहुत कम किया जाता है। छोटी छोटी समुद्री मछलियों को समुद्री किनारे पर रेत के उपर खुले में जूट की चटाई पर सूखने के लिए रख दिया जाता है। इस प्रकार यह 2–3 दिन तक धूप में रखी रहती है और क्रमानुसार उपर नीचे हिलाया–डुलाया जाता है। कभी कभी तो इन मछलियों का बांस की छड़ों या रस्सी पर लटकाकर भी सुखाया जाता है वहीं दूसरी मध्यम आकार की मछलियों को सुखाने से पहले नमक लगा दिया जाता है। इस प्रकार धूप में सुखायी गई मछलियों में एक विशेष प्रकार का स्वाद आ जाता है। कई बार अधिक

तैलीय मछली को धूप में नही सुखाने पर वह सड़ने लगती है इस तरह की मछली को खाद के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। मछलियों को मशीनों के द्वारा भी शुष्कित किया जा सकता है जिससे ताजी मछली की गुणवत्ता के समान अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। शुष्कीकरण द्वारा संरक्षित मछली को संचय कर पूरे वर्ष खाया जा सकता है।

3. नमकीनीकरण

घरेलू नमक मछली के संरक्षण हेतु जीवाणु की वृद्धि को रोकने और समाप्त करने व एंजाइम्स को निष्क्रिय करने में सहायक है। घरेलू नमक द्वारा नमकीनीकरण की गई मछली बहुत ही नरम व हल्के पीले रंग की होती है तथा खाने में उसका स्वाद ताजी मछली की ही भांति होता है। छोटी छोटी मछलियों को बिना साफ किए नमक लगा दिया जाता है। जबकी बड़ी मछलियों को लम्बवत काटकर उनकी आंतो में नमक भर कर उसको संरक्षित कर दिया जाता है। यह क्रिया बहुत आसान है और इसमें मछली के मांस में भलीभांति नमक लग जाता है। नमकीनीकरण की क्रिया 2 प्रकार की होती है:–

- शुष्क नमकीनीकरण
- आर्द्र नमकीनीकरण

3.(1) शुष्क नमकीनीकरण

मछली को टबों में परत दर परत रखा जाता है और प्रत्येक परत में नमक छिड़क दिया जाता है। इसके बाद उन्हे नमक मे अच्छी तरह से रगड़ा जाता है। नमक और मछली का अनुपात 1:3 से 1:8 रखा जाता है जो कि मछली की रासायनिक संरचना पर निर्भर करता है उदाहरणार्थ– तैलीय मछलियों को अधिक नमक की आवश्यकता होती है इसके बाद 10–24 घण्टे के बाद मछलियों को टब से निकाल लिया जाता है और धोकर धूप में सूखा लिया जाता है। इस प्रक्रिया मे सामान्यतः बड़ी मछली का अपने भार का 1/3 और छोटी मछली 2/3 भाग घट जाता है।

3. (2) आर्द्र नमकीनीकरण

साफ की हुयी मछलियों को नमकीन द्रव्य में प्रतिदिन लपेट करके हिलाया जाता है जब तक कि उनका अम्ल मार्जन न हो जाए। इस के अर्न्तगत नमकीनीकरण 3 प्रकार से किया जाता है– पहले दिन, नमक की आधी मात्रा मछली के चीरे गए भाग में लगाकर उसे फर्श में एकत्र कर लिया जाता है। दूसरे दिन, मछली के ढेर को हिलाया जाता है ताकि उपर की मछली नीचे और नीचे की उपर हो जाए, बचे हुए शेष नमक की आधी मात्रा उस ढेर पर छिड़क दी जाती है। तीसरे दिन, पुनः शेष बचा नमक उस ढेर पर छिड़क दिया जाता है और उसे भली–भांति हिलाया–डुलाया जाता है। तत्पश्चात मछली के ढेर को 7–10 दिन तक बिना हिलाए छोड़ दिया जाता है ताकि ढेर का पानी निकल जाए। आर्द्र नमकीनीकरण द्वारा संरक्षित की गई मछली को बिना सुखाए ही बेच दिया जाता है। इस प्रकार संरक्षित मछली की गुणवत्ता 3–4 माह तक बनी रहती है।

स्मोकिंग

मछली को साफकर आंत, गलफड़े पंख आदि उसे आग से उत्पन्न धुंए द्वारा भी संरक्षित किया जा सकता है। इसके लिए मछली को एक रस्सी में बांधकर लटका दिया जाता है और फिर उसके नीचे आग प्रज्वलित कर धुंए में कम तापमान पर स्मोक किया जाता है। इस प्रक्रिया को नमक लगाकर अथवा बिना नमक के भी किया जा सकता है। इस प्रकार संरक्षित मछली को 6–7 दिन तक संचय कर सकते हैं।

कैनिंग

समुद्री अथवा मीठे जल में उत्पादित मछली को साफ कर छोटे–छोटे आकार (2–3′′) में काटकर वायु के दाब तथा 60–80 डिग्री सें0ग्रे0 तापक्म पर गर्म कर हल्के नमक के घोल अथवा तेलीय माध्यम का उपयोग कर वायुरहित डिब्बों में बंद कर लम्बे समय तक संचय कर उपयोग किया जा सकता है।

6. मत्स्य उत्पादन

उत्पादित मछली को उपरोक्त संरक्षण विधियों द्वारा संचय कर भिन्न–भिन्न अवधी में खाद्य के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। अत्यधिक उत्पादन होने पर अनेक मत्स्य उत्पाद जैसे– मछली का आचार, मछली का खाद्य योग्य आटा तथा अन्य अनेक उत्पाद बनाए जा सकते हैं। निम्न कोटी की मछलियों को उत्तम खाद तथा पशु आहार के रूप में भी बदला जा सकता है।

अन्य

कंप्यूटर पर टाइप करने का सर्वोत्तम विकल्प- इंस्क्रिप्ट की बोर्ड

***भूपेन्द्र कुमार', अमित कुमार जोशी एवं अमित कुमार सक्सेना**
*दि न्यू इंडिया एंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड
भा.कृ.अनु.पं–शी.मा.अनु. निदेशालय, भीमताल

गतांक में प्रकाशित यूनीकोड संबंधी अपने आलेख में मैंने इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड के महत्व को रेखांकित किया था। इस आलेख के आरंभ में उसी को उद्धृत करना चाहूँगा।

''**कंप्यूटर पर टाइप करने का सबसे अच्छा विकल्प है इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड के माध्यम से टाइप करना।** इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड न केवल भारत सरकार का मानक है आपितु एक वैज्ञानिक की–बोर्ड है जिसे बहुत जल्दी सीखा जा सकता है और बहुत आसानी से इसके माध्यम से द्रुत गति से टाइप किया जा सकता है। यही नहीं इस एक की–बोर्ड को सीख कर किसी भी भारतीय भाषा में बिना किसी अतिरिक्त प्रयास के टाइप किया जा सकता है। **यही कारण है कि माइक्रोसॉफ्ट व गूगल इत्यादि कंपनियों ने अपने यूनीकोड आधारित फोंट के साथ डिफॉल्ट रूप में केवल इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड लेआउट को ही शामिल किया है।''** इस की–बोर्ड का नाम भी इन्हीं खूबियों की ओर संकेत करता है। इंस्क्रिप्ट शब्द दर–असल दो शब्दों इंडियन और स्क्रिप्ट से मिल कर बना है। इंडियन स्क्रिप्ट अर्थात भारतीय लिपि। इस दृष्टि से भी इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड भारतीय लिपियों का की–बोर्ड है।

इस संबंध में भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग के सचिव के दिनांक 17 फरवरी, 2012 के आदेश संख्या 12015/13/2011–रा.भा. (तक.) के उस अंश को भी उद्धृत करना चाहूँगा जो इंस्क्रिप्ट की बोर्ड के विषय में है। आदेश में इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड के उक्त महत्व को स्पष्ट करने के उपरान्त कहा गया कि **''मात्र रेमिंग्टन की–बोर्ड पर प्रशिक्षित पुराने कर्मचारी, जिनका सेवाकाल केवल 2 वर्ष बचा हो, रेमिंग्टन में टंकण करें, शेष सभी इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड का ही प्रयोग करें''।**

अतः हर तरह से इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड का प्रयोग करना ही उचित है। आइए अब समझने की चेष्टा करें कि इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड में द्रुत गति से टाइप क्यों किया जा सकता है और यह सीखने में आसान क्यों है।

इस संबंध में तीन बातें ध्यान देने योग्य है–

- की–बोर्ड की उस संरचना में द्रुत गति से टंकित किया जा सकता है जिसमें दोनों हाथों की उंगलियों का क्रमिक रूप से प्रयोग हो न कि किसी एक हाथ की उंगलियों का अधिक व दूसरे हाथ की उंगलियों का कम। यह तभी संभव है जब स्वर एक हाथ की उंगलियों से टंकित किये जाएँ औा व्यंजन दूसरे हाथ की उंगलियों से। क्योंकि किसी भी भाषा में शब्द रचना व्यंजनों और स्वरों अथवा उसकी मात्राओं (भारतीय भाषाओं के मामले में) के संयोग से होती है। उदाहरण के लिए यदि हम एक शब्द लिखते हैं *इशारा*, तो इसमे पहला अक्षर स्वर (आ की मात्रा) है। अब इसमें यदि कोई एक अक्षर दाएँ हाथ की उंगली से टंकित हो और शेष सभी बाएँ हाथ की उंगलियों से तो बाएँ हाथ की उंगलियाँ जल्दी थक जाएँगी और गति भी बाधित होगी।
- किसी भी भाषा के शब्दों में कुछ कुछ अक्षर बहु–प्रयुक्त होते हैं और कुछ अल्प–प्रयुक्त, उदाहरण के लिए अंग्रेजी में a व s बहु–प्रयुक्त अक्षर हैं जबकि k और u इनके मुकाबले कुछ कम प्रयुक्त होते हैं। इसी प्रकार हिन्दी में क, र, ह इत्यादि बहु–प्रयुक्त अक्षर हैं तथा ओ, ए इत्यादि अल्प– प्रयुक्त अक्षर। यदि बहु–प्रयुक्त अक्षरों को बाएँ हाथ की छोटी उंगली से टंकित करना पड़े तो न केवल उस उंगली में दर्द हो जाएगा (जिसे वैज्ञानिक शब्दावली में रिपिटीटिव इंजरी सिंड्रोम कहा जाता है) अपितु गति भी बाधित होगी, क्योंकि दुनिया के बहुसंख्य लोग दाएँ हाथ से काम करते हैं अतः हमारा दायाँ हाथ अधिक पुष्ट होता है और बायाँ हाथ अपेक्षाकृत कमजोर, इसी प्रकार हमारे हाथ की तर्जनी व मध्यमा उंगलियाँ अधिक पुष्ट होती है तथा कनिष्ठा व

अनामिका उंगलियाँ अपेक्षाकृत कमजोर। स्वाभिविक है कि उपेक्षाकृत कमजोर हाथ की कमजोर उंगली का बार–बार प्रयोग करने से उंगली में दर्द होने के साथ–साथ गति भ बाधित होती है।

- हमने बचपन से एक वर्ण क्रम सीखा है। अंग्रेजी में a,b,c,d तथा हिन्दी में अ, आ, तथा क, ख, ग इत्यादि। यदि किसी की–बोर्ड में इस वर्ण का क्रम का ध्यान रखा गया हो तो उस की–बोर्ड को याद करना व सीखना भी आसान होगा।

दुर्भाग्यवश अंग्रेजी का प्रचलित क्रवेर्टी की–बोर्ड इन कसौटियों पर खरा नहीं उतरता। इसी प्रकार हिन्दी का रंमिंग्टन की–बोर्ड भी इन कसौटियों पर खरा नहीं उतरता। मगर हिन्दी के लिए हमारे वैज्ञानिकों ने जब इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड की रचना की तो उक्त कसौटियों का ध्यान रखा। इसीलिए इस की–बोर्ड को न केवल याद करना व सीखना आसान है अपितु इसके माध्यम से अपेक्षाकृत द्रुत गति से टाइप करना भी संभव है।

आइए अब देखते हैं कि इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड में इन कसौटियों का किस प्रकार ध्यान रखा गया है व इसकी संरचना क्या है।

- इस की–बोर्ड में सभी स्वर व मात्राएँ बाएँ हाथ की उंगलियों से टंकित होते हैं तथा सभी लगभग सभी व्यंजन दाएँ हाथ की उंगलियों से। अतः इसमें दोनों हाथों की उंगलियों का क्रमिक रूप से प्रयोग होता है जिससे द्रुत गति से टंकित करना आसान होता है।
- इस की–बोर्ड में अक्षरों को ऐसे क्रम में व्यवस्थित किया गया है कि जिन अक्षरों को बार–बार टाइप करने की जरूरत पड़ती है वे तर्जनी अथवा मध्यमा उंगलियों से टंकित किए जा सकें। इससे उंगलियों में दर्द नहीं होता और टंकण कार्य भी तेजी से होता है।
- इसमें नीचे से ऊपर की ओर हिन्दी वर्णमाला के क्रमानुसार ही अक्षरों को रखा गया है। उदाहरण के लिए मध्यमा उंगली से क टंकित होता है तो उसी उंगली से उसी कुंजी पर शिफ्ट साथ ख और ठीक उसके ऊपर वाली पंक्ति में उसी उंगली से उसी स्थान के ऊपर ग तथा उसी उंगली से उसी कुंजी पर शिफ्ट के साथ घ टंकित होता है। अर्थात क–वर्ग के चारों अक्षर क, ख, ग, घ एक ही उंगली से नीचे से ऊपर की ओर टंकित होते हैं। इसी प्रकार अन्य अक्षर भी वर्ण क्रमानुसार व्यवस्थित हैं। इससे इस की–बोर्ड को याद करना, व इस पर अभ्यास करना आसान होता है और इसी कारण इसे सीखने में समय भी कम लगता है। निष्कर्ष यह है कि यदि इस की–बोर्ड की गृह पंक्ति के अक्षरों का बाएँ से दाएँ का क्रम याद कर लिया जाए तो अन्य अक्षरों के स्थान का अनुमान स्वयं ही हो जाता है और थोड़े से अभ्यास से ही उंगलियाँ अभ्यस्त हो जाती हैं।

इंस्क्रिप्ट की बोर्ड की संरचना

किसी भी की–बोर्ड को सीखते समय सबसे पहले गृह पंक्ति का अभ्यास किया जाता है और की–बोर्ड को काल्पनिक रूप से बाएँ और दाएँ भाग में विभक्त किया जाता है। अंग्रेजी के क्रवेर्टी की–बोर्ड की गृह पंक्ति में बाईं ओर बाएँ से दाएँ asdfg और दाईं से दाएँ hjkl; होते हैं इसी प्रकार इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड में भी गृह पंक्ति का एक विन्यास है जो इस प्रकार है–

इस विन्यास को यदि हम ध्यान दें तो पाएँगें कि बाईं और सभी स्वर है। और दाईं ओर व्यंजन। बाईं ओर जो स्वर हैं वे शिफ्ट के साथ प्रयुक्त होते हैं और बिना शिफ्ट के उन्हीं स्वरो की मात्राएँ हैं। मात्राओं को बिना शिफ्ट के इसलिए रखा गया है क्योंकि भारतीय भाषाओं में मात्राओं का अधिक प्रयोग होता है। जब हम ऊपर की पंक्ति को देखेंगे तो पाएँगे कि ऊपर की पंक्ति में शिफ्ट के साथ इन्हीं के दीर्घ स्वर हैं और बिना शिफ्ट के दीर्घ मात्राएँ। यदि आप इस विन्यास को इस तरह समझेंगे तो पाएँगे कि इसे याद रखना बेहद आसान है। अब दाईं ओर देखें–गृह

शिफ्ट सहित	कैप्स लॉक	ओ	ए	अ	इ	उ		फ	ऱ	ख	थ	छ	ठ	एण्टर (गृह पंक्ति)
शिफ्ट रहित		ो	े	्	ि	ु		प	र	क	त	च	ट	

शिफ्ट सहित	टैब	औ	ऐ	आ	ई	ऊ	भ	ङ	घ	ध	झ	ढ	ञ	ऑ
शिफ्ट रहित		ौ	ै	ा	ी	ू	ब	ह	ग	द	ज	ड	़	ॉ
शिफ्ट सहित	कैप्स लॉक	ओ	ए	अ	इ	उ	फ	ऱ	ख	थ	छ	ठ	एण्टर (गृह पंक्ति)	
शिफ्ट रहित		ो	े	्	ि	ु	प	र	क	त	च	ट		

पंक्ति में बिना शिफ्ट के जो वर्गीकृत वयंजन हैं उनकी शिफ्ट में उसी वर्ग का अक्षर है अर्थात प–फ, क–ख, त–थ, च–छ और ट–ठ। जब हम इसी के ऊपर वाली पंक्ति देखेंगे तो पाएँगे कि गृह पंक्ति में जहां पर जो वर्गीकृत व्यंजन है उसके ऊपर वाली पंक्ति में ठीक उसी के ऊपर उसी वर्ग के शेष दो अक्षर हैं। अर्थात प–फ के ऊपर ब–भ, क–ख, के ऊपर ग–घ, च–छ के ऊपर ज–झ और ट–ठ के ऊपर ड–ढ। यदि हम गृह पंक्ति और उसके ऊपर वाली पंक्ति को एक साथ देखेंगे तो यह विन्यास एक दम स्पष्ट हो जाएगा जो इस प्रकार है–

हमारी वर्णमाला में एक वर्ग में 5 अक्षर होते हैं, मगर दो पंक्तियों में केवल 4 अक्षर ही समा सकते हैं अतः उनके पंचमाक्षरों को नीचे की पंक्ति में स्थान दिया गया है। शेष अक्षरों को भी उनके महत्व के अनुसार स्थान दिया गया है। तो देखा आपने यह किस प्रकार हमारी वर्णमाला के क्रम के अनुरूप व्यवस्थित है। आइए अब संपूर्ण की–बोर्ड पर एक हिंगम दृष्टि डालें।

कुंजीपटल को देखे बिना टाइप करनाः–

इस संरचना को जब हम वास्तविक की–बोर्ड पर देखते हैं तो कुछ ऐसा दिखाई देता हैः–

अक्सर लोग सवाल करते हैं कि जो की–बोर्ड हमारे कंप्यूटर के साथ लगा है उसमें तो हिन्दी के अक्षर है ही नहीं। इसके जवाब में कुछ लोग हिन्दी अक्षरों से युक्त स्टिकर लगाने की सलाह देते हैं। यहां प्रश्न ये उठता है कि हम हमेशा कुंजीपटल को देखकर ही टाइप करना चाहते

शिफ्ट सहित	ऑ	ऍ	ॅ	ॠ	र्	ज्ञ	त्र	क्ष	श्र	(	)	ः	ऋ	बैक स्पेस
शिफ्ट रहित	ॆ	1	2	3	4	5	6	7	8	9	0	-	ृ	
शिफ्ट सहित	टैब	औ	ऐ	आ	ई	ऊ	भ	ङ	घ	ध	झ	ढ	ञ	ऑ
शिफ्ट रहित		ौ	ै	ा	ी	ू	ब	ह	ग	द	ज	ड	़	ॉ
शिफ्ट सहित	कैप्स लॉक	ओ	ए	अ	इ	उ	फ	ऱ	ख	थ	छ	ठ	एण्टर (गृह पंक्ति)	
शिफ्ट रहित		ो	े	्	ि	ु	प	र	क	त	च	ट		
शिफ्ट सहित	शिफ्ट		ँ	ण			ळ	श	ष	।				शिफ्ट
शिफ्ट रहित			ं	म	न	व	ल	स	,	.	य			
कंट्रोल	एड्मिनिस्ट्रेटर	ऑल्ट	स्पेस बार						ऑल्ट	एड्मिनि स्ट्रेटर		एडिट	कंट्रोल	

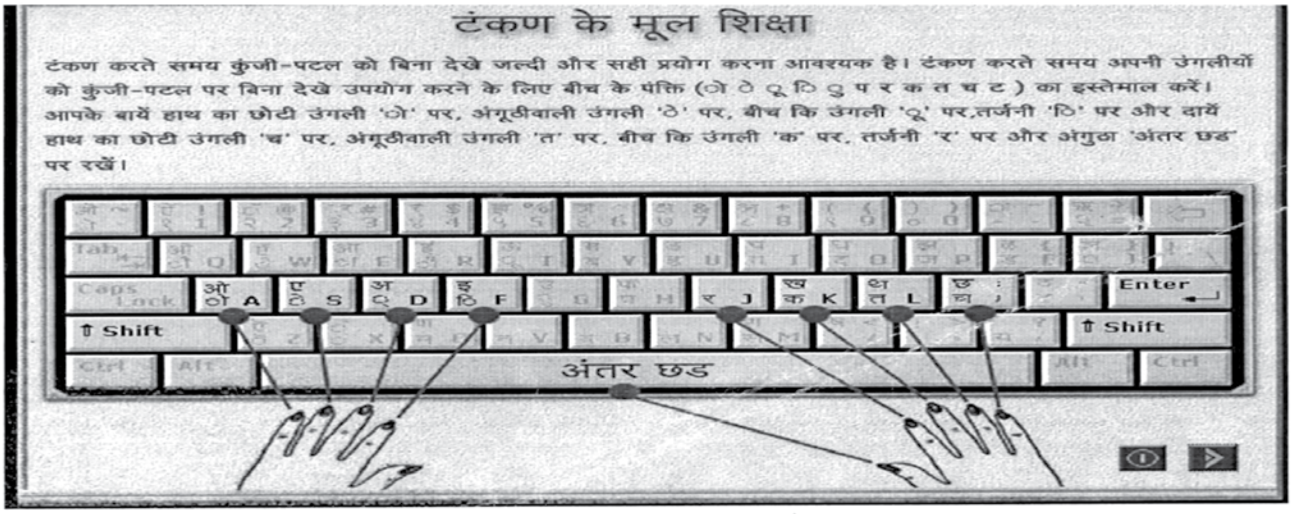

हैं या बिनार कुंजीपटल को देखे। यदि देखकर टाइप करना चाहते हैं तो स्टिकर लगाने का सुझाव अच्छा है। मगर स्थिति में टंकण गति हमेशा धीमी ही रहेगी। पर, यदि बिना देखे टाइप करना चाहते हैं तो की–बोर्ड पर हिन्दी अक्षर हों या अंग्रेजी अक्षर या कोई भी अक्षर न हो क्या फर्क पड़ता है।

उक्त चित्र कं अंतर्गत गृह पंक्ति में उंगलियों की स्थिति भी दर्शाई गई है। इस स्थिति में उंगलियों का रखकर यदि अभ्यास करेंगे तो बिना कुंजीपटल को देखे टंकण कार्य किया जा सकता है। यह इतना आसान है कि यदि कोई आधा घंटा रोज इस की–बोर्ड पर टाइप करने का अभ्यास उंगलियों को यथा स्थिति में रखकर करे तो एक या दो हफ्ते में ही 30 शब्द प्रति मिनट की गति से टाइप कर सकता है। इसके बर–अक्स याद कीजिए रेमिंगटन की–बोर्ड को सीखने की प्रक्रिया जिसमें कम से कम 6 माह का समय लगता था 30 श.प्र.मि. की गति लाने में, वह भी तब जब किसी योग्य प्रशिक्षक की देख रेख में नियमित रूप से प्रति दिन 1 घंटे का अभ्यास किया जाता था। इसके मुकाबले रेमिंगटन की–बोर्ड से कई गुना अधिक खूबियों वाले इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड सीखने की मेहनत व इसमें लगने वाला समय बहुत ही कम हैं।

हिन्दी के इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड टंकण का अभ्यास करने के लिए इंटर–नेट पर एक सॉफ्टवेयर **आसान टंकण प्रशिक्षक** www.ildc.gov.in पर भी उपलब्ध हैं।

तो अब देर किस बात की, अपना कंप्यूटर ऑन कीजिए और इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड का अभ्यास आरंभ कर दीजिए।

विंडोज एक्सपी में हिन्दी व अन्य भाषाओं को सक्रिय करने की विधि:

- स्टार्ट अथवा माई कंप्यूटर में जा कर **कंट्रोल पैनल** को क्लिक करें।
- कंट्रोल पैनल में **रीजनल एण्ड लैंग्वेज** ऑप्शन्स को क्लिक करें।
- रीजनल एण्ड लैंग्वेज ऑप्शन्स में **लैंग्वेज** टैब पर क्लिक करें।
- लैंग्वेजेज टैव के अंतगर्त **इंस्टॉल फाइल्स फॉर कॉम्प्लैक्स स्क्रिप्ट एण्ड राइट टु लेफ्ट (इन्क्ल्यूडिंग थाई)** को चुनें (अर्थात खाली खाने में कर्सर ले जा कर क्लिक करें)
- एक डायलॉग बॉक्स खुलेगा, उसके **ok** पर क्लिक करें एवं रीजनल एण्ड लैंग्वेज ऑप्शन्स के **एप्लाई** को क्लिक करें। यदि कंप्यूटर पर सीडी डालने का कोई निर्देश न आए तो **ok** पर क्लिक करें।
- यदि विंडोज की कुछ फाइलें (i386) आपके सिस्टम में उपलब्ध नहीं होंगी तो सिस्टम आपको विंडोज एक्सपी के संबंधित संस्करण की सीडी डालने का निर्देश देगा। सीडी ड्राइव में सीडी डालकर **ok** पर क्लिक करें।
- सिस्टम रीस्टार्ट करने का निर्देश देगा, यदि आप रिस्टार्ट करते हैं तो कंप्यूटर पुनः खुलने पर पुनः कंट्रोल पैनल में जा कर रीजनल एंड लैंग्वेज ऑप्शन्स

को क्लिक करें। इसके बाद **रीजनल ऑप्शन्स** टैब पर क्लिक करें और ड्रॉपडाउन मेन्यू बॉक्स के तीर के निशान पर क्लिक करके सूची में से **हिन्दी** अथवा अपनी पसंद की कोई भी भारतीय भाषा चुन कर क्रमशः **एप्लाई** व **ओके** पर क्लिक करें।

- दूसरा तरीका है कि आप कंप्यूटर रीस्टार्ट न करके **नो** पर क्लिक करें एवं इसके बाद **डिटेल्स** टैब पर कर्सर ले जा कर क्लिक करें।
- **टैक्स्ट सर्विसेस एण्ड इनपुट लैंग्वेज** नामक डायलॉग बॉक्स खुलेगा, इसके दाएँ कोने में दिए **ऍड (Add)** बटन पर क्लिक करें।
- अब ऍड **इनपुट लैंग्वेज** नामक डायलॉग बॉक्स खुलेगा जिसमें इनपुट लैंग्वेज में तीर के निशान पर क्लिक करके भाषाओं की सूची से **हिन्दी** अथवा अपनी मन पसंद **भारतीय भाषा** चुनें और की–बोर्ड को अंतगर्त **देवनागरी–इंस्क्रिप्ट** या **हिन्दी ट्रेडीशनल** चुन कर ओके पर क्लिक करें।
- अब कंप्यूटर को **रीस्टार्ट करें।** दुबारा खुलने पर अपनी पसंद का एप्लीकेशन खोलें, जैसे एमएस वर्ड। स्टेटस बार के एक कोने में **EN** दिखाई देगा, उस पर कर्सर ले जा कर क्लिक करेंगे तो **EN-English** और **HI-Hindi** के विकल्प दिखाई देंगे। **हिन्दी** को चुनें। अब आप हिन्दी में टाइप करना शुरू कर सकते हैं।

विंडोज 2007 में हिन्दी व अन्य भाषाओं को सक्रिय करने की विधिः

- स्टार्ट मेन्यू में जाकर **कंट्रोल पैनल** को क्लिक करें।
- कंट्रोल पैनल में **क्लॉक, लैंग्वेज एण्ड रीजन** के अंतगर्त **चेंज की बोर्डस और अदर इनपुट मैथडस** को क्लिक करें।
- चेंज की बोर्डस और अदर इनपुट मैथडस के अंतगर्त की–बोर्डस एण्ड लैंग्वेजेज ऑप्शन को क्लिक करें।
- की–बोर्डस एण्ड लैंग्वेजेज ऑप्शन के अंतगर्त **चेंज की–बोर्डस** पर क्लिक करें।
- अब **टैक्स्ट सर्विसेस एण्ड इनपुट लैग्वेजज** नाम की विंडो खुलेगी, इसकी **जनरल** टैब के अंतगर्त **ऍड (Add)** बटन पर क्लिक करें।
- यहां से **हिन्दी** अथवा अपनी मनपसंद भाषा एवं उससे संबंधित **की–बोर्ड** को चुनें।
- क्रमशः **एप्लाई** और **ओके** बटनों पर क्लिक करें।
- यदि कंप्यूटर रीस्टार्ट करने का निर्देश दे तो कंप्यूटर को **रीस्टार्ट** करें।

अब आप अपने कंप्यूटर पर हिन्दी में काम कर सकते हैं। आपको बस इतना करना है कि अपना मनपसंद एप्लीकेशन खोलने के बाद स्टेटस बार या टास्कबार के एक कोने में दिखाई दे रहे **EN** पर क्लिक करके **हिन्दी (HI)** को चुन लें।

हिन्दी में टाइप कैसे करें

कंप्यूटर पर टाइप करने का सबसे अच्छा विकल्प है इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड के माध्यम से टाइप करना। इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड न केवल भारत सरकार का मानक है अपितु एक वैज्ञानिक की–बोर्ड है जिसे बहुत जल्दी सीखा जा सकता है और बहुत आसानी से इसके माध्यम से द्रुत गति से टाइप किया जा सकता है। यही नहीं इस एक की–बोर्ड को सीख कर किसी भी भारतीय भाषा में बिना किसी अतिरिक्त प्रयास के टाइप किया जा सकता है। **यही कारण है कि माइक्रोसॉफ्ट व गूगल इत्यादि कंपनियों ने अपने यूनीकोड आधारित फोंट के साथ डिफॉल्ट रूप में केवल इंस्क्रिप्ट की–बोर्ड ले–आउट ही शामिल किया है।**

फिर भी जिन्हें रंमिंग्टन अथवा इंग्लिश फोनेटिक में देवनागरी लिपि में टाइप करना हो वे **www.bhashaindia.com** पर जाएँ और **डाउन लोड्स** पर क्लिक करें। जिनके कंप्यूटर में **विंडो एक्सपी** है वे **इंडीक इनपुट–1** से हिन्दी या अपनी पसंद की भारतीय भाषा के डाउनलोड पर क्लिक करें। जिनके कंप्यूटर में **विंडो विस्टा या विंडो –7** है वे **इंडीक इनपुट–2 के 32 बिट वाले कॉलम** से **हिन्दी** या वांछित **भारतीय भाषा** के **डाउनलोड** पर क्लिक करें एवं **आगे आने वाले निर्देशों का पालन करें।** आपके कंप्यूटर पर सभी इनपुट टूल्स इंस्टॉल हो जाएँगे। कंप्यूटर स्क्रीन के टास्क बार में जहाँ टाइपराइटर का चिह्न बना हो वहाँ क्लिक करके वांछित इनपुट टूल चुनें और हिन्दी या किसी अन्य भारतीय भाषा में टाइप करना आरंभ करें।

फ्रांस में एक्वापोनिक्स फार्मिंग की प्रणाली

सौम्या पांडेय एवं *प्रीतम काला
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, पंचमार्ग, ऑफ यारी रोड, वरसोवा, अंधेरी (पश्चिम), मुंबई
*भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

फ्रांस पश्चिम यूरोप में भारत से लगभग 7500 किलोमीटर की दूरी पर स्थित एक देश है। यह दक्षिण में भूमध्यसागर, उत्तर पश्चिम में इंग्लिश चौनल और पश्चिम में अटलांटिक महासागर से घिरा हुआ है। फ्रांस की राजधानी पेरिस से 600 किलोमीटर दक्षिण में लोजेर नामक एक प्रांत है। लोजेर प्रांत की हसीन वादियों में एक गाँव ला कानानूर में लेगपा लुईस पाश्चर नामक एक मत्स्य संस्थान स्थित है। इस संस्थान में छात्र डिप्लोमा करते हैं। इस संस्थान के फार्म का नाम सेंट फ्रैन्जाल है, जिसके अंतर्गत छात्र पढाई के साथ–साथ प्रयोगात्मक परीक्षण भी लेते हैं। इस फार्म में एक हैचरी (स्पुटनसाला), रेसवे, फोटोपीरियड रेसवे, पॉलीलाइन तालाब, एक्वापोनिक्स यूनिट, रीसर्कुलेटरी एक्वाकल्चर सिस्टम यूनिट और मत्स्य प्रसंस्करण यूनिट है। यह फार्म पूरी तरह से शीतजल मात्स्यिकी को समर्पित है। हमें फ्रांस मे तीन महीनों तक शीतजल मात्स्यिकी के क्षेत्र में प्रशिक्षण प्राप्त करने का मौका मिला। हम प्रस्तुत लेख के माध्यम से एक्वापोनिक्स यूनिट के बारे में जो कुछ भी सीखने को मिला उस पर प्रकाश डालना चाहते हैं, ताकि हम भी शीतजल मात्यिसवकी के क्षेत्र मे दूसरे देशों की तकनीकी प्रणाली को समझ सकें।

एक्वापोनिक्स समझने से पहले हाइड्रोपोनिक्स एवं जलकृषि को समझना जरुरी है। हाइड्रोपोनिक्स मिट्टी के बिना पौधों को उगाने की एक विधि है जिसमें पौधे पानी के विलायक में खनिज पोषक तत्वों का उपयोग करते हैं। पौधों को केवल उनकी जड़ों के साथ पौष्टिक पानी के संपर्क में लाया जाता है या जड़ों को पेरालाइट, बजरी जैसे निष्क्रिय माध्यम द्वारा शारीरिक रूप से समर्थित किया जाता है। खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) के अनुसार जलकृषि का मतलब मछली, मोलस्क, क्रस्टेसियन और जलीय पौधों सहित जलीय जीवों की खेती से समझा जाता है। खेती का तात्पर्य उत्पादन बढ़ाने के लिए पालन प्रक्रिया में किसी प्रकार के हस्तक्षेप से है, जैसे नियमित स्टॉकिंग फीडिंग, शिकारियों से सुरक्षा आदि। खेती का तात्पर्य खेती किए जा रहे स्टॉक के व्यक्तिगत या कॉर्पोरेट स्वामित्व से भी है।

एक्वापोनिक्स एक सततः खाद्य उत्पादन की प्रणाली है, जिसमें एक सहजीवी वातावरण में हाइड्रोपोनिक्स (पानी में पौधों की खेती) के साथ पारंपरिक जलकृषि (मछली, झींगे जैसे जलीय जानवरों को बढ़ाना) को जोड़ा जाता है। सामान्यत जलकृषि में उतपादित जानवरों का मल–मूत्र पानी में जमा हो जाता है एवं उनके लिए हानिकारक हो सकता है। एक एक्वापोनिक्स प्रणाली में, एक जलकृषि प्रणाली से पानी एक हाइड्रोपोनिक प्रणाली को भेजा जाता है, जहां उप–उत्पादों को शुरू में नाइट्राइट्स में और बाद में नाइट्रेट में नाइट्रिफाइंग जीवाणुओं द्वारा तोड़ दिया जाता है जो पौधों द्वारा पोषक तत्वों के रूप में उपयोग किए जाते हैं। फिर, पानी को जलकृषि प्रणाली में वापस भेज दिया जाता है।

फ्रांस की एक्वापोनिक्स यूनिट को दो भागों में बांटा गया है। प्रथम भाग में तिलापीआ मछली का उत्तपादन किया जाता है जिसके अवशिष्ट पानी का उचित समाधान करके दूसरे भाग में स्थानांतरित किया जाता है जहाँ पौधों का उत्तपादन किया जाता है। प्रथम भाग में चार टब हैं जिनमे तिलापिआ हैं। इन टबो के ऊपर एक स्क्रीन ऐरेटर लगा है जहाँ पर पानी के इनलेट से पानी गिरता है। पानी स्क्रीन पर गिरते ही फैल जाता है और अलग अलग बूंदो में बिखर कर टब में गिरता है, जिसके फलस्वरूप घुलित ऑक्सीजन की मात्रा को बढ़ाया जाता है। मछलियों को दिन में चार बार आहार दिया जाता है। आहार मछलियों के आकार एवं घनत्व को ध्यान में रखकर दिया जाता है। मछलियाँ आहार लेने के बाद पानी में मल त्याग करती हैं। मछलियाँ मल को अमोनिया के रूप में त्यागती हैं जिसके कारण पानी अमोनियात हो जाता है। तत्पश्चात मल एवं अमोनियात पानी आउटलेट की मदद से हैड्रोटेक फिल्टर (ड्रम फिल्टर) में चला जाता है। हैड्रोटेक फिल्टर के अंदर ड्रम लगा होता है

जो अपनी धुरी पर घूमता रहता है, पानी की तेज बौछारे इस ड्रम पर पड़ती है जिसके फलस्वरूप ठोस मल पानी से अलग हो जाता है। ठोस मलरहित अमोनियात पानी भण्डारण टैंक में चला जाता है जबकि मल एक पाइप की सहायता से डिकैन्टेशन टैंक में चला जाता है। डिकैन्टेशन टैंक में मल को अवसादन करके बाहर निकाल लिया जाता जबकि ऊपर उपस्थित अमोनियात पानी एक आउटलेट की मदद से भण्डारण टैंक में जाता है। भण्डारण टैंक धरातल से नीचे बना होता है जिसके कारण इसमें पानी गुरुत्वाकर्षण बल की मदद से जाता है जबकि पानी को बाहर पंप की सहायता से निकाला जाता है। भण्डारण टैंक में मौजूद अमोनियात पानी को पंप की सहायता से बाहर निकाला जाता है जो यूवी फिल्टर से गुजरकर बायोलॉजिकल फिल्टर में चला जाता है। यूवी फिल्टर में यूवी प्रकाश होता है जो सूक्ष्मजीवों को निष्क्रिय कर लेता है। बायोलॉजिकल फिल्टर में नाइट्रोबैक्टर एवं नाइट्रोसोमोनास नामक बैक्टीरियों का उत्त्पादन किया जाता है। इन बैक्टीरियों को पनपने के लिए अधिक सतह क्षेत्र की भी जरुरत होती है जो बायोफिल्टर मीडिया की छोटी छोटी बिट्स द्वारा दिया जाता है, ये बिट्स पूरे फिल्टर में डाली जाती है। बायोफिल्टर को अधिक कॉम्पैक्ट बनाने के लिए आमतौर पर ऐसी सामग्री को चुना जाता है जिसमें प्रति यूनिट वॉल्यूम सतह क्षेत्र अधिक होता है। आमतौर पर इस इकाई को बायोफिल्टर मीडिया के विशिष्ट सतह क्षेत्र (एसएसए) के रूप में जाना जाता है। बायोफिल्टर मीडिया की छोटी छोटी बिट्स ये काम बखूबी निभाती है। सीधे शब्दों में कहें तो, अधिक सतह क्षेत्र उपलब्ध होने से अधिक बैक्टीरिया कोशिकाओं को उगाया जा सकेगा और अधिक से अधिक नाइट्रिफिकेशन क्षमता होगी जिसके फलस्वरूप उच्च फीड दरों को प्राप्त किया जा सकता है। कम एसएसए की तुलना में एक उच्च एसएसए वाला बायोफिल्टर अधिक कॉम्पैक्ट होता है। बैक्टीरिया अमोनिया को ऑक्सीकरण करते हैं, इसे विकसित करने के लिए उपयोग करते हैं, और इसे नाइट्राइट (NO_2-) में परिवर्तित करते हैं। यह एक एरोबिक प्रक्रिया है जिसे होने के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। इनके उत्पादन के लिए ऑक्सीजन की अत्यधिक मात्रा होनी चाहिए, जिसके लिए एयरेटर की मदद से बायोलॉजिकल फिल्टर में ऑक्सीजन का प्रवाह किया जाता है। अमोनिया को नाइट्राइट में नाइट्रोसोमोनास बैक्टीरिया द्वारा बदला जाता है। अमोनिया की तरह, नाइट्रोसोमोनास बैक्टीरिया द्वारा उत्पादित नाइट्राइट जलीय जीवों के लिए विषाक्त है। इसका नाइट्रोजन के कम जहरीले रूप में आगे ऑक्सीकरण नाइट्रोबैक्टर द्वारा किया जाता है, ये बैक्टीरिया नाइट्रोसोमोनास द्वारा उत्पादित नाइट्राइट (NO_2–) को मेटाबोलाइज और ऑक्सीकरण करते हैं और इसे नाइट्रेट (NO_3) में परिवर्तित करते हैं। नाइट्रेट बनाने में ऑक्सीजन का भी सेवन किया जाता है। नाइट्रेट अमोनिया और नाइट्राइट के रूपांतरण का अंतिम उत्पाद है और जो जलीय जीवो के लिए विषाक्त नहीं है। इस प्रकार बायोलॉजिकल फिल्टर में नाइट्रेट युक्त पानी बन जाता है। बायोलॉजिकल फिल्टर से एक आउटलेट निकालता है जो सीधे उन चार टबो के ऊपर लगे स्क्रीन ऐरेटर पर गिरता है, इससे आगे की प्रणाली की चर्चा हम पहले कर चुके हैं। इस प्रकार ये पूरी प्रणाली रीसर्कुलेटरी एक्वाकल्चर सिस्टम का काम करती है। इस प्रकार टबो में नाइट्रेट की मात्रा बढ़ती रहती है और अमोनियात पानी नाइट्रेट में बदलता रहता है। बार बार पानी के रीसर्कुलेशन के कारण भण्डारण टैंक में भी नाइट्रेट युक्त पानी रहता है यह प्रथम भाग में ये प्रक्रिया बार बार चलती रहती है।

एक्वापोनिक्स यूनिट का दूसरा भाग ग्रीनहाउस (हरितगृह) है। ये ग्रीनहाउस प्लास्टिक से बना है यह गरम रहता है, क्योकि सूर्य द्वारा भेजे गए प्रकाश से जो विकरण होता है इसके द्वारा अवशोषित या बहार जाने नहीं दिया जाता है। इस यूनिट में एक थर्मोरिसेप्टर लगा है जो तापमान को रिकॉर्ड एवं बनाए रखने में सहायता करता है। इस यूनिट का तापमान हमेशा 20°C बने रहता है उसके लिए थर्मोरेसेप्टर सिग्नल द्वारा मशीन को तापमान भेजता है और मशीन छत पर लगी दूसरी मशीन को सिग्नल भेजती है। छत पर लगी मशीन का कार्य तापमान को नियत्रित करना होता है। मशीन द्वारा तापमान 20°C से ज्यादा होने पर छत को ऊपर उठाकर खोल दिया जाता है जबकि तापमान 20°C से कम होने पर छत को बंद कर दिया जाता है। यह मशीन स्वचालित कार्य करती है।

इस यूनिट में पौधों को उगने के

लिए दो तरीके इस्तेमाल किये जाते हैं राफ्ट और टेबल। राफ्ट पॉलीस्टीरीन से बने होते हैं जिनमें पौधों को रखा जाता हैं और इसके नीचे रेक होता हैं जिसमें पानी बहता रहता है। राफ्ट में सलाद उगाया जाता है। पौधों को नारियल की भूसी एवं पीट के मिश्रण में एक प्लास्टिक से बने खांचे में रखा जाता है, जिसका आकार राफ्ट में बने गोले के व्यास के बराबर बना है। प्लास्टिक से बने खांचे बीच बीच में खुले होते है जिससे पानी का संपर्क पौधे की जड़ो से बना रहता है। टेबल पर पौधों को पीट एवं नारियल की भूसी के मिश्रण के साथ एक विशेष प्रकार की थैली में रखा जाता है, जिनमें पानी अंदर एवं बाहर जा सकता है। टेबल पर स्ट्रॉबेरी को उगाया जाता है।

पहली यूनिट के भंडारण टैंक से एक इनलेट पाइप पंप की सहायता से नाइट्रेट युक्त पानी को राफ्ट तक पहुँचाता है। राफ्ट में एक आउटलेट होता है, जो गरूत्वाकर्षण की मदद से पानी को वापस भंडारण टैंक तक पंहुचा देता है। टेबल के लिए भण्डारण टैंक से छोटे व्यास का पाइप पंप की सहायता से पानी को पहुँचाता है। टेबल के लिए छोटे व्यास का पाइप दबाब को बढ़ाने के लिए प्रयोग किया जाता है। टेबल में सिर्फ दिन में 11 बजे पानी दिया जाता है जो की आउटलेट की मदद से वापस भण्डारण टैंक में चला जाता है। इस प्रकार दूसरी यूनिट का पानी भी रीसर्कुलेट होता रहता है जो मछली एवं पौधों के लिए फायदेमंद होता है।

एक्वापोनिक्स तकनीकी द्वारा मछली के साथ साथ स्ट्रॉबेरी, सलाद इत्यादि का उत्पादन किया जाता है। नाइट्रेट एवं अन्य मिनरलो का पौधों द्वारा पूर्णतया उपयोग किया जाता है जोकि पानी में बहुताय मात्रा में होते हैं। ये तकनीक मछली पालन में विविधता एवं खाद्य सुरक्षा को मजबूत करती है। एक तरफ जहाँ मछली द्वारा नॉन वेजिटेरियन लोगों की आवश्कता की पूर्ति होती है, वहीं सब्जियाँ उगा के वेजीटेरियन लोगों को भी खाद्य सुरक्षा दी जाती है। इस प्रकार एक्वापोनिक्स द्वारा बाजार में आसानी से लाभ अर्जित किया जा सकता है। इस तकनीक में एक रुकावट पम्पों को चलने के लिए बिजली की हर समय उपलब्धता हो सकती है, लेकिन सौर ऊर्जा इसका विकल्प है। हम आशा करते हैं, फ्रैजाल फार्म की एक्वापोनिक्स यूनिट की कार्यप्रणाली से हमें जो भी अनुभव मिले वो शीतजल मात्स्यिकी को नयी दिशा की ओर अग्रसर करने में सहयोग करेंगे।

अभिस्वीकृतिः लेखक गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर का धन्यवाद करते हैं, जिन्होंने मत्स्य महाविद्यालय, पंतनगर के माध्यम से फ्रांस में प्रशिक्षण लेने में सहयोग किया।

सेंट फैन्जाल फार्म में एक्वापोनिक्स यूनिट

ग्रीन हाउस का आंतरिक दृश्य

राफ्ट में सलाद का उत्पादन

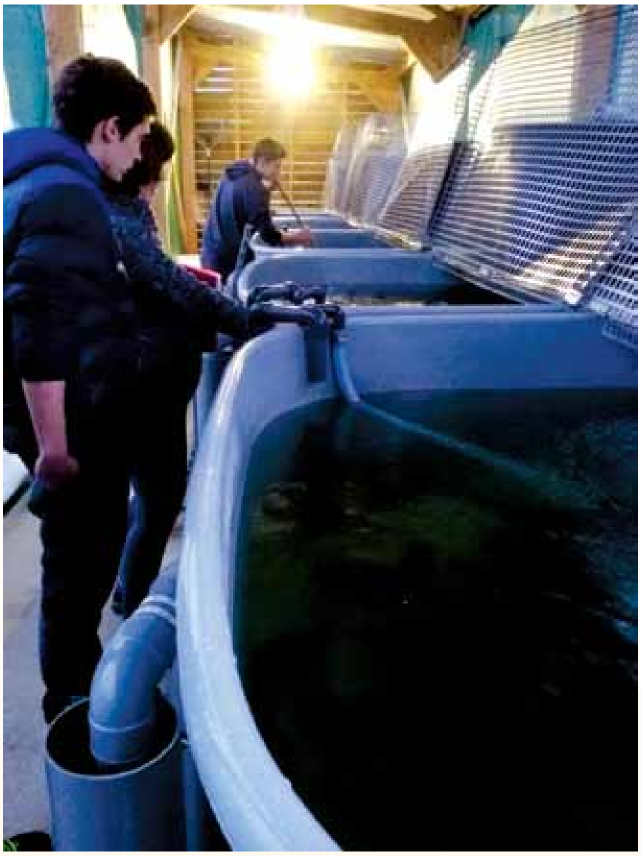

प्रथम भाग में तिलपीआ मछली का उत्पादन

बायोलॉजिकल फिल्टर

थर्मोरिसेप्टर

डिकैन्टेशन टैंक

थर्मोरिसेप्टर सिगन्ल को प्राप्त करने वाली मशीन

तापमान नियंत्रित स्वचालित मशीन

टेबल में स्ट्रॉबेरी का उत्तपादन

हैड्रोटेक फिल्टर (ड्रम फिल्टर)

पूर्वोत्तर क्षेत्र के दूरस्थ पहाड़ों में जीवन जीने का तरीकाः एक नया अनुभव

दीपज्योति बरूवा एवं पार्थ दास
भा.कृ.अनु.प.–शी.मा.अनु. निदेशालय, भीमताल

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय की विकासात्मक गतिविधियों से जुड़े होने के कारण हमें देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र के दूरस्थ क्षेत्रों में स्थानीय समुदाय के जीवन तक पहुंचने का अवसर मिलता है। इन लोगों का जीवन प्राकृतिक संसाधनों के साथ बहुत जटिल हैं। ये लोग दिन–प्रतिदिन की आवश्कताओं जैसे भोजन, आश्रय के लिए सामग्री और बुनियादी सुविधाओं को इकट्ठा करने के लिए प्रकृति से सीधे जुड़े हैं। इस क्षेत्र में 150 से अधिक जनजातियाँ एवं उप जनजातियाँ हैं, जिनकी अपनी बोली और संस्कृति है। कई बार यह समझना मुश्किल है कि इन जनजातियों द्वारा एक आम भूमि का हिस्सा किस प्रकार से बांटा जाता है, जबकि हर एक समुदाय का अपना एक विश्वास, मिथक, सामाजिक वर्जनायें और सांस्कृतिक विरासत है। देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों के भरपूर होने से इसका लोगों के जीवन पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इस क्षेत्र का दौरा, आजीविका के अद्भुत स्रोत के रूप में इन संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करना एक अद्वितीय अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। इस बात में कोई भी आश्चर्य नहीं है, कि इस क्षेत्र की विशाल जैव विविधता लोगों की ग्रामीण आजीविका के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यहाँ ज्यादातर लोग मांसाहारी हैं, इसलिए मछली पकड़ना और शिकार करना अभी भी इस क्षेत्र में बहुत प्रचलित किया जा रहा है। अधिकांश क्षेत्रों में संसाधनों की उपलब्धता होने के कारण आदिवासियों ने कृषि और पशुपालन का अभ्यास किया है, जो की उन्हें पसंद नहीं था। मानव सभ्यता की प्रगति के साथ इन स्थानीय लोगों ने अपनी बुनियादी खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए स्वयं के पारंपरिक तरीकों से खेती के लिए भूमि का उपयोग करने के साथ–साथ कुछ जंगली जानवरों को पालतू बनाना सीखा है। अरुणाचल प्रदेश में याक (पोएफेगस ग्रुनियंस) एवं अरुणाचल प्रदेश और नागालैंड दोनों में मिथुन (बोस फ्रोंटलीस) का पालन इस बात का हवाला देते हैं। देश में कुल याको और मिथुनो की संख्या क्रमशः 76662 एवं 298264 है (पशुधन जनगणना 2012)। ये अर्ध पालतू प्रकृति के जानवर हैं जिन्हें मांस, चमड़े, रेशे, खाल, दूध, दुग्ध उत्पाद, परिवहन आदि के लिए पाला जाता है। इन पशुओं के महत्व के कारण क्रमश दिरंग (अरुणाचल प्रदेश) और मेदजिफेमा (नागालैंड) में याक और मिथुन पर दो आईसीएआर आधारित राष्ट्रीय अनुसंधान केंद्र स्थापित किए गए हैं। ब्रोकपा, अरुणाचल प्रदेश के तवांग और पश्चिम कामेंग जिले में मोंपा जनजाति का एक बुकोलिक समुदाय है। ये याक पालन में अत्यधिक पेशेवर हैं, जो अत्यधिक ठंडी पर्यावरणीय परिस्थितियों में पाला जा रहा है। ब्रोकपास विभिन्न मौसमों में याक को ऊंचाई में चराई के लिए स्थानांतरित करके एक खानाबदोश जीवन व्यतीत करते हैं। ऊंचाई वाली जगहों पर फसल का होना मुमकिन नहीं हैं जिसके कारण इन चरवाहों का अस्तित्व पूरी तरह से आजीविका के लिए याक पर निर्भर करता है। ब्रोकपा के लिए आय का प्रमुख स्रोत मादा डिजोमो द्वारा उत्पादित दूध और इसके संस्कृत उत्पाद घी और चूरपी (गीला पनीर) हैं। नर जो (जेडओ) का उपयोग पहाड़ी इलाकों में माल की ढुलाई के लिए किया जाता है जहां संचार का कोई साधन नहीं है। याक मोंपा जनजाति के बीच गहरे धार्मिक अर्थ हैं जो उनके प्रसिद्ध याक नृत्य के साथ झलकता है। अरुणाचल प्रदेश की पहली फीचर फिल्म सोनम को देखना चाहिए जो की ब्रोकपा के जीवन और विद्या पर बनाई गई है और यह पद्मश्री येशे दोरजी थोंगची द्वारा असमिया उपन्यास पर आधारित है। दूसरी ओर, मिथुन का भी जनजाति समुदायों के बीच अधिक महत्व है, विशेष रूप से विवादों को निपटाने और विवाह समारोहों के संचालन में जानवरों का आदान–प्रदान किया जाता है। इस प्रकार मिथुन शांति और सांप्रदायिक सद्भाव का

प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व है। मिथुन झुंड आदिवासी पदानुक्रम और सामाजिक स्थिति से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। इसलिए, मिथुन को अरुणाचल प्रदेश और नागालैंड के राज्य पशु के रूप में पहचाना जाता है। पूर्वोत्तर क्षेत्र के पहाड़ी राज्यों की अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है, क्योंकि दुर्गम इलाकों के कारण औद्योगीकरण अपनी छाप नहीं बना सका। अरुणाचल प्रदेश में व्यवस्थित कृषि के अलावा, स्थानांतरण खेती (झूम) विशेष रूप से राज्य में पहाड़ी जनजातियों के बीच खाद्य उत्पादन की एक सदियों पुरानी प्रथा बनी हुई है। झूम एक कृषक समूह के अस्थायी प्रवास के साथ शुरू होता है जो भूमि के एक निश्चित पट्टी पर कब्जा, जंगलो की सफाई, कुछ वर्षों के लिए खेती और अंत में प्राकृतिक वनस्पति के कायाकल्प के लिए छोड़ दिया जाता है। झूम में मक्का, बाजरा, धान, अरबी, शकरकंद, हल्दी, अदरक, हरा चना, काला चना, राजमा, टमाटर जैसी फसलें और सब्जियां उगाई जाती हैं। इन झूम कृषकों के लिए आय का अन्य स्रोत आंशिक रूप से वनोपज को इकट्ठा करना है। शोधकर्ता इस प्रथा को आदिवासी आबादी, उनकी जीवनशैली, सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था के लिए आजीविका का महत्वपूर्ण साधन मानते हैं जो की इनकी जातीयता से गहरी जड़ें जमाता हैं। यह भी माना जाता है कि खेती की यह प्रथा एक विशेष जनजाति समुदायों के व्यापक वितरण के लिए जिम्मेदार है, शुरू में झूम के लिए जमीन की तलाश में पलायन किया और बाद में फसलें उगाने के लिए बस गए। एक कदम आगे बढ़ते हुए अरुणाचल प्रदेश की जीरो घाटी ने इसमें काफी लोकप्रियता हासिल की है। हाल के दिनों में और चावल की खेती के साथ मछली (कॉमन कार्प) जुटाने की अपनी अनूठी प्रणाली के लिए यूनेस्को द्वारा एक प्रस्तावित विरासत स्थल है। यहां चावल छतों में उगाया जाता है जो की प्राथमिक और माध्यमिक चैनलों के नेटवर्क द्वारा अच्छी तरह से सिंचित किया जाता है। इन छतों में प्रत्येक जटिल खाई हर मौसम मे मछली के लिए आश्रय प्रदान करती है। जिरो घाटी तक ही सीमित अपाटनी जनजाति ने यह हासिल किया है, अनादिकाल से विशेषज्ञता के कारण चावल सह मछली पालन उनकी आजीविका और पोषण सुरक्षा का एक अभिन्न हिस्सा बन गया है। इसके साथ ही, प्राकृतिक जल निकायों से विभिन्न साधनों द्वारा पकड़ी जाने वाली स्थानीय मछलियां पहाड़ी जनजातियों के आहार में एक बड़ा हिस्सा बनती हैं। कम ज्ञात मछलियों में से कुछ जैसे गारा स्पीशीज, साइलोरीनकस स्पीशीज, अबोरीकाईथस स्पीशीज, एम्ब्लिसेप्स स्पीशीज, ग्लिप्टोथोरैक्स स्पीशीज, सुडेचीनेइस स्पीशीज, सीसचुरा स्पीशीज, लेपिडोशेफा–लीकाईथस स्पीशीज, टेरोक्रिप्टिस स्पीशीज को ताजा और संरक्षित दोनों स्थितियों में प्रोटीन स्रोत के रूप में सेवन किया जा रहा है। एक्वाकल्चर जिसमें कार्प्स, कैटफिश, झींगे के उत्पादन में मैदानों की हिस्सेदारी ज्यादा है, इसलिए जनजाति के लोग पूरी तरह से मछली पकड़ने पर निर्भर करते हैं। इस प्रकार हिमालय में पहाड़ वासी लोगों के लिए नदियां और ऊँची झीलें जीवन रेखा बनाती हैं। हालांकि, यह उल्लेख करने के लिए उल्लेखनीय होगा कि नदी रेखा के किनारे के लोगों को इन मछलियों के अति दोहन के परिणामों के बारे में पता है। दिलचस्प बात यह है कि नदियों का स्वामित्व निजी व्यक्तियों और स्थानीय समुदाय द्वारा नियंत्रित हैं और पारंपरिक प्रथागत कानूनों द्वारा शासित है। अवैध तरीकों का उपयोग जैसे जहर और डायनामाइट का प्रयोग करके मछलियों की अंधाधुंध हत्या स्थानीय निवासियों द्वारा रोकी जाती है। व्यक्तियों को सिर्फ नदी के अपने क्षेत्र में मछली पकड़ने की अनुमति है, वे अन्य क्षेत्र में मछली नहीं पकड़ सकते हैं। ऐसा करने से अद्वितीय मछली पकड़ने के महत्वपूर्ण तरीकों का विकास हुआ है जिसमें मछली एकत्र करने वाले उपकरणों, बांस से बने जाल, फंदे (नूस) और लाइन प्रमुख हैं। ये सब तरीके मछली को विशेष क्षेत्र में एक साथ पकड़ने के लिए मददगार हैं। स्नो ट्राउट (साइजोथोरैक्स स्पीशीज) केवल स्वदेशी मछली है जो बर्फीली पानी की तेजी से बह रही नदियों में मिलती है और पहाड़ निवासियों के लिए प्रोटीन का पूरक स्रोत है। नदी घाटियों में संचालित मछली पकड़ने की अनूठी विधि फंदा और लाइन को यहाँ देखा जा सकता है। यह मछली पकड़ने का उपकरण दुनिया भर में शौकीन एंगलर्स द्वारा उपयोग की जाने वाली एक परिष्कृत रॉड और लाइन की नकल करता है। लेकिन, उपकरण का पूरा घटक आसानी से बना है जिसमें बांस की छड़, रील के लिए एल्यूमीनियम स्ट्रिंग, वजन के रूप में पत्थर का टुकड़ा, लोहे के बने हुक और

मोनोफिलमेंट लाइन समलित हैं। इसी तरह, बहुत सारे ट्रैप्स (जाल) जैसे तकोंन, इदिर, तिरदु, नीबू, काबुलु, होप बांस से निर्मित स्वदेशी हैं जो पानी के प्रवाह में मछली पकड़ने के लिए डिजाइन किये गए हैं। इसलिए ये ट्रैप्स इन आदिवासियों के जीवन से जुड़े हैं, जो की मछली, लोगों और संसाधनों को जोड़ते हैं। देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र में बांस, आबादी की जातीयता के साथ निकटता से संबंधित है और इसका इतिहास, हस्तशिल्प, संगीत, रीति रिवाज, वास्तुकला और जनजातियों के भोजन पर एक मजबूत प्रभाव है। बांस की शाखा (बम्बू शूट) अपने असाधारण स्वाद के कारण भोजन के रूप में पसंद किया जाता है। बांस के अन्य उपयोगों में बांस के तने में भोजन का भंडारण और संरक्षण, स्थानीय शराब परोसने और ग्रामीण घरों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस संदर्भ में, मिजोरम को भारत की बांस रानी माना जाता है क्योंकि राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 57% भाग बांस से घिरा है। पहाड़ी क्षेत्रों में खराब सड़क और परिवहन सुविधाओं वाले दूरस्थ क्षेत्रों में जहाँ आश्रय बनाने के लिए बहुत प्रयास की आवश्यकता है, एक जनजाति घर (चांग) का बहुत महत्व है। अरुणाचल प्रदेश के सियांग नदी के किनारे आदि जनजाति ने पाम जैसे पेड़ों को लगाया है, जिनको अंग्रेजी में फैन ट्री, स्थानीय भाषा में टोको और वैज्ञानिक नाम लिविस्टिना जेनकिंसाना कहते हैं। टोको पेड़ एक लुप्तप्राय पाम है और अरुणाचल प्रदेश के मध्य पहाड़ी क्षेत्रों में पाए जाने वाले स्थानिक वनस्पतियों में से एक है। इसे आदि जनजाति द्वारा झूम क्षेत्रों में उद्देश्यपूर्ण रूप से बोया जाता है। ये पाम उद्यान पूर्वजों से विरासत में मिले हैं और इसकी बहु उपयोगिता गुणों के कारण एक अत्यधिक जैव–सांस्कृतिक मूल्य है। टोको पत्ते जनजाति की आजीविका का एक अभिन्न हिस्सा हैं, ये घर की छतों, बारिश आवरण, टोपियां, टोकरी, पीठ थैला, झाड़ू और हाथ के पंखे बनाने में उपयोग किये जाते हैं, इनका स्व जीवन 5–10 साल होता है। इसके फलों को चटनी के रूप में भी पसंद किया जाता है। रेशेदार सामग्रियों का उपयोग रस्सियों और बैग बनाने के लिए किया जाता है। इसके फलों को चटनी के रूप में भी पसंद किया जाता है। रेशेदार सामग्रियों से रसियाँ और बैग तथा तन्ने का उपयोग धाराओं पर छोटे पुल बनाने के लिए किया जाता है। आकर्षक असमिया जापी भी टोको पत्तियों से बुना जाता है, जो असमिया गौरव के प्रतीक के रूप में प्रचलित है। ये पेड़ पहाड़ियों में मानव जीवन के जातीय और सामाजिक–आर्थिक क्षेत्रों में इतना बड़ा योगदान दे रहा है। मशरूम एक ओर ऐसी फसल है जो जनजातीय लोगों की भोजन की आदत का अभिन्न अंग है। इस फसल को भविष्य की सब्जी कहा जाता है। इसे एक आदर्श स्वस्थ भोजन माना जाता है। इसकी खेती कम निवेश के साथ कम जगह में की जाती है। अतीत में मशरूम स्थानीय पहाड़ी लोगों द्वारा जंगलों से एकत्रित किया जाता था जिसमे वे जहरीले मशरुम को अलग कर के खाने योग्य को छाँटते थे। खेती के तरीकों में हाल ही में हुई प्रगति के साथ, दो मशरूम के प्रकार अगरिकस स्पीशीज (बटन मशरूम) और प्ल्यूरयटस स्पीशीज (सीप मशरूम) की ज्यादातर खेती की जाती है। पूर्वोत्तर पहाड़ियों में इस तरह के मूल्यवान संसांधनों की सूची बहुत बड़ी है। उनमें से, बागवानी फसलें जो शीतोष्ण क्षेत्रों में देखी जा सकती हैं उनमें संतरे, नाशपाती, बेर, आड़ू, स्ट्रॉबेरी, अंगूर, अखरोट, सेब और कीवी मुख्य हैं। आज के समय में कीवी ने अपने पोषक तत्व मूल्य के कारण पूर्वोत्तर क्षेत्र में सबका ध्यान अपनी तरफ खींचा है। कीवी फल, जिसे चीनी गूसबेरी (ऐक्टिडिया डेलिओसा) के नाम से जाना जाता है, इसको चीन का चमत्कारी फल और न्यूजीलैंड का बागवानी आश्चर्य के रूप में भी जाना जाता है। हालांकि कीवी का उत्तपादन देश में देर से शुरू किया गया है, लेकिन इसके उत्पादों में शराब जिसे नारा आबा नाम से अरुणाचल प्रदेश की जीरो घाटी में बनाया जाता है। जैसा कि पहले भी उल्लेख किया गया है, प्राकृतिक संसाधनों के रूप में नागा मिर्च, बड़ी इलायची, मसाले, सब्जियाँ, अरबी, केले के पौधे आदि कि अद्वितीय उपलब्धता पहाड़ियों पर रहने वालों के बीच जीविका और भरण–पोषण के लिए व्याख्यात्मक मूल्य रखते हैं। उन्होंने अपने समृद्ध पारंपरिक ज्ञान का उपयोग विभिन्न स्वदेश में पाए जाने वाली वनस्पतियों और जीवों, वनोपज, जलीय उत्पादों से पोषण युक्त खाद्य और मादक पदार्थों को स्मोकिंग, किण्वन, उबालना, सूरज की गर्मी में सुखाने, सॉसेज आदि द्वारा संरक्षित करना सीखा है। कुल मिलाकर, यह एक निर्विवाद तथ्य है कि मानविकी और

जैव संसाधन इतनी बारीकी से परस्पर जुड़े हैं जो विकास की प्रक्रिया में आगे बढ़ने का रास्ता हैं। अन्य शब्दों में कहें तो जाति को प्रकृति के साथ पारस्परिक सद्भाव के माध्यम और उचित नैतिक मूल्य को अपनाकर उनके जीवन यापन के लिए कई जीवन रेखा प्रदान की जा रही है।

सफलता की कहानी

कुँवर सिंह बगड़वाल एवं *धीरज पन्त
*राज्य मत्स्य विभाग, भीमताल
*ग्राम–तैराड़, पो.–भतरौजखान, वि.ख.–बेतालघाट, नैनीताल

अपने आप को बढ़ाने के लिए मत्स्य पालन का कार्य किसी भी परंपरागत खेती के साथ–साथ किया जा सकता है बस आवश्यकता होती है तो थोड़ी मेहनत की और तकनीकी जानकारी की है नैनीताल जिले के दुर्गम विकास खण्ड बेतालघाट के ग्राम तौराड़ निवासी धीरज पन्त ने।

यूँ तो धीरज स्वयं कु.वि.वि. नैनीताल से भूगोल विषय के शोध छात्र हैं, जो आगे जाकर अध्यापन के क्षेत्र में कार्य करना चाहते है लेकिन कमजोर आर्थिक स्थिति एवं ग्रामीण पृष्ठभूमि के चलते अनेक कठिनाइयों का सामना रोज करना पड़ता था।

वर्ष 2017–18 में अपनी बंजर पड़ी हुयी लगभग 30 नाली जमीन पर उन्होंने स्वरोजगार हेतु कोई क्रियाकलाप शुरू करना चाहा चूंकि भूमि के पास पानी का प्राकृतिक निजी स्त्रोत है जिसके चलते भूमि दलदली हो गयी थी। अतः उन्होंने उक्त भूमि में एक नाली (200 वर्गमी0) का मत्स्य पालन तालाब निर्माण करने की ठानी।

अतः मत्स्य विभाग से सम्पर्क किया क्षेत्रीय प्रभारी द्वारा भूमि का निरीक्षण कर विभागीय स्वीकृति प्रदान की।

चूंकि धीरज स्वयं ग्रामीण पृष्ठ भूमि से हैं और उनके पिताजी पुराने पत्थर के मिस्त्री रहे हैं अतः उन्होंने एवं उनके पिताजी ने स्वयं मजदूरी कर के 02 माह के भीतर 200 वर्ग मी0 का एक तालाब बना डाला।

बकौल धीरज उनके दोस्त उस समय उनकी यह कहकर मजाक उड़ाते थे कि ‘‘तुझसे लेबर (मजदूर) की जैसी बदबू आ रही है’’ धीरज हसी में टाल जाते थे।

बहरहाल तालब तैयार हुआ अनुदान की धनराशि भी मत्स्य विभाग द्वारा DBT के माध्यम से खाते में डाल दी गयी थी। बीज संचय करने हेतु क्षेत्रीय प्रभारी स्वयं तालाब पर गए थे। तकनीकी जानकारी के लिए समय–समय पर विभाग से सम्पर्क किया जाता था, जैसे मछली को भोजन बीमारियाँ आदि

माह जून 2019 में मत्स्य बीज संचय किया गया था जिसके बाद विभागीय दिशा निर्देशानुसार आहार डाला गया।

उसके उपरान्त माह मार्च 2020 में सरकार द्वारा लॉकडाउन घोषित किया गया, अतः जो भी गॉव–तौराड़ बाहर दिल्ली या अन्य राज्यों में प्राइवेट नौकरियां करते थे सभी वापस आए। और इसी बीच मछलियाँ भी बिक्री लायक हो गयी थी। गांव वालों द्वारा मछली की मांग किए जाने पर जाल से मछली निकाल कर बेची।

धीरज के अनुसार उनके द्वारा रू0 200–250/– प्रति किलो के हिसाब से अलग–अलग दिनों में कुल 96 किग्रा0 मछली बेची और लगभग 50 किग्रा0 मछली शेष है।

उनके वही दोस्त जो उनकी जो मजाक उड़ाया करते थे लॉकडाउन में उनसे रूपये उधार कर अपने घर गए है।

परंपरागत कृषि पशुपालन के साथ–साथ उस तालाब के

आस–पास केले, संतरे, माल्टे, तेज पत्ता, कागजी नींबू आदि के पेड़ भी लगाए गए, जिससे अधिक आय अर्जित की जा सके।

म.बी./जीरा को संचय करने हेतु 10 x 4 मी0 का एक छोटा टैंक निजी प्रयासों से बनाया, जिसे अंगुलिका होने पर बड़े तालाब में डाला जाता है।

अतः पर्यटन विभाग के सहयोग से अब उस पूरी भूमि को एक कैंम्प साइट के रूप में विकसित करने का क्षेत्रीय प्रभारी द्वारा धीरज को यह विचार दिया गया है चूंकि 30

नाली भूमि अनेक क्रियाकलापों के लिए पर्याप्त है।

अब धीरज ज्यादा नहीं तो थोड़ी आय स्वयं अर्जित कर लेता है। और आत्मनिर्भर हो चुका है।

समझदार व्यक्ति खुद गलतियां नही करता है,
बल्कि दूसरों की गलतियों से जीवन की
सच्चाई परख लिया करता है।

–स्वेट मार्टिन

सालमन मछ्ली: वास्तविक तथा कलाकृतियों में

रमेश सोमवंशी
भाकृअनुप–भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान, इज्जतनगर, बरेली

उत्तरी भारत में 'रोहू' तथा बंगाल में 'हिल्सा' मछली बहुत अधिक लोकप्रिय है तथा लोग इनको खाने के लिये दीवाने रहते हैं। ठीक उसी प्रकार से कनाडा के पश्चिमी प्रशांत महासागर तथा अटलांटिक महासागर के क्षेत्रों में सालमन मछली बहुत अधिक लोकप्रिय है। कनाडा के फर्स्ट नेशंस की प्राचीन संस्कृति से वर्तमान समय में इनका सभी के जीवन में बहुत अधिक महत्व है। यह यहां का एक अत्यंत लोकप्रिय, पौष्टिक तथा प्रमुख भोजन है। हम कह सकते हैं 'बिन सालमन सब शून अर्थात् शून्य'। ब्रिट्रिश कोलम्बिया, कनाडा के वैंकूवर शहर तथा आसपास के क्षेत्रों में आप जहाँ भी भ्रमण करेंगे, बाजार में सालमन व अन्य प्रजाति की मछलियाँ बिकती मिलेंगीं। साथ ही साथ चाहे वे टोटम पोल हों, बन्दरगाह हों, पार्क हों या प्रतिष्ठान, यत्र–तत्र–सर्वत्र, सालमन की ताम्र, काष्ठ तथा प्रस्तर की अद्‌भुत व अतिसुंदर कलाकृतियाँ प्रदर्शित मिलेगीं। इन्ही कारणों से मेरी इस विषय में रूचि उत्पन्न हुयी तथा इसका कुछ ज्ञान आप के समक्ष संक्षिप्त में प्रस्तुत है।

सालमन मछली को हिन्दी में 'सामन' भी लिखा जाता है परंतु मैंने इसे स्पेलिंग के अनुसार सालमन लिखना ही पसंद किया है। वास्तव में सालमन 'फिन्ड रे युक्त' मछलियों की प्रजातियों का आम नाम है। ये कुल साल्मोनिडी से सम्बन्धित हैं। ये प्रशांत तथा अटलांटिक महासागर की सहायक नदियों में पायी जाती हैं। इसी कुल की अन्य प्रजातियों की मछलियाँ हैं–ट्राऊट, छार, ग्रेलिंग तथा वाइट फिश। वर्तमान समय में इन्हें कुछ नये भौगोलिक व अप्राकृतिक वातावरणों में भी प्रविशिष्ट कराया गया है जैसे उत्तरी अमेरिका की ग्रेट लेक्स (सुपीरियरए मिशीगन, हयूरान, इरी व ओंटारियो) तथा दक्षिणी अमेरिका के पेटोगोनिया क्षेत्र में। विश्व के अनेक भागों के फार्मों में सालमन का सघन पालन किया जाता है। कहा जाता है कि वर्तमान में दो सालमनों में एक सालमन फार्म उत्पादित होती है।

सालमन परिचय व जीवन–चक्र

अटलांटिक महासागर की सालमन जीनस साल्मो तथा प्रशांत महासागर की सालमन जीनस आंकोरिनस (हुक युक्त) से सम्बन्धित होती है। जो सालमन मछली नदी के ताजे पानी में अंडे देती, जन्म लेती तथा कुछ काल के पश्चात् कई वर्षों (युवावस्था तक) समुद्र के खारे पानी में अपना जीवन व्यतीत करती है और अंततः प्रजनन करने तथा अंडे देने (स्पानिंग करने) अपने मूल स्थान की नदी में विपरीत दिशा में परिभ्रमण करके वापस आती है उसे 'एनोड्रोमस' कहते हैं। इस विषय पर विस्तृत चर्चा थोड़ा बाद में की जायेगी। इसके विपरीत कुछ सालमन प्रजातियाँ अपना संपूर्ण जीवन ताजे जल में ही व्यतीत करती हैं। अटलांटिक सालमन साल्मों सोलर कहलाती है तथा यह 120 सेमी लम्बी तथा 47 किग्रा. वजन की होती है। इसका जीवन काल 13 वर्षों का होता है तथा यह कई बार प्रजनन करती है। प्रशांत महासागर में चिनुक, चुम, कोहो, मासू, पिंक

फर्स्ट नेशंस

कनाडा में आर्कटिक रेखा के दक्षिण में मूल स्थानीय लोग "फर्स्ट नेशंस" कहलाते हैं। सम्पूर्ण कनाडा में लगभग 634 मान्यता प्राप्त फर्स्ट नेशंस सरकार या बैण्ड (दल) हैं। इनमें से लगभग आधे ओंटोरियो तथा बिट्रिश कोलिम्बया प्रांत में पाये जाते है। इनकी संस्कृति दस हजार वर्षो पूर्व की है। चंद प्रमुख फर्स्ट नेशंस हैः हैदा, कोस्ट सैलिश, क्वक्ववाकावाका, गिक्सन, सिमशियन, निस्गा, मेटिस, मस्कियन, टवासेन आदि। इन्होने अपना समाज, भौगोलिक क्षेत्र, संस्कतियां तथा कानून विकसित किया। इनकी तीस से अधिक भाषा व साठ बोलियां हैं। वर्तमान में बिट्रिश कोलिम्बया में दो लाख फर्स्ट नेशंस रहते है।

तथा सोकेयी नामक सालमन प्रजाति की मछलियाँ पायी जाती हैं। इनकी औसतन लम्बाई 50–70 सेमी होती है। यह प्रजातियों के अनुसार होता है। इनका जीवन काल 3–7 वर्षों तथा भार 7–61 किग्रा तक होता है। विभिन्न प्रजातियों की सालमन मछलियों का भार भिन्न होता है। यह सालमन मछलियाँ अपना अधिकांश जैविक भार समुद्र के खारे पानी में प्राप्त करती हैं। यहाँ इन्हें प्रचुर मात्रा में समुद्री जीवों का भोजन प्राप्त होता है। इनकी जीवन की प्रमुख अवस्थायें हैं–संषेचित अण्डा, एलविन, फ्राई, स्माल्ट, एडल्ट, स्पानर तथा पोस्ट स्पानर। वयस्क नर में हुक (काईप) तथा कुछ प्रजाति के नरों में कूबड़ विकसित होता है।

सालमन–एक लोकप्रिय भोजन

सालमन एक तेलीय मछली में वर्गीकृत की गयी है। यह एक अत्यधिक आम, पौष्टिक व लोकप्रिय भोजन है। इस खाद्य में प्रोटीन व ओमेगा–3 फैटी अम्ल बहुलता में होते हैं। फार्म व्युत्पन्न सालमन में पर्यावरणीय दूषण कम होते हैं। इन मछलियों का मांस का रंग नारंगी से लाल होता है जोकि कैरोटिनायड रंगों के कारण होता है। बाजार में सालमन फिलेट, पोच्ड, स्मोक्ड, मेरीनेड, टेरीयाकी, ग्रिल्ड, अंडे (रो) आदि रूप में मिलती हैं। सालमन सिर्फ मनुष्य ही नहीं अपितु कई वन्यजीवों यथा ग्रिजली, काले, पोलर भालुओं, ईगल, हीरोन पक्षी, व्हेल आदि अनेकों पशु व पक्षियों का पेट भरती हैं। ग्रिजली भालू का 50 प्रतिशत शरीर भार सालमन खाने से बनता है। अनेक शिकारी व मछुवारे इनको पकड़ते तथा इनके व्यापार द्वारा अपना जीवन व्यतीत करते हैं।

सालमन रन

कई प्रजातियों के पक्षी तथा जलीय जीव परिभ्रमणीय जीवन व्यतीत करते हैं। परंतु वे प्रजनन अपने मूल व जन्म स्थान पर ही करते हैं। संभवतः ऐसा वे वहाँ उपलब्ध अनुकूल वातावरण तथा सुरक्षा के कारणों से करते हैं। एनोड्रोमस सालमन भी ऐसा ही करती हैं। अटलांटिक तथा प्रशांत महासागर की सालमन मछलियाँ यहाँ की सहायक नदियों की पथरीली शैय्या में अंडे देती हैं जिसे 'स्पानिंग' कहते हैं। यहाँ इनके जीवन की कई अवस्थायें सैक फ्राई (एलविन), फ्राई, पारर, स्मोल्टस, स्कूल्स स्मोल्ट पोस्ट पूर्ण होती हैं। तीन वर्ष की आयु में ये मछलियाँ ब्रेकिस (खारे) जल से समुद्र की ओर कूच करती हैं। समुद्र में खूब भोजन सुलभ होता है। यहाँ ये तीन या अधिक वर्षों में की आयु में युवावस्था को प्राप्त करती हैं। फिर ये प्रजाति के अनुसार सैकड़ों व हजारों की संख्या में अपने जन्म के मूल स्थान/नदी की ओर प्रस्थान करती हैं। इसे 'सालमन रन' कहते हैं। यह दौड़ पतझड़ के मौसम (फाल) में सितम्बर से नवम्बर माह में बहुत लम्बी व हजारों किलोमीटर दूरी की होती है। यह 'रन' नदी की धारा व झरनों के बहाव की विपरीत दिशा में होती है। सालमन कई–कई फिट ऊँचाई कूद कर संघर्ष करती आगे बढ़ती जाती हैं। यदि इनके रास्ते में कोई बाधा या प्राकृतिक आपदा (भूस्खलन) के कारण व्यवधान उत्पन्न होता है तो इनके लिये 'फिश लैडर' या सीढ़ियों तथा वैकल्पिक पथ की व्यवस्था की जाती है।

कहते हैं कि एक समय 90 लाख मछलियाँ सालमन रन में भाग लेती थीं जो कि अब बहुत अधिक घट कर 10 लाख तक रह गयीं हैं। इसका कारण इनके रन के जलमार्ग में व्यवधान, समुद्रों में इनको बहुतायत में पकड़ा जाना, शिकारियों (मछुवारों/वन्य पशु/पक्षी) द्वारा इनका शिकार, रोगों से मृत्यु आदि हैं। शोध द्वारा यह भी ज्ञात हुआ है कई सालमन 3200 किमी यात्रा करती पायी गयीं हैं। इस यात्रा के दौरान इनकी शारीरिक रचना व रंग में परिवर्तन होता है तथा ये प्रजनन करने योग्य बनती हैं। अपने मूल स्थान पर पहुँच कर ये अण्डे देती हैं। प्रशांत तथा अधिकांश अटलांटिक महासागरीय सालमन जीवन में एक ही बार प्रजनन करती हैं। नदी के जल में इन्हें बहुत अधिक भोजन नहीं मिलता है। लम्बी कठिन संघर्ष युक्त यात्रा के कारण ये थकी व दुर्बल होती हैं। संभवतः जीवन का उद्देश्य के पूर्ण होने के कारण ये अपने प्राण त्याग देती हैं। किंतु आटलांटिक महासागर की कुछ सालमन कई बार प्रजनन करती हैं। प्रश्न है कि सालमन अपने मूल स्थान पर हजारों किमी यात्रा के पश्चात् कैसे पहुँच जाती हैं? यह इनके घ्रांड खंड (ऑल्फैटरी लोब) में स्मृति तथा भूचुम्बकीय क्रिया के कारण हैं। सालमन रन में कुछ आवारा सालमन भी साथ आ जाती हैं किंतु अधिकांश सालमन अपने मूल स्थान में पहुँचती हैं। सालमनों की मृत्यु के कारण उनके शव में समुद्र से प्राप्त मूल्यवान प्रचुर पोषक तत्व यथा सल्फर, नाईट्रोजन, कार्बन व फास्फोरस आदि तटीय जीवों यथा ग्रिजली भालू, मांसभक्षी पक्षियों तथा वनों की मिट्टी में स्थानांतरित होता है।

सालमन मछलियों पर बनी चँद कलाकृतियाँ

'बॉस प्रो शाप' नामक माल में सालमनों का प्रदर्शन

वैकुंवर शहर से लगभग 32 किलोमीटर दूर टवासेन नामक स्थान पर 'टवासेन मिल्स' नामक एक बड़ा और आधुनिक माल है। टवासेन मिल्स के समीप स्थित उपर्युक्त उल्लेखित माल का प्रतीक–चिन्ह (लोगो) एक मछली है। यहाँ सैकड़ों सालमन एवं अन्य प्रजाति की मछलियों के मॉडल प्रदर्शित हैं जो जीवंत हैं एवं बिल्कुल असली सालमन लगते हैं (चित्र 1, 2 व 3)। यहाँ पर अन्य बहुत कुछ भी जलीय वन्यजीवों आदि से सम्बन्धित वस्तुयें प्रदर्शित हैं। एक आधी महिला तथा आधी मछली की आदमकद जलपरी या 'मत्स्य कन्या' (मेरमेड) मूर्ति प्रदर्शित है जिसे एक पुरूष ने अपनी बाहों में उठा रखा है (चित्र 4)। यहीं एक बड़े एक्वेरियम में जीवित सालमन मछलियों का प्रदर्शन है जहाँ दर्शकों का तांता लगा रहता है।

कैपीलानो, वैंकुवर के टोटम पोलों में सालमनों का अंकन

यहाँ कई टोटम पोलों में सालमन का प्रदर्शन है। एक टोटम पोल पर एक फर्स्ट नेशंस के हाथों में दो सालमन हैं। उसके सिर पर दोनों ओर से झांकती हुई दो सालमन अंकित हैं। इसी के समीप एक अन्य टोटम पोल पर एक बड़ी सालमन का उत्कृष्ट अंकन हैं। ये कलाकृतियाँ फर्स्ट नेशंस की जीवन में सालमन के उपयोग का महत्व दर्शाती हैं (चित्र 5, 6 व 7)। भवनों, द्वारों, प्रतिष्ठानों, बन्दरगाहों आदि में सालमनों का चित्रण/अंकनः ब्रिटिश कोलम्बिया विश्वविद्यालय, वैंकुवर के एक भवन के काँच में सालमन तथा अन्य मछलियों का सुंदर चित्रण है। यहाँ कई आवास गृहों के प्रवेशद्वार के पत्थर व पुलियों पर कंक्रीट व पत्थरों द्वारा सालमन का सृजन है। इसमें जलधारा तथा नदी के आधार में पेडल स्टोन भी प्रदर्शित हैं। कई कार पार्किंग, रेस्टोरेंट, बन्दरगाह आदि पर विभिन्न आकार की सालमन की कलाकृतियाँ लगी हुयीं हैं। ये कलाकृतिया सालमन के विभिन्न रूप, आकार, रंग, जीवन, आदि से परिचित करवाती हैं (चित्र 8, 9, 10, 11, 12, 13 व 14)।

ट्रांसफारमेशन 2010 कलाकृति में सालमन

ब्रिटिश कोलम्बिया विश्वविद्यालय, वैंकुवर के विश्व प्रसिद्ध एंथ्रापोलोजी संग्रहालय के पास एक फर्स्ट नेशंस कोस्टल सैलिश कलाकार जो बेकर की एक विख्यात कलाकृति प्रदर्शित है जिसका नाम है–'ट्रांसफारमेशन 2010' (चित्र 15)। यहाँ एक छोटे कृत्रिम जलाशय में नीचे की ओर काष्ठ तथा ऊपर स्टेनलेस स्टील की दो जोड़ा सालमन मछलियाँ सृजित हैं। नीचे बनी काष्ठ की चौड़ी नर सालमन प्राचीन फर्स्ट नेशंस की कलाकृति के अनुसार हैं तथा ऊपर बनी स्टील की कुछ पतली व लम्बी सालमन आधुनिक कलाकृतियों के अनुसार हैं। इनमें लाल रंग के अंडों की दो पंक्तियाँ भी हैं जो मादा सालमन को दर्शाती हैं। सालमन की ये आकृतियां लिंगानुसार हैं। जल की ध्वनि तथा प्रकाश में सालमन अत्यधिक सुंदर दिखाई पड़ती हैं। कलाकार जो बेकर के अनुसार सालमन इस क्षेत्र के कोस्टल सैलिश फर्स्ट नेशंस का जीवन, न केवल सालमन पर निर्भर था अपितु जब वैकुंवर में यूरोपीयों की बढ़ती आबादी के कारण हिरण, एल्क आदि यहाँ नहीं सुलभ रहे तब वे उत्तरी वैकुंवर तथा अन्य क्षेत्रों से इनके व्यापार पर निर्भर रहे।

टवासेन मिल्स के हाऊस पोस्ट में सालमन रन का अंकन

जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है कि वैकुंवर शहर से लगभग 32 किलोमीटर दूर टवासेन नामक स्थान पर 'टवासेन मिल्स' नामक एक बड़ा और आधुनिक माल है। इस मॉल में कार्ल मार्गन नामक कोस्ट सैलिश फर्स्ट नेशंस कलाकार द्वारा सृजित एक 'हाऊस पोस्ट' हैं जिसमें फ्रेजर नदी के मुहाने पर सोकेयी प्रजाति की सालमन मछलियों का अत्यंत सुंदर 'सालमन रन' अंकित है (चित्र 16, 17 व 18)। हाऊस पोस्ट में कई सोकेयी मादा मछलियाँ हैं जिनके गर्भ में लाल रंग के अंडे हैं। कुछ भिन्न चित्रित नर मछलियाँ भी हैं। पोल में नदी तथा समुद्र के जल को भिन्न रंगों द्वारा चित्रित किया गया है। पोल के ऊपर चित्रित चंद्रमा ज्वार का प्रतीक है। इसके दूसरी ओर इसी क्षेत्र में रहने वाली ग्रेट ब्लू हेरोन पक्षी का चित्रण है जो सालमन का खूब शिकार करती हैं। इसके ऊपर सूर्य भी चित्रित है।

रिकनसीलियेशन टोटम पोल में सालमन का सृजन

ब्रिटिश कोलिम्बया विश्वविद्यालय, वैकुंवर, कनाडा में सन् 2017 में 800 वर्ष पुरानी सीडर की लकड़ी पर बना 17 मीटर लम्बा उपर्युक्त टोटम पोल स्थापित किया गया (चित्र 19 व 20)। इसका सृजन हैदा मास्टर कार्वर

जैक्स हार्ट ने किया है। यह कनाडा के रेसीडेंशियल स्कूल प्रणाली के पीड़ितों तथा शेष बचे फर्स्ट नेशंस स्कूली बच्चों पर हुए अत्याचारों की दुखद कहानी कहता है। इसमें कई अन्य पशु, पक्षी, प्राणियों व मानव के अतिरिक्त आधार स्थित घर पर एक सालमन मछली अंकित है। ब्रिटिश कोलम्बिया प्रान्त, कनाडा के फर्स्ट नेशंस 'हैदा' लोग सालमन को अत्यंत शुभ मानते हैं। इस टोटम पोल पर लिखा है–सालमन जीवन तथा जीवन–चक्र की प्रतीक हैं।

थंडरबर्ड कलाकृति में सालमन का अंकन

ब्रिटिश कोलम्बिया विश्वविद्यालय, वैंकुवर, कनाडा के सुप्रसिद्ध थंडरबर्ड स्टेडियम के समक्ष एक थंडरबर्ड नामक 5 मीटर लम्बी मानवाकार सुंदर लाल सीडरवुड की स्वागत कलाकृति लगी हुयी है (चित्र 21 व 22)। इसके आधार में तीन सुन्दर सालमन मछलियाँ, तीन अंड़ों सहित सृजित हैं। दो थंडरबर्ड पंजों में पकड़ कर इन्हें उड़ान भर रही हैं। ऊपर किरणों सहित सूर्य की मानव जैसी आकृति बनी है। इस कलाकृति की स्थापना सन् 2009 में अगले वर्ष (2010 में) वैकुंवर होने वाले शीतकालीन ओलिम्पक खेल के उपलक्ष्य में थंडरबर्ड स्टेडियम एरीना में की गयी थी। इसके कलाकार मेटिस फर्स्ट नेशन थामस केनाल हैं। कलाकार के अनुसार थंडरबर्ड (काल्पनिक दैविक पक्षी) फर्स्ट नेशंस हेतु शुभ होती हैं क्योंकि ये अकाल के समय सालमन मछली की वापसी करती हैं।

ईगल द्वारा सालमन शिकार की काष्ठ कलाकृतियाँ

ग्राऊस माऊंटेन, कैपीलानो, वैकुंवर तथा अन्यत्र विशाल तथा भव्य काष्ठ की ईगल की कलाकृतियाँ प्रदर्शित हैं जिनमें ईगल के पंख ऊपर उठे हुए व कुछ फैले हैं। ईगल किसी वृक्ष या स्थान पर बैठा हुआ है और उसके पंजों में सालमन दबी है जिसका वह अभी–अभी शिकार करके लाया है (चित्र 23 व 24)। ये कलाकृतियाँ अत्यंत भव्य तथा प्रभावी हैं। इसी प्रकार थंडरबर्ड स्टेडियम, ब्रिटिश कोलम्बिया विश्वविद्यालय, वैंकुवर, कनाडा में एक छोटी दीवार कलाकृति प्रदर्शित है जिसमें ईगल एक सालमन मछली को पंजों में दबाकर उड़ान भर रही है (चित्र 25)। यहाँ की प्रकृति में जो नियमित होता है वही हैदा व अन्य कलाकारों ने अपनी कलाकृति में सटीक दर्शाया है।

बिल रीड की कलाकृति स्पिरिट ऑफ हैदा ग्वाई में सालमन का अंकन

विख्यात कलाकृति "स्पिरिट ऑफ हैदा ग्वाई" के दो आर्कषक रूप हैं–द जेड कैनो (हरी डोंगी, वैंकुवर) तथा द ब्लैक केनो (काली डोंगी, वाशिंगटन)। (चित्र 26)। ये कनाडा के महान कलाकार बिल रीड की सर्वश्रेष्ठ कलाकृतियां हैं। इन खचाखच भरी डोंगियों में 13 विविध यात्री सवार हैं जिनमें मनुष्य, पशु–पक्षी तथा पौराणिक हैदा संस्कृति में वर्णित प्राणी हैं। इनमें मनुष्य (युवा तथा वृद्ध, पुरूष और स्त्री), पशु (भेडिया, भालू परिवार–ग्रिजली भालू पिता, माता तथा दो शावक), पक्षी (रैवेन व ईगल) एवं पौराणिक पशु (डॉग फिश व माउस स्त्री)। उल्लेखनीय हैं कि इस डोंगी की लम्बाई 6 मी, ऊँचाई 3.9 मी तथा चौडाई 3.5 तथा इसका भार 4,900 किग्रा है। इसमें एक भाले जैसे अस्त्र में शिकार की हुई सालमन मछली प्रदर्शित है।

निष्कर्ष

सालमन मछली प्रशांत तथा अटलांटिक महासागर तथा अन्यत्र तटीय निवासियों के जीवन में विशेष महत्व रखती है। इसका यहाँ के लोगों के भोजन में महत्वपूर्ण स्थान है। सालमन रन इस विशाल भौगोलिक क्षेत्र आनोखी की जीव–विज्ञानी प्राकृतिक वार्षिक घटना है। मानव के अतिरिक्त अनेक स्थानीय वन्यजीव भी सालमन के आहार पर निर्भर करते हैं। ग्रिजली भालू का 50 प्रतिशत शरीर भार सालमन के खाने से बनता है जिससे उसकी शीतकालीन सुषुप्तावस्था बीत जाती है। सालमन कनाडा की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। वर्तमान में सालमन एक्वाकल्चर एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है। फर्स्ट नेशंस कलाकारों ने इन पर अनेकों उत्कृष्ट कलाकृतियाँ बनाकर इन्हें विशेष सम्मान दिया है। सालमन के विषय में एक प्रसिद्ध कथन है–''सालमन स्वयम् में एक गर्वपूर्वक जाति (सालमन पीपुल) हैं। ये प्रत्येक वर्ष तट पर आती हैं तथा अपना पौष्टिक मांस लोगों को खाने के लिये देती हैं। इनके साथ सम्मान का व्यवहार किया जाये''–डोना जो 'सालमन ब्याय'। क्या हम अपनी भारतीय उत्कृष्ट प्रजाति की मछलियों के विषय में भी कुछ ऐसा ही चिंतन व मनन करने का विचार करेंगे।

चित्र 1: लाल रंग की सोकेयी स्पानिंग सालमन, बॉस प्रोशाप, टवासेन, वैकुंवर, कनाडा

चित्र 2: चिनुक सालमन, बॉस प्रोशाप, टवासेन, वैकुंवर, कनाडा

चित्र 3: चिनुक सालमन, बॉस प्रोशाप, टवासेन, वैकुंवर, कनाडा

चित्र 4: एक पुरूष की बाहों में मत्स्य कन्या, बास प्रोशाप, टवासेन, वैकुंर, कनाडा

चित्र 5: टोटम पोलों पर चार सालमनों का अंकन, कैपीलानो, वैकुंवर, कनाडा
चित्र 6: टोटम पोल पर सालमन का अंकन, कैपीलानो, वैकुंवर, कनाडा
चित्र 7: उपर्युक्त सालमन का वृहदाकार चित्र, कैपीलानो, वैकुंवर, कनाडा

चित्र 8: काष्ठ की सालमन मछली कलाकृति, विक्टोरिया, कनाडा

चित्र 9: काष्ठ की सालमन मछली कलाकृति, विक्टोरिया, कनाडा

चित्र 10: प्रस्तर की सालमन कलाकृति, ब्रिटिश कोलम्बिया विश्वविद्यालय (यूबीसी), वैंकुवर, कनाडा

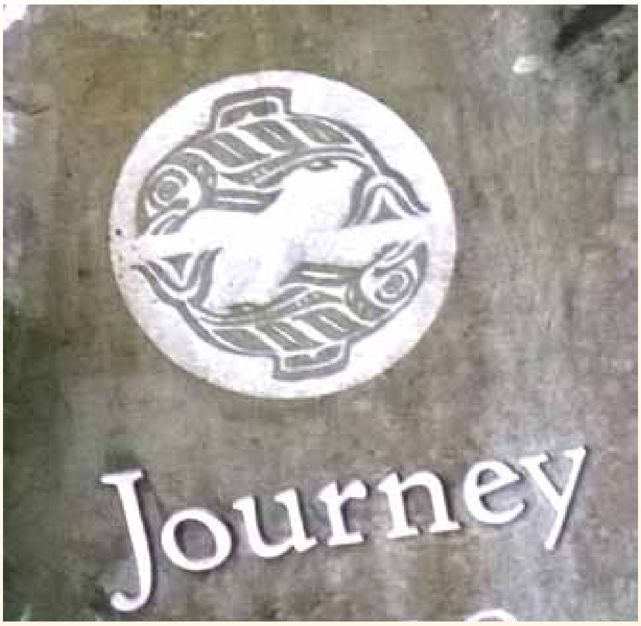

चित्र 11: एक भवन के पत्थर के नाम पटट् पर दो सालमनों का अंकन, यूबीसी, वैंकुवर, कनाडा

चित्र 12: एक कार पार्किंग की दीवार में सालमनों का चित्रण

चित्र 13: एक भवन की कांच की पर चित्रित मछलियाँ, यूबीसी, वैकुंवर, कनाडा

चित्र 14: काष्ठ की सालमन मछली की सुन्दर कलाकृतियाँ। नीचे वाली सालमन स्पानर है तथा पेडल स्टोन में अंडा देने की अवस्था में है, टवासेन, वैकुंवर, कनाडा

चित्र 15: एंथ्रापोलोजी संग्रहालय,यूबीसी, वैकुंवर, कनाडा के समक्ष कलाकृति 'ट्रांसफारमेशन 2010' में दो जोड़ी सालमनों का प्रदर्शन

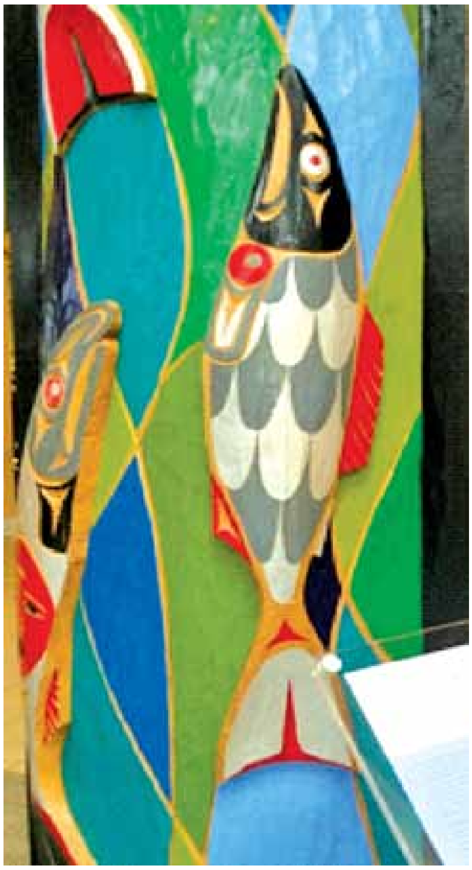

चित्र 16: टवासेन मिल्स, टवासेन, वैकुंवर के हाऊस पोस्ट में 'सोकेयी सालमन रन' का प्रदर्शन
चित्र 17: उर्युक्त पोस्ट में अंड़ाधारी स्पानर सोकेयी सालमन
चित्र 18: उपर्युक्त पोस्ट में काले मुख वाली सोकेयी सालमन

चित्र 19: रिकंसीलियेशन टोटम पोल, यूबीसी, वैकुंवर के आधार में सालमन अंकन
चित्र 20: उपर्युक्त टोटम पोल अंकन में प्रदर्शित सालमन का बड़ा आकार

चित्र 21: थंडरबर्ड कलाकृति, थंडरबड स्टेडियम, यूबीसी में तीन सालमनों तथा उनके तीन अंड़ों का अंकन
चित्र 22: उपर्युक्त कलाकृति में अंड़ों सहित तीन सालमन का अंकन

चित्र 23: ईगल का शिकार सालमन, ग्राऊस मांऊटेन, वैकुंवर, कनाडा
चित्र 24: ईगल का शिकार सालमन, कैपीलानो, वैकुंवर, कनाडा
चित्र 25: ईगल का शिकार सालमन, थंडरबर्ड स्टेडियम, यूबीसी, वैकुंवर, कनाडा

चित्र 26: बिल रीड की कलाकृति 'जेड केनो' में भाले में शिकार की गई सालमन का प्रदर्शन

"सोंधी सुगंध, मीठी सी भाषा
गर्व से कहो हिंदी है मेरी भाषा"

– हजारी प्रसाद द्विवेदी

बायोटोप एक्वेरियम में सजोएँ प्रकृति की सुंदरता

एस. जी. एस. जैदी
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

आजकल एक्वेरियम तथा प्रकृति में गंभीर रुचि रखने वाले हाबिस्ट में बायोटोप एक्वेरियम रखने का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। वास्तव में बायोटोप एक्वेरियम क्या होता है इसे हमें समझने की कोशिश करना चाहिये। बायोटोप एक्वेरियम सेटअप में एक खास तरह के इको सिस्टम को प्रतिबिम्बित करने का प्रयास किया जाता है। उदाहरण स्वरूप यदि एक्वेरियम में "अमेजन रिवर बायोटोप" को प्रदर्शित करना है तो इसमें अमेजन नदी में पाई जाने वाली मछलियों और पौधों को ही रखा जाता है, और एक्वेरियम के अंदर की सजावट, वाटर क्वालिटी के अधिकांश पैरामीटर्स ये सबकुछ इनके मूल प्राकृतिक वातावरण के अनुरूप या समतुल्य बनाए रखने कि कोशिश की जाती है। इसी तरह आप एक्वेरियम में कई तरह के बायोटोप्स को चित्रित कर सकते हैं जैसे लेक मलावी बायोटोप, लेक तांगानिका बायोटोप, कृष्णा रिवर बायोटोप, सुंदरबन बायोटोप, साउथ इंडियन रिवर बायोटोप आदि।

आज एक्वेरियम विज्ञान में बहुत अधिक तरक्की हो चुकी है, विभिन्न आधुनिक तकनीकों और उपकरणों की मदद से अलग अलग किस्म के बायोटोप एक्वेरियम को बनाना और उसे मेंटेन करना आसान हो गया है। बीयोटोप एक्वेरियम को सेट करने से पहले यह सुनिश्चित कीजिये कि किस प्रकार के बायोटॉप को चित्रित करना चाहते हैं, उसी के अनुसार योजनाबद्ध तरीके से मछलियों और पौधों का चुनाव, एक्वेरियम में परिदृश्य को चित्रित करने के लिये आवश्यक सामाग्री जैसे राक्स, पेबेल्स, ड्रिफ्टवुड्स, प्लांट्स, और अन्य आवश्यक सामाग्री को इकत्रित करें। इसी के साथ साथ मछलियों का स्वभाव, उनके लिये आवश्यक वाटर क्वालिटी और वाटर केमेस्ट्री का अधययन कर के इन्हे एक्वेरियम में किस तरह मेंटेन किया जाए इन सभी बातों का आपको अच्छा अनुभव होना चाहिए। इसी तरह इसमें रहने वाली मछलियों, पौधे, तथा अन्य जीव जंतुओं का आपस में किस प्रकार से सामंजस्य स्थापित कर के एक लम्बे समय तक बायोटॉप एक्वेरियम में रह सकें। बायोटॉप एक्वेरियम को सेट करने के कुछ उदाहरण इस प्रकार है।

लेक मलावी बायोटोप एक्वेरियम: लेक मलावी खासतौर से माबूना सिकलीड मछलियों के बायोटोप सेट करने के लिये टैंक में रॉकी एनवायरमेंट बनाना पड़ता है। इसे नेचरल लुक देने के लिये छोटे बड़े राक्स और पेबल्स मिलाकर पर्शव दृश्य बना सकते हैं। प्रजनन के समय अधिकांश माबूना सिकलीड मछलियाँ अपनी एक अलग टेरीटरी बना कर रहना पसंद करती हैं इसलिए पत्थरों के बीच कुछ गुछाऐं बना देते हैं। इसी तरह कुछ छोटे मिट्टी के गमले या मटकी भी रखे जा सकते हैं। इन मछलियों को आरीय 150–180 कार्बोनेट कठोरता वाले पानी की आवश्यकता होती है, जिसे नियत रखने के लिये नितल में कोरल सैंड, सैंडी नितल और लाईम रॉक का इस्तेमाल कर सकते हैं, यह पानी के पीएच और बफर को मेंटेन रखता है।पानी का तापक्रम 24–26° c तक ही रखें, ये मछलियाँ अधिक तापमान सहन नहीं कर पाती हैं। इस प्रकार के एक्वेरियम में सिप्रिक्रोमिस, जेबरा, नेओलेम्प्रोलोगस अल्टोलंप्रोलोगस आदि प्रजातियों की मछलियों को रखा जाता है।

अमेजन रिवर बायोटोप: अमेजन रिवर बायोटोप एक्वेरियम रखने के लिये बहुत सारे सजीव प्लांट्स और बागवुड्स का इस्तेमाल कर के अमेजन नदी के पर्यावरण को दर्शाने का प्रयत्न किया जाता है। इस प्रकार के एक्वेरियम के लिये साफ्ट वाटर का इस्तेमाल किया जाता है इस लिए पानी में कार्बोनेट की साहायता 60–80 पीपीएम तथा थोड़ा अम्लीय वाटर जिसका पीएच 5.5–6.5 से अधिक नहीं रखना चाहिये। ये मछलियाँ अधिक तापमान सहन नहीं कर सकती हैं इसलिए पानी का तापक्रम 23–25°c तक होना चाहिए। अमेजन रिवर बायोटोप में विभिन्न प्रकार की टेट्रा प्रजातियों की मछलियाँ, कोरीडोरस, केट फिशेज, पेंसिलफिश एंजेल फिश आदि रख सकते हैं। इसी प्रकार बहुत से लाइव प्लांट्स मूल रूप से अमेजन भू भाग के होते हैं जैसे इकाइनोडोरस, इलियोचेरिस को लगा सकते हैं इसके अतिरिक्त केबोम्बा और मिरियोफिलम,

वेलीस्नेरिया भी अच्छे विकल्प हैं।

बायोटोप एक्वेरियम को सेट करने के बहुत से अभिप्राय हो सकते हैं।जैसे प्रकृति में विभिन्न फ्लोरा और फोना आपस में किस तरह से आपस में सामंजस्य बना कर रहते, इसके सजीव चित्रण को समझने की लिये बायोटोप एक्वेरियम से अच्छा उदाहरण और क्या हो सकता है। हमारे देश में ही न जाने कितनी विविधता लिये हुए अनेकों जलीय इको सिस्टम हैं। आज दिन पर दिन नदियों और जलाशयों के प्राकृतिक पर्यावरण का विनाश होता जा रहा है और इसके पहले कि ये सब विलुप्त हो जायें हमें इसका संरक्षण करना होगा। इसी संदर्भ में मछलियों को उनके मूल प्राकर्तिक नैसर्गिक वातावरण के अनुरूप बायोटोप एक्वेरियम में प्रतिबिम्बित कर के प्रकृति को समझने और इसके अध्यन करने का इससे अच्छा तरीका और कौन सा हो सकता है।

लेक मलावी बायोटोप टैंक

कंबोडियन रिवर बायोटोप

अमेजन रिवर बायोटोप टैंक

जागेश्वर मंदिर समूह एवं संग्रहालय

मनोज कुमार जोशी
भारतीय पुरातत्व सवेक्षण, पुरातात्विक संग्रहालय, जागेश्वर

उत्तराखंड राज्य के जनपद अल्मोड़ा मे स्थित जागेश्वर से जिला मुख्यालय से 35 किमी. की दूरी पर अल्मोड़ा–पिथौरागढ़ मार्ग मे अवस्थित है। जागेश्वर का क्षेत्र चारों ओर पहाड़ियो से एवं देवदार के घने वनों से आच्छदित है। यह स्थान समुद्र सतह से 1870 मी0 की ऊंचाई पर स्थित है।

यह स्थान मानसरोवर यात्रा के प्राचीन मार्ग पर स्थित है। प्राचीन ऐततहासिक ग्रंथ स्कंदपुराण के मानसखंड में जागेश्वर के बारे में वर्णन है कि दक्षप्रजापती के यज्ञ के विध्वंश करने के उपरांत सती की भस्म अपने शरीर में लगाकर भगवान शिव ने यहाँ पर तपस्या की थी और जागेश्वर से ही लिंग पूजन का आरंभ हुआ था।

जागेश्वर के बारे में अनेक देवी देवताओं के मंदिर है ओर यह स्थान उनका प्रिय निवास स्थल है। कुमाऊँनी भाषा में इस संबंध में एक कहावत प्रचलित है ।

"देवता देखण जागेश्वर, गंगा नहाणी बागेश्वर"

देवताओं के दर्शन करने जागेश्वर जाओ अगर गंगा स्नान करना है तो बागेश्वर जाएँ !

जागेश्वर मंदिर समूह से 2 किमी. पहले जागेश्वर मे प्रवेश करते ही सर्वप्रथम सड़क के दायीं ओर दंडेश्वर मंदिर के दर्शन होते है। भगवान शिव को समर्पित उत्तराखंड के सबसे विशाल मंदिरों में से एक

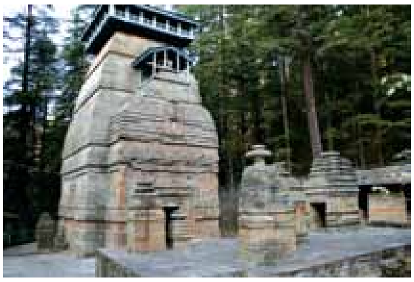

है। इस मंदिर का निर्माण 9–10 शताब्दी ई0 मे कत्युरी राजाओं द्वारा किया गया था।

दंडेश्वर मंदिर

जागेश्वर पहुंचने के बाद जटा गंगा नदी के बाएँ तट पर स्थित जागेश्वर मंदिर समूह के दर्शन होते है। जटागंगा नदी के तट पर स्थित जागेश्वर मंदिर समूह परिसर मे 125 प्राचीन छोटे–बड़े मंदिरो का समूह है। जिनमे मुख्यता जागेश्वर (जागनाथ), मृत्युंजय मंदिर, केदार मंदिर, पुष्टिदेवी मंदिर, नवदुर्गा मंदिर, सूर्य मंदिर, नवग्रह मंदिर, लकुलीश मंदिर, प्रमुख है!

ऐसा माना जाता है कि कत्युरी वंश के शासकों द्वारा 7वीं शताब्दी से 11 वीं शताब्दी ई0 इनका निर्माण किया गया था। बाद मे चंद वंश के शासकों द्वारा 12 वीं से 16 वीं शताब्दी ई0 मे भी यहाँ पर मंदिरों का निर्माण तथा जीर्णोधार किया गया! चन्द्र वंश के शासकों द्वारा समय समय पर मंदिर के व्यवस्था

को सुचारु रूप से चलाने हेतु 364 गावों की जागीर मंदिर को दान किया गया था।

जागेश्वर मंदिर समूह

इसके अतिरिक्त जटा गंगा के दायें तट पर एक ऊंची पहाड़ी पर कुबेर मंदिर स्थित है, चंडिका देवी तथा शिव मंदिर, कुबेर मंदिर से थोड़ा निचले तले पर स्थित है !

कुबेर मंदिर समूह

जागेश्वर मंदिर समूह, दंडेश्वर एवं कुबेर मंदिर समूह को भारतीय पुरातत्व सवेक्षण द्वारा प्राचीन स्मारक स्थल एवं पुरावशेष अधिनियम 1958 द्वारा राष्ट्रीय महत्व के स्मारक घोषित किए गए है तथा इन मंदिरो का संरक्षण भारतीय पुरातत्व सवेक्षण देहरादून मण्डल के द्वारा किया जाता है !

जागेश्वर के धार्मिक एवं ऐतिहासिक महत्व के मंदिरों के अतिररक्त यहाँ पर एक पुरातात्विक संग्रहालय भी देखने योग्य है। भारतीय पुरातत्व सवेक्षण द्वारा सन 1995 में एक मूर्ति कक्ष की स्थापना की गयी जिसमे दँडेश्वर, कुबेर एवं जागेश्वर मंदिर समूह से प्राप्त मूर्तियों (खंडित) को

प्रदर्शित किया गया ! उक्त मृतिकक्ष को 20 ससतंबर 2002 में संग्रहालय के रूप मे परिवर्तित कर दिया गया, जिसका उदघाटन तत्कालीन पर्यटन एवं संस्कृति मंत्री श्री जगमोहन द्वारा किया गया। यह पुरातात्विक संग्रहालय, जागेश्वर मंदिर समूह से 100 मी० पहले सड़क के बाईं ओर स्थित है। इस संग्रहालय के प्रारम्भ मे एक कक्ष मे मूर्तियाँ प्रदर्शित की गयी थी। परंतु बाद मे संग्रहालय का विस्तार कर तीन और कक्ष निर्मित कर कुल 64 मूर्तियों को दर्शको के दर्शनार्थ रखा गया।

पुरातात्विक संग्रहालय, जागेश्वर

गैलेरी संख्या–1 (वीथिका स०1)–इस गैलेरी मे 33 प्रस्तर निर्मित प्रतिमाएँ प्रदसशगत है। जिन्हे दो शोकेस एवं इनमे सूर्य, लक्ष्मी, नारायण, पार्वती, महिषासुर मर्दिनी, कार्तिकेय, चतुर्मुखी शिवलिंग, नवग्रहपट्ट, त्रिदेव पट्ट, (ब्रम्हा, विष्णु, महेश), उमा शंकर आदि प्रदर्शित है जिसमे सूर्य सात घोड़ो पर आरूढ़ प्रतिमा विशेष दर्शनीय है।

सूर्य रथ पर आरूढ़

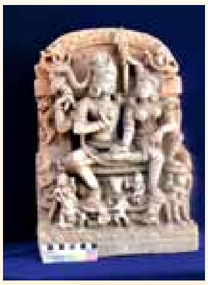

ऊमा महेश्वर

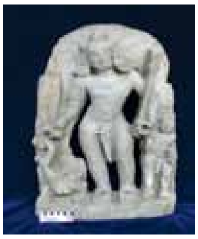

महिषासुरमर्दिनी

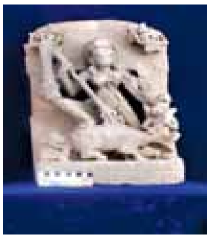

कार्तिकेय अपने वाहन मयूर के साथ

नवगृह पट्ट

गैलेरी संख्या–2 (वीथिका स०2)—– इस वीथिका मे कुल 11 मूर्तियाँ प्रदर्शित है जिनमे देवी चामुंडा, वैष्णवी, त्रिनेत्र फरसाधारी शिव, सूर्य, गणेश की प्रतिमाए प्रमुख है, इनमे नृत्यरत गणेश विशेष दर्शनीय है।

देवी चामुंडा

त्रिनेत्र फरसाधारी शिव

नृत्यरत गणेश

गैलेरी संख्या 3– इस वीथिका मे भी 11 मूर्तिया प्रदर्शित की गयी है, जिनमे उमामहेश्वर, शिव–पार्वती, विष्णु, सूर्य द्वारस्तम्भ पट्ट आदि प्रमुख है। इनमे विषपयहरिणी शिव (हलाहल ग्रहण करते शिव) की मूर्ति उल्लेखनीय है।

विषपयहरिणी शिव

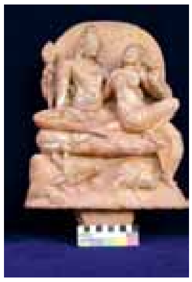

उमामहेश्वर

सूर्य द्वारस्तम्भ पट्ट

विष्णु

केन्द्रीय कक्ष

केन्द्रीय कक्ष में 9 मूर्तियाँ जिनमे मंदिर से प्राप्त तीन शिलालेख प्रर्शित है, इस कक्ष में उमामहेश्वर, पार्वती, लकुलीश, पौण राजा की अष्ट धातु से निर्मित प्रतिमा प्रदर्शित किए गए है।

जिनमे पौण राजा की आदमकद प्रतिमा एवं लकुलीश विशेष उल्लेखनीय है। संग्रहालय स्थापित होने से पूर्व में सभी प्रतिमाएँ जागेश्वर मंदिर समूह मे नवदुर्गा मंदिर मे रखी गयी थी परंतु साठ के दशक में लकुलीश की प्रतिमा मंदिर प्रागंण से चोरी होने के बाद मेरोपॉलिटन संग्रहालय अमेरिका पहुँच गयी थी,

केन्द्रीय कक्ष

लकुलीश

बाद मे भारत सरकार के प्रयासों द्वारा सन 1999 में लकुलीश की प्रततमा को पुनः वापस लाया गया और सन 2014 में यह विश्व प्रसिद्ध प्रतिमा को जागेश्वर वापस लाकर संग्रहालय में प्रदर्शित किया गया।

जागेश्वर संग्रहालय मे प्रवेश निःशुल्क है। संग्रहालय सुबह 9.00 बजे से साय 5.00 बजे तक खुला रहता है तथा शुक्रवार को संग्रहालय में अवकाश रहता है। जागेश्वर आने के लिए देश की राजधानी दिल्ली से ट्रेन/बस द्वारा हल्द्वानी पहुँचकर हल्द्वानी से बस द्वारा या टैक्सी द्वारा पहुँचा जा सकता है। दिल्ली से जागेश्वर की सड़क मार्ग की दूरी 430 कि.मी तथा प्रदेश की राजधानी देहरादून से 450 कि.मी है। यहाँ पर पर्यटकों के ठहरने के सलए सुविधाजनक होटल तथा रैन बसेरे भी उपलब्ध है।

शीतकाल मे यहाँ (नवम्बर से फरवरी तक) का तापमान काफी नीचे चला जाता है तथा दिसम्बर–जनवरी मे हिमपात भी होता है, इसलिए शीतकाल में यहाँ आने पर गर्म कपड़े लाना न भूले।

पौण राजा (अष्टधातु से निर्मित)

मेहनत इतनी खामोशी से करो

कि कामयाबी शोर मचा दे

–स्वामी विवेकानन्द

"मेरा लक्ष्य"

हर्षिता बेलवाल, हल्द्वानी

मेरा लक्ष्य ही मेरी जान है
मुट्ठी में भरना यह जहान है।
पाना है आसमान निश्चय किया है
बहती हवाओं ने पता मंजिल का दिया है।
मेने मेहनत को ही हर क्षण दिया है,
कण–कण पसीने की चमक से
प्रमाणित किया है।
कि मेरा लक्ष्य ही.........मुटठी में..............

किस्मत की मैं मोहताज नहीं
खुद पे मैं शासन करती हूँ
लकीरों में छुपा कोई ताज नहीं
माथे में जब कोई बल पड़े ....
उस पर यकीन में रखती हूँ

सच है कि लक्ष्य आसान नहीं
लगन का सफलता से सौदा किया है
मैने आज यह संकल्प लिया है........
कि मेरा लक्ष्य........मुटठी में..............

कोई साथ दे या छोड़ दे चाहे रूख हवा का मोड़ दे
मन में जो आशा का दिया है नर–ए–ख्वाब से रोशन
किया है। मैने संग दुआ के यह प्रण लिया है...... ।
मेरा लक्ष्य ....मुट्ठी में.............

"हर जर्रा सांस लेता है हर जर्रा कुछ कहता है"

हर्षिता बेलवाल, हल्द्वानी

हर जर्रा सांस लेता है, हर जर्रा कुछ कहता है......

ख्वाबों की माला आँखों में पिरोकर तो देखो,
हर ख्वाहिश को ढाँचे में डालकर तो देखो
रूठती हुई संवेदनाओं को मनाकर तो देखो
मन में लहलहाती भावनाओं में बहकर तो देखो,
देखो.........हर जर्रा ....हर जर्रा..........

नयनों में बांधे आँसुओं को खोलकर तो देखों
होठों में दबी खुशी को बयां करके तो देखो
बागों में उड़ती रंगीन तितलियों को छुकर तो देखों ,
बसंत में खिले फूलों की महक लेकर तो देखो,
देखो.........हर जर्रा ....हर जर्रा...........

प्रेम की गलियों से, आती फिजाओं में खोकर तो देखो
दिल में उभरती रंगीनियों में जीकर तो देखो,
सतरंगी, उन इंद्रधनुष के रंगो को जीवन में घोलकर
तो देखो.........हर जर्रा.........हर जर्रा...........

कबूतर के पंखों को गालों से सहलाकर तो देखो
पंख लगाकर दूर आसमान में बेहिचक उड़कर तो देखो
हर स्वर में संगीत है, सुनकर तो देखो,
पत्थर भी हीरा है, तराशकर तो देखो,
देखो.........हर जर्रा ....हर जर्रा...........

क्या तुम्हारा मन नही करता

सुभाष चंदर, गजियाबाद, उत्तर प्रदेश

क्या तुम्हारा मन नही करता
कि चलें
किसी ऐसे जहां में
जहां जिंदगी भागती ना हो
जहां भीड़ आपके ठहराव पर
हंसती ना हो।
जहां लोग अपनेपन का मतलब
सच में जानते हों
जहां लोग रिश्तो को वास्तव में पहचानते हो।
चलो वहां
जहां लोग प्यार को भविष्य की तराजू पर
ना तोलें
जो मन में हो
वहीं जुबां से बोलें।
चलो वहां
जहां लोगो के लिए खेल ना हो
मुहब्बत–दोस्ती
दोस्ती जहां दो पल का साथ ना हो
और मुहब्बत का मतलब ना हो
चंद लम्हों की मुलाकात
किसी झील के किनारे
किसी पेड़ की छाँव में
या किसी बिस्तर में।
चलो वहां, जहां स्पर्शो से
वाकई अहसास जिए जाते हों
साथी के दर्द जहां खुद पीये जाते हों
हाँ, दोस्त चलो किसी ऐसी जगह
अगर वो जगह दुनिया में कही हो।

कृषि की शान : किसान

कृष्णा काला
भा.कृ.अनु.परि.–राष्ट्रीय शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल

प्रकृति ने रचि है किसान की काया
फूलों की पंखुड़ी सा हृदय बनाया,
मन के भाव निर्मल जल जैसे,
सोचे जगत का भला हो कैसे?

एक जोड़ी बैलों के संग में
पोटली बीजों की उस ने बनायी,
बढ़ता रहा वह राह पर अपनी,
जब तक उसकी मंजिल ना आई।

जैसे पहुॅचा मेड़ पर अपनी
सर–सरी निगाहें खेत में डाली,
स्थिर अडिग वह कर्म पर अपने,
बरसे वर्षा धूप की लाली।

होंसले गगन से झुलसी काया
आधा तन बस वस्त्र से छाया,
सर पर बांधकर गमछा अपने,
हल से खेत को जोतता पाया।

फिर दूर क्षितिज तक फैली धरा में
अन्न का एक–एक दाना बोया,
लहरायेगी फसल सोचकर,
बारिश बनकर अम्बर भी रोया।

कदम–कदम वह हल संग चलता
भोर से दिन जो सांझ को ढलता,
बो कर बीज निश्चिंत वह आया,
साझ की लालिमा से जब अम्बर छाया।

किसान ने धरा से अन्न उगाया
जल की रानी का महल बनाया,
समझे धरा को माता अपनी,
अनंत गगन को पिता की छाया।

अन्न का दाता राष्ट्र बनाता
उसकी मेहनत से देश है खाता,
विज्ञान के ज्ञान को धरा में दिखायें,
जीव–जगत को खुशहाल बनाये।

हास्य कहानी

किसना दुबे ने कुश्ती लड़ी

सुभाष चंदर, गजियाबाद, उत्तर प्रदेश

बात लगभग चालीस बरस पुरानी है। यानी उस जमाने की, जब इश्क आज की तरह सर्वसुलभ किस्म का मामला नहीं था। ऐसे में आशिकी करना, वह भी गांव–कस्बे के माहौल में, सच्ची बड़ा मुश्किल और बहादुरी का काम था पर कृष्ण कुमार द्विवेदी उर्फ किसना दुबे काफी बहादुर किस्म के आशिक थे। वह घोर प्रेम विरोधी माहौल में भी इश्क की पतंग उड़ाने में जुटे थे, पर अफसोस कि ज्यादा सफल नहीं हो पाए थे। जबकि उनका जुगराफिया काफी शानदार था। पांच फुट चार इंच का कद, पैंतालीस किलो वजन, अट्ठाइस–तीस इंची चौड़ी छाती और आंखों पर मोटा चश्मा। पर्सनैलिटी सच्ची में आशिकी के लायक थी, पर फिर भी कुछ जम नहीं रहा था। उन्होंने कॉलेज और कॉलेज के बाहर इश्क की संभावनाओं पर गंभीरता से मनन किया। क्लास की लड़कियों में उन्हें कुछ रोशनी को किरणें नजर आईं। काफी दिन तक शोध करने के बाद इस नतीजे पर पहुंचे कि कुमारी चमेली देवी सुपुत्री राम बाबू मिश्रा उनके लिए अधिक उपयुक्त रहेंगी। इसके पीछे कुमारी चमेली देवी के लड़की होने के अलावा एक कारण ये भी था कि उनके पिता रामबाबू पी.डब्ल्यू.डी. में इंजीनियर थे। दहेज का मामला सही से सुलझ सकता था। दूसरे कुमारी चमेली देवी उनकी तरह इश्कियां फिल्मों की शौकीन थीं। तीसरे ये कि वह बात–बेबात मुस्कराती रहती थीं जो कि इस बात का प्रमाण था कि ये चिड़िया दाना चुगने को तैयार बैठी है... बशर्ते कि कोई दाना तमीज से डाले। किसना दुबे तो कमीज तक तमीज से पहनते थे, उनमें भला इसकी क्या कमी थी। सो, उन्होंने क्लास रूम में कन्या को कनखियों से निहारना शुरू किया। बदले में चमेली ने देखा–देखी का मामला आगे बढ़ाया। बात आगे बढ़ते–बढ़ते चिट्ठी–पत्री तक पहुंची। एक दिन मिलने का जुगाड भी बन गया। जगह तय हुई। जग्गे का भैंसों का तबेला।

खैर... किसना दुबे तबेले में पहुंचे। कुमारी चमेली वहां पहले से ही विराजमान थी। अब वहां किसना थे, चमेली थीं और कुछ अदद भैंसे थीं। किसना ने इधर–उधर देखा, फिर चमेली के सामने जाकर खड़े हो गए। संवाद शुरू हो गए–

''क्यों जी, तुमने मुझे यहां क्यों बुलाया... कोई देखे तो लोग बात बनाएंगे... ।''

''वो. वो बात ऐसी है कि मैं. मैं... तुमसे प्यार करता हूं। क्या तुम भी मुझसे ?

''हाय दैया. ये क्या कह दिया.। कोई सुनेगा तो क्या कहेगा.. हमारे बाबूजी सुनेंगे तो मार डालेंगे... ना बाबा ना. .. मैं तो चली.।''

''अरे, बैठो तो... सुनो... मुझे तुम बहुत अच्छी लगती हो... मैं तुमसे शादी करना चाहता हूं।''

''क्या–क्या कहा... शादी और तुमसे... सुनो जी... शादी तो मैं किसी खिलाड़ी से करूंगी... मेरे बाबू जी की इच्छा तो मेरी शादी किसी पहलवान से करने की है... बोलो बनोगे पहलवान... बोलो

''हां हां बनूंगा। मजनूं लैला के लिए पागल बन गया था, क्या मैं पहलवान नहीं बन सकता।''

''तो फिर ठीक है, तय रहा... तुम इस बार कॉलेज की कुश्ती चौंपियनशिप में हिस्सा लोगे... मेडल लाओगे... बोलो।''

''ऐं. कॉलेज की कुश्ती. मतलब तेजप्रताप सिंह से कुश्ती... बाप रे. वो सांड तो मुझे मार डालेगा... ना बाबा... नाऽऽ।''

''बस निकल गई आशिकी, ठीक है, मैं पिताजी से कह दूंगी कि मेरी शादी तेजप्रताप से ही कर दें। पढ़ा–लिखा है, कुश्ती चौंपियन है...।''

''बस...बस.... मैं कुश्ती लडूंगा. बस. तुम अपना बादा याद रखना... अगर मैंने मेडल जीता तो तुम मुझसे शादी करोगी...वादा पक्का?''

''हुम्म... पक्का, पर पहले मैडल जीतो. अच्छा अब चलती हूं... राम–राम।''

चमेली देवी तो प्रस्थान कर गई, पर किसना दुबे बहुत देर तक तबेले में बैठकर सोच की चिड़िया उड़ाते रहे। हाल निकाल आया। अगले दिन उन्होंने कुश्ती कंपीटीशन के लिए अपना नाम लिखा दिया। टीचर ने पहले उनके सींकिया बदन को देखा, मुस्कराए और फिर नाम लिख लिया।

पूरे कॉलेज में यह बात फैल गई कि किसना दुबे कुश्ती चौंपियनशिप में भाग ले रहे हैं। वह तेजप्रताप से कुश्ती लड़ेंगे। तेजप्रताप पिछले तीन बरस से कुश्ती चौंपियन थे। पहले दो बरस में उन्होंने चौदह पहलवानों को हराया था। इनमें से सभी को हारने के बाद हड्डियों के डॉक्टर से इलाज कराना पड़ा था। इसी कारण पिछले साल तेजप्रताप के खिलाफ कुश्ती में कोई अपना नाम नहीं देता था। किसना के यार–दोस्तों ने उन्हें समझाया। प्रमोद चौधरी किसना के पास आए। दो बीड़ियां सुलगाईं, एक किसना के हवाले की, दूसरी से धुआं उड़ाया और फिर उनके कान में फुसफुसाए, ''भैया, आत्महत्या करने के और भी कई तरीके हैं। तेजप्रताप बेचारे को क्यों फंसाते हो।''

पर किसना को न मानना था, न माने। आखिर इश्क की आन–बान–शान का सवाल था, वह मान कैसे जाते ?

खैर कुश्ती चौंपियनशिप का दिन आ गया। भीड़ जुटनी शुरू हो गई।

कॉलेज ग्राउंड में ठीक तीन बजे कुश्ती कंपटीशन होना था। अखाड़ा खुद चुका था। कॉलेज प्रबंधन ने सारे प्रबंध समझदारी से किए थे। एक एंबुलेंस मंगा ली थी। अखाड़े के बाहर भी एक स्ट्रेचर रख दिया था।

खैर ..पहला राउंड शुरू हुआ।

दर्शकों का उत्तेजना के मारे बुरा हाल था। उन्हें अब लगा, तब लगा कि गए किसना। अब टूटे, अब फूटे। तेजप्रताप की इच्छा भी यही थी, पर किसना उनके हाथ आएं तब न। वो आगे जाते, किसना पीछे। तेजप्रताप ने उन्हें धर–पकड़ने की लाख कोशिश की, पर वह किसना को छू भी नहीं पाए। हर बार वह किसना पर झपट्टा मारते, पर किसना दायें–बायें हो जाते। तेजप्रताप बेबसी से उन्हें देखते रह जाते। एक–दो बार किसना तो उनकी टांगों के बीच से भी निकल गए। इसी चक्कर में पहला राउंड खत्म हो गया।

भीड़ के साथ किसना ने भी ठंडी सांस ली। किसना ने पसीना पोंछा। एक नजर कुमारी चमेली को देखा। लोटा भर पानी पिया, फिर खड़े हो गए।

दूसरे राउंड की सीटी बजी। तेजप्रताप गुस्से में थे ही। पहली बार ऐसा हुआ कि कोई पहलवान उनसे एक राउंड तक बचा रह गया था। उन्होंने सोच लिया कि इस बार वे इस भुनगे को पीसकर रख देंगे। वह दांत कटकटाकर की तरफ झपटे ही थे कि तभी किसना ने हाथ उठा दिए। चिल्लाकर बोले, ''भाइयो, मैं अपनी हार स्वीकार करता हूं। तेजप्रताप जीते, मैं हारा।''

उनकी घोषणा सुनकर दर्शकगण भौंचक्के रह गए। भला ये क्या हुआ? ये कैसी कुश्ती! वे तो सोच रहे थे कि आज कुछ खूनी खेल देखने को मिलेगा। उन्हें किसना की मौत पर मातम करने का मौका मिलेगा, पर यहां तो कहानी ही कुछ और थी।

इधर रेफरी ने कुश्ती खत्म करने की घोषणा कर दी। तेजप्रताप विजेता बने और किसना दुबे उप विजेता। कुश्ती का स्वर्णपदक तेज प्रताप के हिस्से में आया तो किसना दुबे के हिस्से में चांदी का पदक। अब वह निर्विवाद रूप से कॉलेज के दूसरे नंबर के पहलवान थे। जब वह पदक लेने मंच पर गए, तो उनके लिए सबसे ज्यादा तालियां बजी थीं। ताली बजाने वालों में कुमारी चमेली सबसे आगे थीं। आखिर उनका प्रेमी कॉलेज का नंबर दो पहलवान जो बन गया था।

पहलवान किसना दुबे कुश्ती में हारकर भी इश्क के इतिहास में सौ परसेंट नंबर लेकर पास हो गए थे।

मंजिल चाहे कितनी भी ऊँची क्यों न हो,

रास्ता हमेशा पैरों के नीचे होता है

–अज्ञात

झरना ताल और हैलीकॉप्टर से दृश्य

हेमन्त बिष्ट
खुर्पाताल, जिला–नैनीताल, उत्तराखण्ड

तेज कदमों से अपने गाँव खुर्पाताल की ओर बढ़ रहा था कि एक टैक्सी चाालक और स्टूडैण्ट्स नुमा पर्यटकों की बहस सुनकर कदम रूक गए। स्टूडैण्ट्स लड़कियाँ कह रही थी, ''इतना बेवकूफ भी मत समझो हमको, हम बायो साइन्सेज की स्टुडैण्ट्स हैं। स्टडीज के सम्बन्ध में टूर पर आई है। बायो सुनते ही मैं रूक ही गया। मुझे देख कहने लगी, देखिए! कह रहा है 'झरना ताल और हेलीकॉप्टर से दृश्य मात्र तीन सौ रूपये में।'' मैं टैक्सी चालक की प्रोफेसनल एप्रोच देख कर रह गया। मैने कहा ''हैलीकॉप्टर ना सही पर घुमाने तो ले ही जा रहा है आप लोगो को, फिर तीन सौ रूपया ज्यादा तो नही।'' सोचते हुए वे बोली ''चलना तो चाहते है पर अकेले........। आप किस दिशा को जा रहे है?'' उसी दिशा को, उसी रूट पर ''मेरा उत्तर था''। यदि आपको आपत्ति न हो तो आप भी चलिए हमारे साथ, जहाँ आपका घर हो ड्रॉप हो जाइए।'' मैं उनका आग्रह को ठुकरा न सका, टैक्सी चल पड़ी।

हाईकोर्ट, केव गार्डन होते हुए हम पहुँचे बारा पत्थर। बोर्ड पढ़कर लड़कियां पत्थर गिनने लगी ''हजारों पत्थर है यहाँ पर और नाम बारा पत्थर?'' मैने कहा, बड़े पत्थर होने के कारण यहाँ का नाम रहा होगा बड़ा पत्थर, अंग्रेज ड तो उच्चारित कर नही पाते, इसलिए नाम हो बरा पत्थर और स्पेलिंग बी ए आर ए आर ए अर्थात बारा पत्थर। अभी तक ये छात्राएं अंग्रजी में बतिया रही थी कि कैसे लल्लू बनाकर ले आए हम इसको, लेकिन अब मेरी तर्क संगत बातें सुनकर आपस में अंग्रेजी में कहने लगी, इतना लल्लू भी नहीं लगता।'' मैं न समझ पाने का अभिनय करता हुआ बैठा रहा।

आगे बढ़ते हुए टैक्सी एक मोड़ पर रूकी। 'सुसाइड प्वाइंट' यह कह कर टैक्सी ड्राइवर आगे पहाड़ की ओर बढ़ा, हम भी बढ़े, हजार फीट नीचे सुन्दर गाँव–खुर्पाताल। तालाब, खेत, पर्वत–मैदान, जंगल............ मीलों तक का दृश्य एक नजर में... ....। पर्वत श्रंखलाएं दूर–दूर तक फैलती हुई। कौतुहल में एक छात्रा बोली। 'ब्यूटिफुल! जैसे हैलीकौप्टर से देख रहे हों यह सब'' दूसरी बोली। ''चलो हैलीकौप्टर वाली बात तो सच निकली,'' तीसरी बोली'' लेकिन सुसाइड प्वाइण्ट की बजाय 'बर्ड आई व्यू प्वाइण्ट' रखे इस जगह का नाम।

टैक्सी आगे बढ़ रही थी, नारायण नगर के पास हिमालयन बोटेनिकल गार्डन, जहाँ फर्न की सैकडों प्रजातियाँ संग्रहित हैं, विशाल लाइब्रेरी है। आर्किड आदि पौधे हैं। इस स्थान को लौटते समय दिखाने का वादा कर चालक टैक्सी को आगे बढा ले गया। चौड़े खेतों वाला गाँव आ चुका है। यहाँ का नाम?''– ''चोरखेत'' मैने कहा– ''भूल गई अंग्रेजों के उच्चारण वाली बात?'' एक छात्रा बोली, हाँ पहले यहाँ का नाम रहा होगा 'चौड़ खेत' और अंग्रेज बोलते होंगे– चौर खेत, यही ना।' सभी हँसने लगी। अब लड़कियाँ सभी बातें अंग्रेजों के उच्चारण के साथ बोल–बोल कर ठिठोली करने लगी। देखते ही देखते हम पहुँच गए सड़ियाताल। बिना पूछे ही मैंने बताना शुरू कर दिया कि अतीत में प्राकृतिक स्त्रोतों से पोषित यह तालाब मलबे से भर गई थी लेकिन ग्यारहवें वित्त आयोग के अन्तर्गत 156 मी. x 55 मी. x 2.30 मी. आकार की इस झील का पुनर्जीवीकरण किया जा चुका है।

एक मोड़ और पीछे छूटा कि सड़ियाताल जल प्रपात सफेद–दूधिया जल धाराओं से सभी का स्वागत कर रहा था। कई चित्र खींचने के बाद जब छात्राएं नीचे सड़क पर आई तो अपनी डायरी में यहां पर दिखी चिड़िया का नाम नोट करने लगी। मैंने कहा, ''यहाँ की कुछ कॉमन बर्डस का का नाम लिखवा दू?'' लड़किया उत्सुकता वश मुझे देखने लगी। यहाँ की कुछ बर्ड्स है– हिमालयन बुलबुल, ब्लू व्हिसलिंग थ्रस, रैडवेण्टेड बुलबुल, व्हाइट आई जंगल वाब्लैर, ग्रीन बैक टिट, मैगपाई, स्ट्रीग लाफिंग थ्रस, व्हाइट कैप्ड रेडस्टार्ट, वैजटेल, प्लम्बस रैंड स्टार्ट, कलीज फीजैण्ट, रैड जंगल फाउल, पाइड किंग फिशर.....''क्या चेर फीजेण्ट भी?'' हाँ इन चट्टानों में कभी चेर फीजेण्ट बहुत बड़ी संख्या में मिलते थे आज संकटग्रस्त प्रजाति है, विलुप्ति की कगार पर।

हम अब मनसा देवी मंदिर पर पहुँच चुके है सामने खुर्पाताल, रंग बदला हुआ। ''तालाब का रंग बदला हुआ?'' छात्रा ने पूछा। ''हां यह तालाब कई कई रंग बदलती है।'' कारण? इस तालाब में शैवालों की चवालीस प्रजातियाँ है क्लोरोफाइसी की बीस, बेसिलेरियोफाइसी की 19, डाइनोफाइसी की चार और साइनोफाइसी की एक प्रजाति। जब इन शैवालों के बीजाणु बनते हैं तो तालाब का रंग बदलता है।'' विस्मित होकर वो मुझे देखने लगी। छात्राएं बात करने लगी जुप्लैक्टन के बारे में। मैने बताया रोटीफेरा के नौ कौपीपोडा के 4, क्लैडोफोरा के 3 अर्थात सोलह सदस्य और आपको पता है वाटर स्नेक मैक्रो पिस्थोडौन प्रम्बिकलर भी यहां खूब है।

छात्रा बोली, ''जब इतना कुछ बता ही दिया है आपने, तो अब जितना कुछ और जानते हो यहां के बारे में बता दीजिए।'' मैने रटे–रटाये अन्दाज में कहा– ''समुद्र सतह से ऊँचाई 5365 फीट 290 22'N Lat और 790 26'E Long पर स्थित। तालाब की लम्बाई 495 मी. चौड़ाई 226 मी. और अधिकतम गहराई 12 मी. है जबकि औसत गहराई 5 मी. है। शोर लाइन 874 मी. है। Lake catchment और surface का अनुपात 97:1 है। पारदर्शिता 1.2 से 3.5 मी. है। क्षारकता–50 –263 मि. ग्रा./ली. है। एक और खास बात बताऊ यह तालाब ओलोगोट्रोफिक है अर्थात् यहाँ डीकम्पोजिसन होता है। ऐसी तालाब को (प्राकृतिक) Natural संम कहा जाता है।

एक छात्रा ने विस्मय से पूछा 'आप यह सब कैसे जानते है?'' जब हम लोग विद्यार्थी थे तो आपकी तरह दो स्टूडैण्टस वन्दना नेगी और सुधा जायसवाल यहां आती थी। उन्होने शोध किया था और 1983 में उन्होने शोध ग्रन्थ प्रकाशित किया, उन्ही से यह सब जाना।

''यहां का नाम खुर्पाताल क्यों पड़ा?''–. ... चालक बीच में ही बोल पड़ा, ''खुर्पे के आकार का हाने के कारण तालाब का नाम खुर्पाताल है। कुछ लोग कहते हैं कि खुरपका रोग होने पर पशुओं को यहां नहलाया जाता था, तब से खुर्पाताल कहलाया जाने लगा।'' जब लड़कियों ने अविश्वास से मेरा मुँह ताका तो मैंने भी ना में सिर हिलाया। तीनों लड़कियों में सबसे चुलबुली लड़की बोली–''क्या यहां ब्रिटिशर्स के उच्चारण की बात लागू नहीं होती? ''मैंने जवाब दिया, ''बिल्कुल होती है, खुर्पाताल ग्राम, पट्टी कुर्पाखा के अन्तर्गत आता है तो निश्चित रूप से इस गांव का नाम भी कुर्पाखा होगा, और ताल का नाम होगा कुर्पाखा ताल.........। ''चुलबुली लड़की बीच में बोली, और अंग्रेज बोलते होंगे– खुर्पाटाल, सभी हँस पड़े। ''चलते–चलते यहां के जन्तुओं के नाम भी लिखवा देंगे''– एक छात्रा ने आग्रह किया। हाँ, तालाब की बात की जाए तो मछलियां है टोरप्युटो टोर (महासीर), पुंटियस और नई प्रजातियां भी डाली गई हैं।

वाइल्ड लाइफ के बारे में लिखे– घुरल (नीमोरहीडस घोराल) कांकड (मुंटियास मुंटजैक) बंदर (मकाका मुलाटा), लंगूर (प्रेसबाइटिस इन्टीलस), बाघ (पैन्थरा पारडस), नेवला (हरपिस्टिस), चितरौला (मारटेस फलेवीगुल)......... एक लम्बी सूची उन्होने नोट कर ली।,

यहां के मौसम पेड़–पौधों के अलावा यहां की कुछ विशिष्ट प्रजातियां है– प्रेमना बारबेटा (अगन्यो), हरंपीच की दवा, सुगन्ध फैलाने वाला वृक्ष (स्लिंग आरमेथस फ्रैगरैन्स), सकीना (इन्डीगोस्फोरा जिरार्डियाना) व क्वेराल (बोहीनिया बेरीगेटा) की पुष्प कलियों की सब्जी व रायता बनता है। घिंगारू (पाइरेकैन्था क्रेनूलाटा), किल्माडू (बरबेरिस), काफल (माइरिका एस्कूलेण्टस), हिसालू (रूबस इलिप्टिकस)......आदि–आदि।

''इस क्षेत्र में इतने तालाब?'' हाँ इसे छखाता परगना अर्थात षष्टषष्टि खाता अर्थात छियासठ तालाबों वाला क्षेत्र स्कन्द पुराण के मानस खण्ड में भी कहा गया है– पुराण में वर्णित है–''शेष गिरि के दक्षिण भाग में गर्गाचल पर्वत है वह लताओं, वृक्षों और विभिन्न धातुओं से संयुक्त है, उस पर्वत पर पदमा, गौरी, शचि, मेधा, सावित्री, जया, विजया आदि मातृकाएं विराजमान है। इस पर्वत पर छियासठ सरोवर विद्यमान है'' लेकिन धीरे–धीरे पर्यावरणीय संकट के चलते अब कुछ ही सरोवर शेष हैं। दूर वेधशाला, हनुमानगढ़, झण्डी धार (गवर्नर हाउस) की ओर दृष्टि डालते हुए, एक छात्रा की दृष्टि एक भट्टी पर गई। उत्सुकतावश उसने पूछा ''यह क्या है?'' 'पूर्व में यहाँ कुमाऊँ आयरन कम्पनी पत्थरो से लोहा निकालने का काम करती थी यह भट्टी (फरनेस) लोहा गलाने के काम आती थी।

छात्राएं उत्सुकतावश बोली– ''कुछ और इतिहास बताए''– प्रारम्भ में यहाँ ब्रिटिश इन्फेण्टरी की दो कम्पनियां थी। लेकिन तालाब का निकास कहीं न होने के कारण अस्वच्छता के भय

से इन कम्पनियों के बैरेक 1891 में हटा दिए गयें। पूर्व में शेरवुड कालेज वर्तमान के हाईकोर्ट भवन में था, आग लगने के कारण 1896 में कुछ समय के लिए शेरवुड कालेज खुर्पाताल भी स्थानान्तरित किया गया। लेकिन प्लेग फैलने के कारण पुनः यहां से हटा दिया गया। 1902 में इस स्थान फोरेस्ट डिपार्टमेंट को हस्तान्तरित किया गया तो देवदार और चेस्टनेट के वृक्ष भी रोपित किए गए।

छात्राएं अपनी डायरियां रखते हुए बोली अब तो बताइये आप कौन हैं? मैंने बताया कि मैं भी एक जीव विज्ञान का ही शिक्षक हूँ जब आप लोगों ने कहा कि आप बायो सांइसेज के स्टूडैण्ट हैं तो मै स्वयं को रोक नहीं पाया और आप लोगों के साथ चल पड़ा कि शायद कोई मदद कर सकूँ।

छात्राएँ मेरा ई–मेल ऐड्रेस लेकर, कार में बैठकर रवाना हुई और में संतुष्ट था कि मेरे गाँव खुर्पाताल की कुछ तो जानकारी मैं दे सका।

ईको, झारो, भाँचो.....यानी हमारा दिल फरेब बचपन

राजीव लोचन साह
नैनीताल

संस्कृति क्या होती है ? लोग अमूमन गीत, संगीत, नाटक, चित्रकला आदि विभिन्न कला विधाओं को ही संस्कृति मान लेते हैं। मगर मेरे लिये किसी समूह की संस्कृति वह है, जिसे उसका हर सदस्य जन्म से लेकर मृत्यु तक और सुबह नींद से जगने से लेकर रात सोने तक, यानी अपने हर सचेत क्षण में बरतता है। इस दृष्टि से कहा जाये तो हमारी संस्कृति के बहुत से हिस्से या तो समाप्तप्राय हैं या फिर कर्मकाण्ड बन गये हैं। कुमाउनी महिलायें अपने खूबसूरत घाघरा–पिछौड़ा से वाया साड़ी और सलवार–कमीज होते हुए जीन्स और टॉप तक पहुँच गयी हैं तो अब वह भी लिबास के रूप में हमारी संस्कृति का एक हिस्सा है। अपने बचपन में हम देखते थे कि सहालग के दिनों में घाघरे–पिछौड़े और आभूषणों से लदी हुई औरतों की कतारें एक जगह से दूसरी जगह जा रही है.... बेखौफ.. निःसंकोच। और अब ? शादियों में काम करे लहंगे देखने दुर्लभ हो गये हैं। सड़क चलते घाघरा–पिछौड़ा पहने औरतों को आप नहीं देख सकते। वर–वधू के नजदीक के रिश्ते की जो औरतें इन्हें पहनती भी हैं तो सिर्फ वहीं पर, कामकाज के वक्त। अपने घरों से बैग या अटैची में ले जाती है। सार्वजनिक रूप से इन्हें पहनना शर्म और संकोच का कारण बन गया है। इस सच्चाई को हमें स्वीकार करना पड़ेगा कि अब जीन्स–टॉप हमारी संस्कृति है।

हम कुमाउनियों को अपने ऐपणों (अल्पना) पर बड़ा गर्व है। मगर सच्चाई यह है कि अब वह भी एक कर्मकाण्ड रह गया है। हम कभी बनाते होंगे ऐपण। अब साल में एक बार दिवाली के मौके पर बनाने भी पड़ें तो हम उससे कन्नी काटने की कोशिश करते हैं। उसके लिये स्टिकरों का सुगम शॉर्टकट हमने ढूँढ लिया है। सारे ऐपण स्टिकरों के रूप में उपलब्ध हैं। दीवाली पर उन्हें सिर्फ फर्श पर चिपका देना होता है। कौन बिस्वार (चावल का घोल) और गेरू से हाथ गन्दे करते हुए हफ्ते–पन्द्रह दिन तक कमर तोड़े! बच्चों ने तो होमवर्क करना होता है। उन्हें भी इस फालतू के ढकोसले में क्यों लगाना ? लेकिन इसके बाद भी हम अपने ऐपणों का जयघोष करते हैं। उन पर शोध करते हैं। बाहर से आये विदेशियों को दिखाते हैं कि देखो, हमारे पास लोककला की कितनी बड़ी विरासत है।

मैं एक बार बैंगालुरु में था। बढ़ते हुए शहर आसपास के गाँवों को निगल ही लेते हैं। यहाँ भी अरेकेरे का बड़ा हिस्सा शहर के पेट में जाकर 'सार्वभौम नगर' हो गया था। मैं सुबह की टहल पर निकला। आसपास के जितने घर थे.... फ्लैट हों या फिर छोटे–मोटे, कच्चे या पक्के मकान..... सबके आगे अल्पना लिखी जा चुकी थी या लिखी जा रही थी। बुजुर्ग औरतें, मध्य वय की गृहणियाँ या अलसायी–आँखें मलती हुई नन्हीं बालिकायें, अपने दरवाजे के आगे बरामदे या सड़क पर कोरे रंगों से इस चित्रकारी में व्यस्त थीं।

आश्चर्य! मैंने कभी भी कन्नड़ भाषियों की अल्पना के बारे में नहीं सुना था। अलबत्ता तमिलों को पहले देख चुका था अल्पना बनाते। यह मेरा अज्ञान हो सकता है। लेकिन अच्छा लगा कि वे लोग अल्पना को अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी का हिस्सा बनाये हुए हैं। भले ही अपनी संस्कृति को लेकर कन्नडिगा हाँकते नहीं। संस्कृति उनके लिये सचमुच बरतने की चीज है, दिखावे की नहीं।

संस्कृति का इस तरह बदलना, खत्म होना तो नहीं कहा जा सकता, क्योंकि जीवन है तो संस्कृति भी होगी ही, कष्ट तो देता ही है। मगर क्या करें? अलबत्ता खान–पान हमारा बहुत ज्यादा बदला नहीं है, कम से कम हम जैसे भाग्यशालियों की, जो आजीविका के लिये परदेश में निवास करने का विवश नहीं हुए हैं। भट के डुबके, ठठवाणी, कापा, चुणकाणी, ककड़ी का रायता, सिंगल जैसे पकवान अभी भी न सिर्फ हमारी जुबान पर चढ़े हैं, बल्कि हमारे नाती–पोते भी इनसे मुँह नहीं मोड़ते। मनुष्य की स्वादेन्द्रिय शायद बेईमानी करना नहीं जानती।

कोई अगर मुझ से पूछे कि आप किस चीज को सबसे ज्यादा मिस करते हैं, तो मैं अपने बचपन के खेलों का नाम लूँगा। मुझे बहुत अजीब सा लगता है कि जिस तरह

हमने अपना बचपन मिट्टी के इतने करीब बिताया, हमारे आज के बच्चे उससे वंचित हो गये हैं।

चलिये तो आज संस्कृति के बहाने तब के खेलों की संस्कृति पर ही दो–चार बातें सही। अपने बचपन को याद करना किसे अच्छा नहीं लगता ?

मुंशी प्रेमचन्द की एक प्रसिद्ध कहानी है, 'गुल्ली डंडा।' लेकिन प्रेमचन्द का गुल्ली–डंडा हमारे अनुभव और जानकारी से बहुत दूर पड़ता है। हमें लगता है कि स्थान–स्थान पर गुल्ली–डंडा के अलग–अलग संस्करण चलते होंगे। हम जो गुल्ली–डंडा खेलते थे, उसमें दो टीमें होती थीं। कभी–कभी ऐसा भी होता कि एक टीम में एक ही खिलाड़ी होता और गुल्ली डंडा टेनिस या टेबल टेनिस जैसा एकल खेल हो जाता। बहरहाल, एक टीम का खिलाड़ी जमीन पर बने एक छोटे से गड्ढे पर लगभग छः इंच की दोनों ओर नोंकदार लकड़ी का टुकड़ा रखता। लकड़ी का यह टुकड़ा ही गुल्ली कहलाता। खिलाड़ी द्वारा लकड़ी के एक डेढ़–दो फीट लम्बे 'डंडे' के सहारे से गड्ढे (तकनीकी नाम 'घुच्ची') पर रखी गुल्ली को उछाल कर यथासम्भव दूर फेंकने की कोशिश होती और दूसरे दल के खिलाड़ी/खिलाड़ियों का प्रयास होता कि गुल्ली को हवा में ही लपक कर खेलने वाले खिलाड़ी को आउट कर दें। यदि यह सम्भव न हुआ तो फिर जिस स्थान पर गुल्ली जमीन पर गिरी हो, वहाँ से उसे घुच्ची पर लम्बवत पड़े डंडे पर मारना होता था। यदि गुल्ली डंडे से टकरा गई तो खिलाड़ी आउट, अन्यथा फिर टोल लेकर डंडे से नाप की जाती. .... ईको, दूको, तीको, झारो, भाँचो, लामा, सीटो....। नाल बनते। पदाई होती। एक बेहद दिलचस्प खेल आगे बढ़ता रहता।

टोल क्या होता था, नाल क्या होते थे, पदाई कैसे की जाती थी, इस विस्तार में जाने की न यहाँ सुविधा है और न ही वह हमारा अभीष्ट है। अपनी याददाश्त शुरू से कमजोर है और इन दिनों तो दिक्कत बढ़ जैसी गई है। यह खतरा है कि हम सूचनायें देने की कोशिश करें और वे सूचनायें ही गलत निकल आयें। क्योंकि जैसा शुरू में कहा था गुल्ली–डंडा का कोई सार्वभौमिक संस्करण ही नहीं बन सका। गुल्ली–डंडा के खेल को बढ़ाने–सँवारने के लिये मेरिलीबोन क्रिकेट क्लब (एम.सी. सी.) की तर्ज पर किसी 'अयारपाटा गुल्ली–डंडा क्लब' की स्थापना ही नहीं हुई! नतीजा यह है कि आज के बच्चे गुल्ली–डंडा का नाम भी नहीं जानते। सुदूर देहात में भी चले जायें तो खाली खेतों पर लकड़ी के एक पटरे को बैट बना कर चिथड़ों से बनी बॉल से क्रिकेट खेलते बच्चे दिखाई देते हैं। जहाँ तक हमारा सवाल है, हम हॉकी–क्रिकेट जैसे खेलों की ओर काफी देर से जा सके। बल्कि सच तो यह है कि क्रिकेट और गुल्ली–डंडा साथ–साथ ही चलते रहे।

मगर इन खेलों ने हमारे बचपन को कितना दिलकश, कितना खुशनुमा बनाया था ! आज के बच्चों के पास चिपके रहने के लिये टीवी है, केबल के माध्यम से आने वाले रंगबिरंगे प्रोग्राम हैं। हमारे पास क्या था ? स्कूल से आते। दो रोटियाँ खाकर, घुटनों और कोहनियों पर टल्ले लगे कपड़े पहन कर दौड़ जाते खेलने के लिये। मैदान कितने कम थे? नैनीताल में हम मल्लीताल वालों से खेलों में हमेशा इसीलिये पिछड़े रहे, क्योंकि उनके पास एक अदद फ्लैट्स (बुजुर्गों से हम उसे 'किरकिट' नाम से जानते थे) था और हमें अपने खेल सम्बन्धी सारे व्यापार मोटर सड़कों पर निपटाने पड़ते थे। वैसे सड़कों पर भी आराम था। कारें होती नहीं थीं, आधे–पौन घण्टे में रोडवेज या केमू की कोई बस गुजरती थी और हमारे खेल में ज्यादा व्यवधान नहीं पड़ता था।

एक खेल होता था 'डिब्बू'। सिगरेट के खाली पैकेटों की ढेरी चॉक या खड़िया से बने एक चौकोर के भीतर रख दी जाती और फिर एक निश्चित दूरी से एक चपटा पत्थर फेंक कर उस ढेरी के डिब्बे चौकोर से बाहर निकालने की होड़ होती थी। जो ज्यादा कीमत के खाली पैकेट निकाल पाता, वह विजयी होता। ज्यादा कीमत का मतलब कि विभिन्न देशों की करेंसियों की मानिन्द हर खाली पैकेट, हमारी भाषा में डिब्बू, की कीमत अलग होती थी। पाशिंग शो की अलग, कैवेंडर्स की अलग, गोल्ड फ्लेक की अलग। करेंसियों की ही तरह उन्हें एक्सचेंज करने की भी सुविध होती थी, यानी आप पाशिंग शो की एक डिब्बी के बदले गोल्ड फ्लैक के अमुक संख्या में डिब्बियाँ ले सकते थे। जैसे आज हम अपनी जेब में पड़े नोटों से गद्गद होते हैं, तब सिगरेट की खाली डिब्बियों की संख्या से आसमान में तैरा करते थे। 'डिब्बू' जैसा खेल ही कंचों या 'अंठों' का भी

होता था। डिब्बू की ही तरह इसमें भी यह सुविधा थी कि यह बहुत थोड़ी जगह में खेला जा सकता था। एक बहुत छोटा सा छेद यानी कि 'घुच्ची' बनाई जाती और उसके इर्द–गिर्द यह खेल खेला जाता। इसके कई सारे संस्करण प्रचलित थे। स्कूल में खाली पीरियड या हाफ टाईम के दौरान भी इसे खेला जा सकता था और प्रतिभाशाली खिलाड़ी अपनी जेब में रंग–बिरंगे कंचे भर कर इतराये घूमते थे।

'आईस–पाईस' और 'सेवन टाइम्स' अपेक्षाकृत अभिजात किस्म के खेल थे। अभिजात इस अर्थ में कि नाम से तो अंग्रेजी नस्ल के लगते ही थे, भले ही खिलाड़ी टल्ले वाले कपड़े ही क्यों न पहने हों! आईस–पाईस का मूल नाम 'आई स्पाई' था और हिन्दुस्तान में आते–आते वह आईस पाईस हो गया था। इसका एक देशी नाम 'मग्गा चोर' भी था। एक टिन के खाली डिब्बे को लात मार कर छिपने का खेल होता था। दूसरे दल का जो खिलाड़ी होता, वह डिब्बे को वापस लाकर यथास्थान रखता और छिपने वालों को खोजता फिरता था। सावधानी यह बरतनी होती कि कहीं आप डिब्बे से बहुत दूर न चले जायें। क्योंकि आप ढूँढ–खोज में निकले और दुश्मनों ने चुपचाप से आकर फिर से डिब्बे में लात जमा दी तो जितने खिलाड़ियों को आप अब तक खोज सके हैं, वह भी चौपट हो जाता। आईस–पाईस में नैनीताल की कैंटोनमेंट के नालों में छिपते हुए हमने बहुत से कपड़े खराब किये थे बचपन में। आईस–पाईस जैसा ही खेल सेवन टाईम्स था, जिसमें सात छोटे, चपटे गोलाकार पत्थरों को एक के ऊपर एक, साधते हुए रखा जाता था और हमलावर टीम द्वारा रबर की गेंद से उसे तोड़ा जाता। बचाव वाली टीम गेंद से तोड़ने वाली टीम के खिलाड़ियों को रबर की गेंद से मारती और यदि गेंद शरीर को छू गई तो वह खिलाड़ी आऊट! इस टीम के बचे खिलाड़ियों की कोशिश होती कि गेंद शरीर से छुए, इससे पहले ही सातों चपटे पत्थरों को एक के ऊपर पूर्ववत् रख कर बाजी जीत ली जाये।

कई बार आप अकेले होते और एक लम्बी उबाऊ शाम आपके सामने होती। तब वक्त काटने के लिये कुछ और खेल भी थे। मसलन साइकिल का एक बेकार टायर होता, जिसे आप एक छोटे से डंडे की सहायता से ट्रैफिक शून्य सड़कों पर दौड़ा सकते थे। ऊपर से आसान दिखने वाला यह खेल भी एक खास किस्म की विशेषज्ञता की माँग करता था और हम जैसे अनाड़ी लौंडे 'टायर' के विशेषज्ञों को चमत्कृत होकर बहुत सम्मान के साथ देखते थे। नैनीताल की उन दिनों की कड़ाके की ठंड को देखते हुए किसी युवा वैज्ञानिक ने एक और खेल ईजाद किया था। टिन का एक डिब्बा लिया जाता। उसके ऊपरी हिस्से पर दो विपरीत सिरों पर छेद कर पकड़ने के लिये मोटा तार बाँधा जाता। डिब्बे के भीतर हवा ढेर सारी पहुँचे, इसके लिये डिब्बे के तल को छोड़कर बाकी हिस्से में कई छोटे–छोटे छिद्र किये जाते। फिर कुछ लकड़ियाँ जला कर उनके कोयले इस डिब्बे में रखे जाते। आँच को तेज रखने के लिये डिब्बे को तार से पकड़ कर गोलाई में तेज–तेज घुमाया जाता। और फिर आप कहीं भी आग सेंकते व गप्पें मारते बैठे रह सकते थे। यह तो बहुत बाद में जाना कि कश्मीर में ठंड को दूर रखने के लिये लगभग इसी तरह कांगड़ी का इस्तेमाल किया जाता है। मौसम खराब हो और आप खुले में न जा सकते हों तो छोटे–छोटे कंकरों से 'बाघ–बकरी' खेल सकते थे। लूडो और साँप–सीढ़ी की उपलब्धता के बावजूद बाघ–बकरी का आकर्षण कतई कम नहीं था।

लड़कियाँ जो थीं, वे फर्श या किसी सख्त समतल पर खड़िया से एक बड़ा सा आयत बना, उसके सात–आठ हिस्से कर पत्थर की एक गोट के सहारे कूदतीं–फाँदतीं 'इज्जो–दुज्जो' खेला करती थीं। हम चूँकि लड़कियों की मंडली से जल्दी ही बहिष्कृत कर दिये गये, इसलिये बेहतर हो कि वे ही इसके बारे में बतायें जो तब लड़कियाँ थीं। हाँ, लड़कियाँ तब रस्सीकूद भी खूब किया करती थीं। अब तो स्वास्थ्य के लिये सजग नौजवानों में यह रस्सीकूद 'स्टेप्स' बन कर आ गया है।

पर्वों और त्यौहारों को लेकर मनोरंजन के अलग–अलग तरीके होते थे। मसलन होली में किसी दूसरे मोहल्ले की चीर चुराने में बड़ी शान समझी जाती थी और घास–फूस की झोपड़ी बना कर उसके भीतर खुरदरी, बेसुरी आवाज में खड़ी होलियाँ गाने की कोशिश की जाती। रामलीला का बहुत इन्तजार रहता। चूँकि इतनी प्रतिभा नहीं थी, या यों कहिये कि आयोजकों में कोई ऐसा गॉडफादर नहीं था, जो बन्दर या राक्षस का ही पार्ट दिलवा दे, इसलिये दर्शक बने रहने की मजबूरी होती थी। लेकिन इस दर्शक बनने के लिये भी तैयारी

कई दिन पहले करनी पड़ती थी। भुने हुए चने लाये जाते। उन्हें चीनी और टाँटरी के साथ पीस कर एक चूरन सा बनाया जाता। माना जाता कि इस चूरन से नींद रोकी जा सकती है और आप इत्मीनान से रात के डेढ़–दो बजे तक रामलीला देख सकते हैं।

देशज खेलों में कबड्डी भी थी और खो–खो भी। भले ही इन्हें खेलने में मजा आ जाता हो, लेकिन ये खेल अपने नहीं लगते थे। कबड्डी को तो अब सरकारी संरक्षण मिल गया है, एशियाई खेलों में इसकी भर्ती हो गई है और आईपीएल की तर्ज पर बाजार भी इसे भुनाने की शुरूआत कर चुका है। जब तक ज्यादा मुल्क इसमें दिलचस्पी नहीं लेते तब तक भारत के लिये पड़ने वाले पदकों के सूखे में कबड्डी से राहत मिलती रहेगी।

ग्लोबलाइजेशन का जमाना है। बच्चे चाऊमीन और पिज्जा खाते हैं, कोकाकोला पीते हैं, पेंटालून के कपड़े और एडिडास के जूते पहनते हैं तथा स्मार्टफोन पर गेम्स से अपना मनोरंजन करते हैं। हो सकता है उनका बचपन हमारे बचपन से अच्छा हो। हम तो अपने बचपन को बेहतर साबित करने के लिये आखिरी साँस तक लड़ते रहेंगे। फिलहाल तो हम अपनी पीढ़ी के लोगों और अपने बुजुर्गों से निवेदन करना चाहते हैं कि अपने जमाने के खेलों का अभिलेखीकरण तो कर ही डालें। सफेद बालों और टूटे दाँतों वाले लोग एक बार मैदान में उतर कर गुल्ली–डंडा खेलते हुए वीडियोग्रापफी करवा लें। फिर शोधकार्य होता रहेगा। जब हर ऐरे–गैरे विषय पर शोध कार्य हो रहा हो, शोधकार्य निपटाने की होड़ में पहले हुए शोध प्रबंधों से नकल की जा रही हो, तो गये जमाने के इन बेचारे देशी खेलों ने क्या बिगाड़ा है? अच्छे या बुरे जैसे भी आज हम हैं, इन्होंने ही तो हमें वह बनाया। सड़कों पर टायर दौड़ाते, टिन के डिब्बे में जले कोयले झुलाते, आईस–पाईस में गधेरों में कपड़े बर्बाद करते और गुल्ली–डंडा में पदते हुए ही तो हम जिन्दगी के उस मुकाम पर पहुँचे, जिसे जवानी कहा जाता है! तब क्यों न हमारे बच्चे इन खेलों के बारे में जानें, अजायबघर के भीतर ही सही। संस्कृति अब अजायबघरों में ही तो रहनी है!

मुश्किलों से डटकर भागना कायरता है,

उनका डटकर सामना करें

–स्वामी विवेकानन्द

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
भीमताल 263136, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत
E-mail: dcfrin@gmail.com, director.dcfr@icar.gov.in,
Website: www.dcfr.res.in